वचनिका

राठौड रतनसिंघजी री महेसदासौत री

खिड़िया जगा री कही

रतनसिंह राठोड

वचनिका

राठौड़ रतनसिंघजी री महेसदासोत री
खिड़िया जगा री कही

सम्पादक
काशीराम शर्मा, एम्० ए०, एल्-एल्० बी०
रघुवीरसिंह, डी० लिट्०

प्रकाशक
राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
दिल्ली इलाहाबाद पटना बम्बई

१९६०
मूल्य : दस रुपये

मुद्रक
श्री गोपीनाथ सेठ, नवीन प्रेस
दिल्ली

प्रस्तावना

प्रारम्भ से ही 'वचनिका रतनसिंघजी री महेसदासोत री खिडिया जगा री कही' बहुत लोकप्रिय रही है। उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ तब ही राजस्थान और मालवा के प्राय सभी साहित्य-प्रेमी अथवा इतिहास-जिज्ञासु घरानो मे पहुँच गई थी। प्रत्येक पठित तथा प्रतिष्ठित चारण के निजी पुस्तक-सग्रह मे इस वचनिका की प्रति अवश्य ही पाई जाती थी। राजस्थानी का अध्ययन करने वाले प्रारम्भिक विद्यार्थियो के लिए तो यह वचनिका एक सुलभ उपयोगी पाठ्य-पुस्तक का भी तब काम देती थी। परन्तु ईसा की उन्नीसवी सदी मे चारणो का प्रभाव और राजस्थानी भाषा एव साहित्य का महत्त्व निरन्तर घटने लगा, जिससे इस सारी लोकप्रियता के होते हुए भी तब इसे छपवाने की किसी ने भी नही सोची।

राजस्थानी भाषा के उद्भट विद्वान् और राजस्थानी साहित्य के अनन्य प्रेमी इटली निवासी डॉक्टर एल० पी० तेस्सितोरी ने अप्रैल, १९१४ ई० मे भारत पहुँच कर बगाल की एशियाटिक सोसाइटी के सरक्षण मे राजपूताने के चारणो के तथा अन्य ऐतिहासिक साहित्य की खोज और तत्सम्बन्धी जानकारी एकत्र करने का काम जब प्रारम्भ किया तब उसे वचनिका की अनेको प्रतियाँ सुलभता के साथ प्राप्त हो गई। अत उसने इस चारण-काव्य के सम्पादन का कार्य सबसे पहले हाथ मे लिया। राजस्थान और मालवा के विभिन्न स्थानो या सग्रहो से एकत्र की गई वचनिका की अनेकानेक प्रतियो मे से तेस्सितोरी ने तेरह प्रतियाँ चुन ली और उन्ही के आधार पर उसने वचनिका के मूल-पाठ का सम्पादन किया। तेस्सितोरी द्वारा सम्पादित वचनिका के इस सस्करण का पहला भाग बगाल की एशियाटिक सोसाइटी ने सन् १९१७ ई० मे प्रकाशित किया था। सशोधित मूल-पाठ के साथ ही उल्लेखनीय पाठान्तर एव क्षेपक अश भी उसमे दिये गए है। इस प्रथम भाग मे तेस्सितोरी द्वारा अग्रेजी मे लिखित सक्षिप्त टिप्पणियाँ, उसका शब्दार्थ-कोष तथा वचनिका की भाषा विषयक एव साहित्यिक भूमिका भी प्रकाशित हुई। तेस्सितोरी चाहता था कि वचनिका के दूसरे भाग मे इस समूचे काव्य के अग्रेजी अनुवाद के साथ ही वचनिका के ऐतिहासिक महत्त्व सम्बन्धी विवेचन भी प्रकाशित करे। परन्तु दुर्भाग्यवश ऐसा कुछ कर सकने से पहले ही सन् १९१८ ई० मे बीकानेर मे उसकी मृत्यु हो गई, जिससे वचनिका के उस सस्करण का यह प्रस्तावित दूसरा भाग बाद मे तैयार नही हो पाया। अतएव सन् १९१७ ई० मे वचनिका के मूल ग्रन्थ के छप कर प्रकाशित हो जाने के बाद भी इसी दूसरे भाग के अभाव मे डिंगल भाषा की दुरूहता के कारण ही इतिहास के उत्कट सशोधक विद्वान् अब तक इस महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थ का आवश्यक अध्ययन तथा उपयुक्त उपयोग नही कर पाये है।

वचनिका के साहित्यिक तथा ऐतिहासिक महत्त्व एव उसके अध्ययन की आवश्यकता का निर्देशन आगे भूमिका मे सविस्तार किया गया है। वचनिका मे प्रयुक्त राजस्थानी (डिंगल) भाषा यो ही बहुत दुरूह है और इधर कई युगो से राजस्थानी का अध्ययन एव विवेचन

इतना अधिक कम हो गया है कि आज वचनिका का ठीक-ठीक अर्थ लगा सकने वाले विद्वानो की सख्या बहुत अधिक नही रह गई है एव वह दिनो-दिन बराबर घटती ही जा रही है। अत तेस्सितोरी की लिखी हुई टिप्पणियो और उसके तैयार किये हुए शब्दार्थ-कोष से ही काम चल सकना कदापि सम्भव नही रह गया है, अतएव वचनिका का एक ऐसा नया सस्करण प्रकाशित करना अत्यावश्यक प्रतीत हुआ जिसमे समूची वचनिका का पूरा भावार्थ भी दे दिया जावे। ऐसे सर्वांगपूर्ण नये सस्करण को तैयार करने के लिए राजस्थानी भाषा और साहित्य के एक उद्भट विद्वान् का पूर्ण सहयोग अत्यावश्यक था, अत यह कार्य-भार सार्थी सपादक श्री काशीराम शर्मा को सौंपा गया।

वचनिका के इस सस्करण को तैयार करने मे श्री काशीराम शर्मा को अथक परिश्रम करना पडा है। तेस्सितोरी द्वारा सम्पादित सस्करण का मूल-पाठ प्रस्तुत था ही, परन्तु इधर बीकानेर के सुविख्यात साहित्य-सशोधक एव सग्रहकर्ता श्री अगरचन्द नाहटा के सग्रह मे तथा श्री मोतीचन्द खजाची के सग्रह मे कुछ पुरानी प्रतियाँ प्राप्य थी और एक पुरानी प्रति बनेडा-निवासी श्री रविशकर देराश्री से भी मिल गई, जिससे इस अवसर पर उनका भी उपयोग कर लेना उचित प्रतीत हुआ। डिंगल काव्य यो भी बहुत दुरूह होता है। और जब उसमे अप्रसिद्ध वशावलियो तथा दुर्बोध ऐतिहासिक प्रसगो की भरमार रहती है तब तो उसका ठीक-ठीक अर्थ करना अत्यधिक दुस्साध्य हो जाता है। वचनिका मे ऐसे स्थल बहुत अधिक है तथापि श्री काशीराम शर्मा उनका बहुत-कुछ सही भावार्थ प्रस्तुत करने मे पूर्णतया सफल हुए है।

वचनिका मे स्थान-स्थान पर आये हुए प्रसिद्ध या अप्रसिद्ध व्यक्तियो के नामो तथा ऐतिहासिक प्रसगो और उल्लेखो के बारे मे उपयोगी जानकारी से पूर्ण आवश्यक टिप्पणियाँ भी दी जा रही है, जिनसे इस काव्य-ग्रन्थ को ठीक तरह से समझने और उसमे वर्णित ऐतिहासिक घटनाओ की पूरी पूरी जानकारी प्राप्त करने मे उचित सहायता प्राप्त हो सके। अब तक प्राप्त सारे ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थो के आधार पर धरमत के युद्ध का एक सक्षिप्त प्रामाणिक विवरण भूमिका मे दिया गया है और उक्त युद्ध मे रतनसिंह ने जो भाग लिया था उसका भी उसमे यथास्थान उल्लेख किया गया है। वचनिका मे वर्णित इस युद्ध विषयक जो भी नई बाते अब तक इतिहासकारो द्वारा मान्य हो चुकी हैं उन सबको उक्त विवरण मे यथास्थान सम्मिलित कर दिया गया है। पुन वचनिका का सम्पादन करते समय धरमत के युद्ध के ठीक दिन और तारीख को प्रामाणिक रूपेण निर्धारित करना अत्यावश्यक था। यह बडे सतोष की बात है कि तदर्थ की गई इस सारी गहरी जाँच-पडताल के बाद भी वचनिका मे दिया गया दिन और तिथि ही सही प्रमाणित हुए तथा इसी खोज के फलस्वरूप ईसवी सन् के अनुसार युद्ध के ठीक दिन और तारीख मे अब तक एक दिन की जो भूल चली आ रही थी उसे सुधारा जा सका है। खिडिया जगा कृत इस वचनिका के ठीक-ठीक ऐतिहासिक महत्त्व की विवेचना भूमिका मे दी जानी सर्वथा अनिवार्य ही थी। अधिक गहराई के साथ वचनिका का अध्ययन करने पर किन-किन और विषयो सम्बन्धी उपयोगी सामग्री इस काव्य-ग्रन्थ से प्राप्त हो सकती है इसका भी यत्किंचित् निर्देशन उक्त विवेचना के अन्त मे कर दिया गया है।

रतनसिंह राठौड़ विषयक कुछ स्फुट गीत भी यत्र-तत्र राजस्थानी सग्रह-ग्रन्थो मे मिलते है। बीकानेर की सुसमृद्ध अनूप सस्कृत लायब्रेरी मे प्राप्य "फुटकर गीत" नामक दो हस्तलिखित राजस्थानी काव्य-सग्रहो मे वचनिका के रचयिता खडिया जगा एव कविया श्याम कृत रतनसिंह राठौड विषयक कुछ गीत सगृहीत हैं। इसी प्रकार मैनाली (बीकानेर) के श्री मुकुन्दसिंह के हस्तलिखित गीत-सग्रह मे लखमीदान गाडण कृत एक गीत मिला है। पाठको के मनोरजनार्थ उन्हे क्रमश परिशिष्ट (१), (२) एव (३) मे दिया जा रहा है।

वचनिका के इस नये सस्करण को तैयार करने मे श्री अगरचन्द नाहटा, श्री रविशकर देराश्री, बीकानेर के महाराजा करणीसिंह, खजाची-सग्रह के स्वामी श्री मोतीचन्द खजाची एव श्री मुकुन्दसिंह की स्वीकृति तथा सहयोग से नई सामग्री का उपयोग किया जा सका है, अतएव उन सबके प्रति समुचित कृतज्ञता-ज्ञापन अत्यावश्यक हो जाता है। इस सस्करण को इतना सर्वांगपूर्ण बनाने का पूरा-पूरा श्रेय मेरे साथी सम्पादक श्री काशीराम शर्मा को ही है। उनके विषय मे यहाँ कुछ अधिक लिखना समीचीन प्रतीत नही होता है तथापि तदर्थ उनका हार्दिक अभिनन्दन करना सर्वथा अनिवार्य ही है। अन्त मे प्रकाशक भी धन्यवाद के पात्र हैं कि वे इस ग्रन्थ को इस सुन्दर रग-रूप मे प्रकाशित कर रहे है। राजस्थानी भाषा की विशेष ध्वनियो का स्पष्ट निर्देशन करने के लिए अत्यावश्यक नई मात्राओ और चिह्नो को बनवा कर वचनिका के इस सस्करण को प्रकाशको ने वस्तुत सर्वांगपूर्ण बना दिया है।

जीवन के अन्तिम युद्ध मे पूर्णतया पराजित तथा तीर और तलवार से बुरी तरह आहत रतनसिंह के सौभाग्य ने तब भी उसका साथ नही छोडा। उसको यो सहज-प्राप्त युद्ध मे गौरवपूर्ण मृत्यु और वीरोचित चिता पर किस साहसी वीर को तब ईर्ष्या नही हुई होगी? अपनी नश्वर भौतिक देह को दाँव मे हार कर भी रतनसिंह ने बदले मे पाई अजर-अमर शाश्वत यश काय, जिसे सजाने-सँवारने एव शाश्वत बनाने के लिए खडिया जगा ने तब अपनी सारी प्रतिभा लगा दी थी। धरमत के उस भीषण युद्ध को हुए आज पूरे तीन सौ दो वर्ष बीत गये हैं। परन्तु वीर-गाथा एव सत्साहित्य कभी पुरातन या असुन्दर नही होते। अत आज खडिया जगा कृत वचनिका के इस नये सस्करण को काव्य-प्रेमियो और इतिहास-जिज्ञासुओ के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए विशेष हर्ष एवं पूर्ण सतोष होता है। अपने इस नये रग-रूप मे यदि वचनिका पुन पहले के ही समान लोकप्रिय हो जावेगी तो उसके सम्पादको का यह सारा यत्न सर्वथा सफल हो जावेगा।

"रघुवीर निवास"
सीतामऊ, (मालवा)
वैशाख शु० ६, सं० २०१७ वि०

रघुवीरसिंह

विषय सूची

प्रस्तावना डॉ० रघुवीरसिंह ... ५-७

भूमिका ... १३-९७

१ डिंगल साहित्य और भाषा : काशीराम शर्मा १३

२ राजस्थान का वचनिका-साहित्य : काशीराम शर्मा २८

३. खिड़िया जगा का जीवन-चरित्र : काशीराम शर्मा ३१

४ 'वचनिका०' की साहित्यिक विवेचना : काशीराम शर्मा ३३

५ 'वचनिका०' की भाषा का शास्त्रीय विवेचन : काशीराम शर्मा ६१

६. धरमत के युद्ध की ठीक तारीख : डॉ० रघुबीरसिंह ७८

७. धरमत का युद्ध और रतनसिंह राठौड़ डॉ० रघुवीरसिंह ८२

८. 'वचनिका०' का ऐतिहासिक महत्त्व डॉ० रघुवीरसिंह ८७

९ सम्पादन-सम्बन्धी काशीराम शर्मा ९३

'वचनिका राठौड़ रतनसिंघजी री महेसदासौत री'
खिड़िया जगा री कही : काशीराम शर्मा कृत
टीका, कठिन शब्दार्थ, आदि सहित ... २-१०७

परिशिष्ट (१) गीत रतन महेसदासौत रा
जगा खिड़िया रा कह्या ... १०८-११०

परिशिष्ट (२) गीत रतन महेसदासौत रौ
कवियै स्याम रौ कहियौ ... १११

परिशिष्ट (३) गीत रतन महेसदासौत रौ
लिखमीदास गाडण रौ कहियौ ... ११२

टिप्पणियाँ डॉ० रघुवीरसिंह ... ११५-१३३

संकेत-परिचय ... १३४

चित्र-सूची

		पृष्ठ के सामने
१	रतनसिंह राठोड	मुख-पृष्ठ
२	रतनसिंह की छत्री—धरमत के युद्ध-क्षेत्र मे	४०
३	रतनसिंह की सतियो का स्मारक— नीनोर (कोठडी) के तालाव के किनारे	८६

भूमिका

(१) डिंगल साहित्य और भाषा

राजस्थान की साहित्यिक भाषाएँ

आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओ का उद्गम आज से लगभग एक सहस्र वर्ष पूर्व हुआ होगा यह प्राय सर्व-मान्य सिद्धान्त है। जिस भू-खण्ड मे आज व्रज आदि पश्चिमी हिन्दी की वोलियाँ, मारवाडी, मेवाडी आदि राजस्थानी वोलियाँ और गुजराती की अनेक वोलियाँ वोली जाती है वह किसी समय शोरसैनी प्राकृत का क्षेत्र था। सास्कृतिक और राजनीतिक सम्पर्क के ह्रास और स्थान-गत दूरी के कारण इस भू-खण्ड की भाषा-गत विशेषताओ मे समय पा कर कुछ परिवर्तन और अन्तर हुए। प्राकृतो से अपभ्र श वनते-वनते शोरसैनी प्राकृत के भू-खण्ड मे स्पष्टत दो अपभ्र शें दृष्टिगोचर हुई जिन को सुविधा के लिए शोरसैनी अपभ्र श और गौर्जर अपभ्र श कहा जा सकता है। राजस्थान दोनो ही प्रकार की अपभ्र शो का क्षेत्र रहा। पश्चिमी राजस्थान मे गौर्जर अपभ्र श का प्रयोग था तो पूर्वी राजस्थान मे शौरसैनी अपभ्र श का। सोलहवीं शताब्दी तक आते-आते गौर्जर अपभ्र श की भी दो शाखाएँ हो चली थीं। एक मे वर्तमान गुजराती स्पष्ट रूप मे उदित हो चुकी थी और दूसरी मे पश्चिमी राजस्थानी। इसी प्रकार व्रज आदि पश्चिमी हिन्दी की वोलियो तथा पूर्वी राजस्थानी की वोलियो मे भी पर्याप्त भेद दृष्टि-गोचर होने लगे थे।

इसी प्रकार राजस्थान की साहित्यिक परम्परा मे भी भाषा के दो स्पष्ट रूप देखने को मिल सकते है—एक पश्चिमी राजस्थानी का जिसे तेस्सितोरी आदि ने डिंगल कहना उचित समझा था और दूसरा पूर्वी राजस्थानी का जिसे पिंगल कहा जाता है। अब तक विद्वानो की मान्यता यह रही है कि पिंगल का साहित्य वस्तुत व्रज-भाषा का साहित्य है और उस मे डिंगल के भी अनेक शब्दो का सम्मिश्रण है। परन्तु वस्तु-स्थिति यह प्रतीत होती है कि जिस को पिंगल कहा जाता है वह पूर्वी राजस्थान की साहित्यिक भाषा थी और जिस को डिंगल कहा जाता है वह पश्चिमी राजस्थान की। दोनो प्रकार के साहित्य के निर्माता प्रधानत चारण, भाट इत्यादि राज-कवि हुआ करते थे और उन के पठन-पाठन की एक निश्चित शैली हुआ करती थी। अतएव शब्दावली का समान होना स्वाभाविक है। दूसरी ओर पूर्वी राजस्थान की वोलियो का व्रजभाषा से सामीप्य होने के कारण उस से भी साम्य नैसर्गिक है। इसी लिए प्राय भ्रम-वश पिंगल को व्रजभाषा मान लिया जाता है। वैसे व्रजभाषा अपने शुद्ध साहित्यिक रूप मे भी राजस्थान मे उतना ही सम्मान्य स्थान प्राप्त करती रही है जितना डिंगल और पिंगल। राजस्थान का सस्कृतेतर साहित्य इस प्रकार तीन भागो मे विभक्त किया जा सकता है—डिंगल साहित्य, पिंगल साहित्य और व्रजभाषा साहित्य।

डिंगल और पिंगल वस्तुत बहुत पुराने शब्द नही है। इन का प्रयोग सर्व-प्रथम

वाँकीदास ने 'कुकवि-वत्तीसी' नामक ग्रन्थ मे किया था। इस का रचना-काल सवत् १८७१ वि० है। वह प्रयोग इस प्रकार है—

डींगळिया मिळियां करै, पीगळ तणो प्रकास।
ससक्रती ह्वै कपट सज, पींगळ पढियां पास॥

वाँकीदास के वाद वुधाजी ने डिंगल और पिंगल शब्दो का प्रयोग किया—

सव ग्रथं समेत गीता कूं पिछाणें।
डीगळ का तो क्या सस्कृत भी जांणें॥
और भी सांटुओं में चैन अरु पीथ।
डींगळ में खूव गजव जस का गीत॥
और भी आसियूं मै कवि वक।
डीगळ पीगळ सस्कृत फारसी मै निसक॥

डिंगल शब्द का वाँकीदास से पूर्व कोई प्रयोग देखने को नही मिला। इस लिए उस के अर्थों के विषय मे अनेक प्रकार की कल्पनाएँ करने की आवश्यकता नही है। डिंगल और पिंगल का अभिधान भाषा की दृष्टि से कोई प्राचीन नहीं है। वस्तुत मरु भाषा, मारु भाषा इत्यादिक नाम डिंगल के लिए प्रयुक्त होते रहते थे। परन्तु अव डिंगल और पिंगल नाम इतने प्रचलित हो गये है कि अव उन का ही प्रयोग सार्थक होगा। अतएव सुविधा के लिए पश्चिमी राजस्थानी अर्थात् मारवाडी के साहित्यिक रूप के लिए 'डिंगल' का और राजस्थान के पूर्वी भाग की भाषा के व्रजभाषा से मिलते-जुलते साहित्यिक रूपके लिए 'पिंगल' शब्द का प्रयोग उचित है। शुद्ध व्रज साहित्य के लिए तो 'व्रज' का प्रयोग सर्व-विदित है ही।

इस प्रकार राजस्थान के साहित्य मे हम तीन प्रकार की भाषाओ का प्रयोग देखते है। सौभाग्य-वश तीनो ही प्रकार के साहित्य को समान रूप से आदर भी प्राप्त होता रहा है। राज-सभाओ मे और सामान्य जन-समुदाय मे तीनो ही प्रकार के साहित्य को समान रूप से मान्यता प्राप्त थी और किसी एक वर्ग को दूसरे से हेय न समझा जाता था। यही नही तुलसी आदि के अवधी साहित्य को भी उन के ही समान भाषा-साहित्य के अन्तर्गत माना जाता था और व्रज, डिंगल तथा पिंगल की कोटि मे रखा जाता था। प्राचीन हस्त-लिखित ग्रन्थो की अनेकानेक प्रतियाँ देखने से यह स्पष्ट विदित होता है कि राजस्थान के साहित्य-प्रेमियो की दृष्टि मे साहित्य के केवल दो प्रकार थे—एक सस्कृत का साहित्य और दूसरा 'भाषा' का साहित्य। 'भाषा-साहित्य' के सकलन-ग्रन्थो मे डिंगल, पिंगल, व्रज और अवधी, सभी के साहित्य का एकत्र समावेश होता था और उन्हे केवल 'भाषा-साहित्य' सज्ञा ही दी जाती थी। आज के कुछ उत्साही साहित्य-कार और लेखक अनावश्यक आवेश मे आ कर हिन्दी से पृथक् राजस्थानी का महत्त्व-पूर्ण स्थान घोषित करने का व्यर्थ प्रयत्न करते है। गत पाँच-छह शताब्दियो मे राजस्थानी और व्रज आदि की वोलियो के साहित्य के भिन्न होने की कल्पना किसी ने न की थी। अपेक्षित यह है कि आज भी उस प्रकार की अनावश्यक कल्पना न की जाये और जिस प्रकार डिंगल, पिंगल, व्रज और अवधी आदि के साहित्य को एक ही वर्ग—'भाषा-साहित्य'—मे रखा जाता था उसी प्रकार आज भी उस को हिन्दी-साहित्य के वर्ग के अन्तर्गत ही रखा जाये।

डिंगल का साहित्य

डिंगल पश्चिमी राजस्थानी अथवा मारवाडी का साहित्यिक रूप है। उस मे और बोलचाल की मारवाडी मे उतना ही अन्तर है जितना किसी भाषा की बोली और उस के साहित्यिक रूप मे हुआ करता है। राजस्थान का साहित्य-कार वर्ग प्राय चारण, भाट इत्यादि कुछ जातियो का हुआ करता था जिन का व्यवसाय ही कविता-निर्माण करना था। ये कवि वश-परम्परागत व्यवसाय के रूप मे कवित्व की शिक्षा प्राप्त करते थे। इस लिए शताब्दियो से चली आती हुई कविता की शब्दावलि और शैली का यथावत् प्रयोग करना उन के लिए स्वाभाविक था। फलत समान्य व्यवहार से लुप्त हो चुके सहस्रो शब्द उन की कविता मे व्यवहृत होते रहे और उन की भाषा बोल-चाल की मारवाडी से भिन्न प्रतीत होती रही। वश-परम्परागत सम्पत्ति के रूप मे कवित्व को पाने वाले कवियो मे प्राचीन शब्दावलि के प्रति इस प्रकार का मोह होना स्वाभाविक ही है। इसी लिए सामान्यत मारवाडी और साहित्यिक डिंगल मे बहुत बडा अन्तर प्रतीत होता है। परन्तु वस्तुत डिंगल मारवाडी की साहित्यिक शैली मात्र है।

डिंगल का साहित्य बहुत समृद्ध है। उस मे गद्य और पद्य दोनो ही प्रकार के साहित्य का अनन्त भडार है। पद्य मे दूहा, झूलना, रूपक, रासो, विलास आदि रूपो मे पर्याप्त साहित्य विद्यमान है तो गद्य मे भी ख्यात, बात, विगत, हकीकत, वचनिका, वार्ता आदि अनेक रूपो मे अक्षय निधि भरी पडी है। अब तक इस गुप्त भडार का बहुत ही कम अश साहित्य के प्रेमियो के सम्मुख आ पाया है। उस को प्रकाश मे लाने की परमावश्यकता है, परन्तु खेद है कि उस ओर बहुत कम प्रयत्न किया जा रहा है।

डिंगल साहित्य मे कुछ अपनी परम्पराएँ ऐसी भी हैं जो शेष हिन्दी के साहित्य से कुछ अश मे भिन्न मानी जा सकती हैं। राजस्थान का कवि-समुदाय एक ओर सस्कृत के काव्य-शास्त्र और छन्द-शास्त्र की अनुपम रत्न-राशि का प्रयोग करता है तो दूसरी ओर उस ने अपने निजी छन्द-शास्त्र और रीति-शास्त्र का भी निर्माण किया है। सस्कृत-साहित्य के अलकारो को मानने के साथ-साथ पिंगल के कवि-वर्ग ने 'वयण-सगाई' नामक नवीन अलकार का भी आविष्कार किया और उस के प्रयोग को सत्काव्य की एक बहुत बडी कसौटी माना है। इसी प्रकार सस्कृत के काव्य-दोषो को मानते हुए कुछ नवीन दोषो का भी ध्यान रखा है। जैसे—अन्ध, छवकाल, हीण, निनग, पाँगलो, जातिविरोध, अपस, नालच्छेद, पखतूट, बहरो और अमगल आदि। छन्द-शास्त्र के क्षेत्र मे जहाँ उन ने सस्कृत के पिंगल-ग्रन्थो के सभी छन्दो को अपनाया वहाँ गीत नाम से अपना पृथक् छन्द-शास्त्र भी निर्मित किया है। काव्य-उक्ति के भी स्वमुख, परामुख इत्यादि भेद डिंगल के कवियो ने किये हैं। इस प्रकार डिंगल के साहित्य मे जहाँ सस्कृत साहित्य की काव्य-परम्परा का पूर्ण उपयोग है वहाँ अपनी नवीन उद्भावनाओ का भी अभाव नही है।

डिंगल के साहित्य मे पद्य के साथ-साथ गद्य के भी अनेक रूप मिलते हैं। रघुनाथ-रूपक इत्यादि छन्द-शास्त्रीय ग्रथो मे गीतो आदि का विवेचन करने के साथ वार्ता, वचनिका, दवावैत आदि गद्य रूपो का भी लक्षण-उदाहरण सहित विवेचन किया गया है जिस का उल्लेख यथास्थान किया जायेगा।

राजस्थान का साहित्य सभी रसो और विषयो मे प्राप्य है। उस मे 'वेली कृष्ण-रुक्मिणी री' जैसे शृगार-रसाप्लावित ग्रन्थ भी विद्यमान है तो 'हरि-रस' जैसे भक्ति-रस के ग्रन्थ भी। परन्तु प्रधान रस वीर ही माना जा सकता है, और उस का कारण है साहित्य-रचना के समय का राजनीतिक जीवन और कवियो के आश्रय-दाताग्रो की रुचि। राजस्थानी मे जैन-साहित्य की रचना करने वाले अनेक जैन-लेखक भी हुए है क्योकि उन की धार्मिक भावना प्रारम्भ से ही सस्कृतेतर—प्राकृत, अपभ्र श इत्यादि—जन-साधारण मे प्रचलित भाषाओ के प्रयोग की ओर रही। अत स्वभावत ही उन ने अपने प्रान्त की सामयिक भाषा का भी साहित्य मे सहर्ष प्रयोग किया। प्रयोग करने के साथ-साथ साहित्यकारो के निर्मित साहित्य का सरक्षण भी जैनाचार्यो और श्रावको द्वारा हुआ। जैन लेखको द्वारा निर्मित पर्याप्त साहित्य विद्यमान है। परन्तु उस से भी अधिक साहित्य ऐसा है जिस का सरक्षण जैनाचार्यो के हाथो से हुआ। जैनियो के उपाश्रय और भडार हमारे देश की अपूर्व निधि है। कितने ही अज्ञात लेखको की कला कृतियाँ उन ज्ञान के आगारो मे प्रचुर मात्रा मे भरी पडी है। जैनियो की मथेन नामक एक जाति सुन्दर अक्षरो मे प्रतिलिपि करने के लिए प्रसिद्ध रही है। उन के हाथो से सहस्रो ग्रथो का लिपिकरण हुआ है। जैन-साहित्य मे प्रबन्ध-काव्य, कथाएँ, रास, फाग और सभाय आदि प्रमुख विषय है। धार्मिक साहित्य और उस की टीका-टिप्पणी प्रचुर परिमाण मे विद्यमान है। जैनो के इस साहित्य मे प्राप्त होने वाली भक्ति, सयोग और वियोग की कल्पनाएँ भारतीय साहित्य की चिर-कल्पित निधिया हो कर भी मौलिकता से ओत-प्रोत है।

ब्राह्मण-साहित्य

ब्राह्मणो ने भी मारवाडी साहित्य की रचना मे थोडा-बहुत सहयोग दिया यद्यपि प्रधान रूप से उन का ध्यान केवल सस्कृत की ही ओर रहा। वे सामान्य व्यवहार की भाषा को अपने साहित्य मे प्रयुक्त करना कुछ हेय समझते थे। इसी लिए उन ने देशीय-साहित्य के निर्माण को उतना सहयोग नही दिया जितना अन्य शिक्षित वर्ग ने। फिर भी 'वेताल-पच्चीसी', 'सिहासन-बत्तीसी', 'सुग्रा-बहोतरी', 'हितोपदेश', 'पचाख्यान' आदि कथाओ, 'नासिकेत', 'मारकण्डेय', 'सूरज' तथा 'पद्म' आदि पुराणो एव 'भगवद् गीता', 'रस-तरगिणी', 'रस-रत्नाकर', 'रामायण', 'महाभारत' आदि ग्रथो के अनुवाद कर के ब्राह्मण वर्ग ने भी अपनी दैनिक व्यवहार की भाषा के साहित्य मे सहयोग दिया।

सन्त-साहित्य

जिस प्रकार कबीर, सूरदास आदि सन्तो का अक्षय साहित्य हिन्दी की निधि है उसी प्रकार राजस्थान मे भी अनेक सन्तो का साहित्य विद्यमान है, जिन ने राजस्थान की तीनो ही साहित्य-श्रेणियो—अर्थात् डिंगल, पिंगल और व्रज—मे रचना कर के साहित्य के भडार की श्री-वृद्धि की है। दादू, गोरख, मीरा, रैदास, जसनाथ, सुन्दरदास, वाजींद, नरसिंह, महाराजा प्रतापसिंह, प्रताप कुँवरि, जनगोपाल आदि का साहित्य इस सन्त-साहित्य का ही अग है।

सौती साहित्य

परन्तु डिंगल का साहित्य प्रधानत चारण, भाट, ढोली, ढाढी, राव, मोतीसर आदि जातियों के लोगो का साहित्य है। उन जातियो का व्यवसाय ही कविता करना है। हमारे देश मे आदि काल से ही कविता द्वारा जीविकोपार्जन करने की एक परम्परा रही है। धर्म-शास्त्र मे विविध जातियो के व्यवसाय का वर्णन करते हुए सूत, मागध, वन्दीजन आदि का उल्लेख है जिन का कर्त्तव्य होता था राजाओ के शौर्य-वीर्य की प्रशंसा करना, युद्ध के समय उन के साथ रहते हुए प्राय उन के रथो का सचालन करना, उन को युद्ध के लिए प्रोत्साहित करते रहना और उन मे कर्तव्य भाव जागृत होने पर पुन वीरत्व का सचार करना, शान्ति के समय उन के सम्मुख उन के पूर्वजो की वीर-गाथाओ तथा उन के स्वय के प्रशस्त वीर-कर्मो का आख्यान कहना तथा स्तुति-गायन करना। महाभारत के वर्तमान रूप सौती-सस्करण का निर्माण स्पष्टत. सूत जाति के किसी महाकवि की लेखनी से हुआ। पुराणो की सहस्रो कथाएँ इन सूतो द्वारा ही गायी जाती रही और राज-परिवारो मे इन कवि-गायको का सदा सम्मान होता रहा। मध्य काल मे भी यह परम्परा यथावत् बनी रही और चारण-भाट वर्ग के कवि उसी सूत-परम्परा का निर्वाह करते रहे। ये कवि युद्ध के समय स्वय राजाओ के साथ खडे हो कर उन को प्रोत्साहित करते थे और शान्ति के समय उन के वीर-कृत्यो का गायन कर उन से पुरस्कार प्राप्त करते थे। राजस्थान-जैसे सामन्ती परम्परा के क्षेत्र मे इन चारणो और भाटो को प्रोत्साहन और सरक्षण मिलना सर्वथा स्वाभाविक था। फलत चारण आदि ने पुष्कल साहित्य की रचना कर डिंगल की साहित्य निधि को अनेकानेक रत्नो से भरपूर किया।

डिंगल का साहित्य-शास्त्र

डिंगल-साहित्य की प्रमुख विशेषताओ का विवेचन ऊपर सक्षेप मे हो चुका है परन्तु उस साहित्य की कुछ ऐसी विशेषताएँ है जो हिन्दी के शेष साहित्य मे नही है। अतएव उन का कुछ विस्तार से वर्णन अपेक्षित है। उस के बिना डिंगल-कवि की कर्म-भूमि, कठिनाइयो तथा समस्याओ पर विचार कर सकना सभव नही। सस्कृत और हिन्दी का साहित्य-शास्त्र तथा छन्द-शास्त्र जानना तो डिंगल कवि के लिए अपेक्षित था ही, उस के अतिरिक्त जिन अन्य विषयो का ज्ञान आवश्यक था वे आगे सक्षेप मे बताये जा रहे हैं।

काव्योक्तियाँ (उक्त)

डिंगल के रीति-ग्रन्थकारो ने काव्य की उक्ति के चार प्रकार माने है। वे है—परमुख उक्ति, सन्मुख उक्ति, परामुख उक्ति और श्रीमुख उक्ति।

परमुख उक्ति (उक्त)—जहाँ कवि वर्णनीय का वर्णन अन्य पुरुष को सबोधन कर के करता है वहाँ परमुख उक्ति होती है। इस उक्ति के दो भेद भी हैं—शुद्ध और गर्भित (गरवत)। जहाँ सामान्य शब्दो मे उक्ति हो वहाँ शुद्ध-परमुख-उक्ति (उक्त) होगी और अन्योक्ति द्वारा कथन होने पर गर्भित परमुख उक्ति (गरवत परमुख उक्त) होगी।

सन्मुख उक्ति (उक्त)—जहाँ वर्णनीय व्यक्ति का वर्णन उसी को सम्बोधन कर के किया गया हो वहाँ सन्मुख उक्ति होती है। इस उक्ति के भी उपर्युक्त रीति से ही शुद्ध और

गर्भित—दो भेद होते है।

परामुख उक्ति (उक्त)—जहाँ कवि अपने वचनो मे वर्णनीय विषय का वर्णन न कर किसी अन्य के मुख से वर्णन कराये वहाँ परामुख उक्ति होती है। इस परामुख उक्ति के भी परमुख-परामुख-उक्ति तथा सन्मुख-परामुख-उक्ति नामक दो भेद है।

श्रीमुख उक्ति (उक्त)—जहाँ वर्णनीय व्यक्ति अपने ही मुख से अपनी अवस्था का वर्णन करता है वहाँ श्रीमुख उक्ति होती है। उस के भी कल्पित-श्रीमुख-उक्ति और साक्षात्-श्रीमुख-उक्ति (सास्यात श्रीमुख उक्त) नामक उपभेद हैं। कल्पित-श्रीमुख-उक्ति मे नायक अपने विषय मे कुछ कल्पनाएँ करता है और साक्षात्-श्रीमुख-उक्ति मे वह वस्तुत अपना वर्णन करता है।

मिश्र उक्ति—उपर्युक्त चारो उक्तियो का किसी काव्य मे एकत्र समावेश भी सभव है और उस अवस्था मे वह काव्य मिश्र-उक्ति-काव्य कहलायेगा।

जथा

डिगल साहित्य-शास्त्र का एक विवेचनीय तत्त्व जथा (यथा) है। यह वस्तुत वाक्यो के विन्यास की एक रीति है। उस की परिभाषा देते हुए 'रघुनाथ-रूपक' मे लिखा है—

रूपक मांहे रीत जो वरणन करे विचार।
सो क्रम निवहे सो जथा तवै मछ विस्तार॥

अर्थात् कविता मे वर्णन करने के लिए प्रारम्भ मे जिस रीति को ग्रहण किया गया हो उसी का क्रम-पूर्वक निर्वाह करना जथा है। डिगल-ग्रन्थकारो ने जथा के ग्यारह भेद बताये है। वे इस प्रकार है—विधानीक, सर, सिर, वरण, अहिगत, आद, अत, सुद्ध, इघक, सम, नूंन।

विधानीक जथा—कविता के प्रत्येक पद मे क्रम से जिन वस्तुओ का वर्णन किया जाता है उन वस्तुओ की नामावलि चौथे पद मे दे दी जाये तो विधानीक जथा होती है।

सर जथा—यथासख्य अलकार का प्रयोग कर के जहाँ एक वर्णन शृखला दी जाती है वहाँ सर जथा होती है। सर जथा के चार उपभेद भी है। पहले मे केवल यथासख्य अलकार के द्वारा वर्णन होता है। दूसरे मे यथासख्य के साथ उल्लेख अलकार भी होता है। तीसरे मे देखने या समझने वाले का नाम अन्त मे आता है और अलकार उल्लेख होता है। और चौथे भेद मे वर्णनीय विषय का नाम प्रथम पद मे ही आता है।

सिर जथा—गीत के प्रथम दोहले मे जो वर्णन किया जाये वही बात अन्त तक शब्दान्तर द्वारा व्यक्त की जाये वहाँ सिर जथा होती है।

वरण जथा—जहाँ कवि प्रत्येक दोहले मे नया वर्णन करे वहाँ वरण जथा होती है।

अहिगत जथा—जहाँ काव्य का वर्णन सर्प की गति के समान वर्णनीय विषय की दिशाएँ बदलता जाये वहाँ अहिगत जथा होती है।

आद जथा—वर्णनीय विषय का नाम प्रथम दोहले मे हो और आगे के दोहले मे उस का वर्णन हो वहाँ आद जथा होती है।

अन्त जथा—प्रारम्भ के दोहलो मे जो वर्णन हो उन से अतिम दोहले मे कुछ सार निकाला जाये वहाँ अत जथा होती है।

सुद्ध (शुद्ध) जथा—प्रथम दोहले मे जो वर्णन हो वही वर्णन अत तक के दोहलो मे

निभाया जाये वहाँ सुद्ध जथा होती है।

इधक (अधिक) जथा—वर्णनीय का वर्णन रूपकालकार द्वारा कर के अत मे व्यतिरेक अलकार द्वारा उपमेय को उपमान से बढा कर बताया जाये वहाँ इधक जथा होती है।

सम जथा—जहाँ केवल रूपकालकार द्वारा वर्णनीय का वर्णन हो वहाँ सम जथा होती है।

नूँन (न्यून) जथा—जहाँ उपमेयो और उपमानो को एक-सा बताते हुए अन्त मे उपमान को उपमेय के सम्मुख न्यून बताया जाये वहाँ नूँन जथा होती है।

दग्धाक्षर (दधक्षर)

डिंगल के कवियो ने दग्धाक्षरो का भी बहुत अधिक ध्यान रखा है। दग्धाक्षरो का विचार हिन्दी के अन्य पिंगल ग्रन्थो मे भी मिलता है। परन्तु उन का उतना ध्यान सम्भवत वहाँ नही रखा जाता जितना डिंगल मे रखा जाता है। पर दग्धाक्षरो के विषय मे कोई एक मत नही है। डिंगल के कुछ ग्रन्थो मे ग, ङ, ठ, ट, थ, ण, द, ल, प, म, ह, झ, ध, र, घ, न, ख, भ, को दग्धाक्षर माना है तो कुछ के मत से केवल ह, ज, ध, र, घ, न, ख, भ ही दग्धाक्षर है। इन के अतिरिक्त म, द और प को आदि शब्द के मध्य मे और झ, ट और क को आदि शब्द के अन्त मे रखना भी निषिद्ध माना गया है।

काव्य-दोष

संस्कृत साहित्य के दोष-विचार के अतिरिक्त कुछ अन्य दोषो का विवेचन भी डिंगल के ग्रन्थो मे मिलता है। वे है—अन्ध, छबकाल, हीण, निनग, पाँगलो, जातिविरोध, अपस, नालच्छेद, पखतूट और बहरो। इन के लक्षण नीचे दिये जाते है।

अन्ध—जहाँ एक ही पद्य मे अनेक उक्तियों का एक साथ समावेश हो वहाँ अन्ध दोष होता है।

छबकाल—जहाँ डिंगल के अतिरिक्त अन्य भाषाओ के शब्दो का प्रयोग हो वहाँ छबकाल दोष होता है।

हीण—जहाँ वर्णनीय के माता-पिता, जाति आदि का यथोचित वर्णन न हो वहाँ हीण दोष होता है।

निनग—जहाँ क्रम-भग हो वहाँ निनग दोष होता है।

पाँगलो—जहाँ नियम-विरुद्ध मात्रा और वर्ण हो वहाँ पाँगलो दोष होता है।

जातिविरोध—जहाँ एक साथ विभिन्न प्रकार के दोहलो का समावेश हो वहाँ जाति-विरोध दोष होता है।

अपस—जहाँ निरर्थक शब्द-योजना हो और कोई स्पष्ट अर्थ न प्रकट हो वहाँ अपस दोष होता है।

नालच्छेद—जहाँ जथाओ का यथावत् निर्वाह न हो वहाँ नालच्छेद दोष होता है।

पखतूट—जहाँ किसी चरण मे सानुप्रास शब्दावलि हो और कही अनुप्रास-हीन वहाँ पखतूट दोष होता है।

वहरो—जहाँ वाक्य के किसी शब्द को उलटा कर के रखने से अशुभ अर्थ व्यक्त हो वहाँ वहरो दोष होता है।

डिंगल का छन्द-शास्त्र

जैसा कि ऊपर बता चुके है डिंगल के कवि संस्कृत और हिन्दी के सभी छन्दो का प्रयोग करते है, परन्तु साथ-ही-साथ उन का अपना पृथक् छन्द-शास्त्र भी है जिस का सक्षिप्त परिचय यहाँ आवश्यक है।

हिन्दी के दोहे छन्द के अनेक रूप डिंगल मे देखने को मिलते है। ये भेद है—शुद्ध दूहो, सोरठियो दूहो, वडो दूहो, तुम्वेरी दूहो और खोडो दूहो।

शुद्ध दूहो—यह हिन्दी का दोहा छन्द है।

सोरठियो दूहो—यह हिन्दी का सोरठा है।

वडो दूहो—इस मे पहले और चौथे चरण मे ग्यारह-ग्यारह मात्राए होती है तथा दूसर और तीसरे मे तेरह-तेरह। इस का दूसरा नाम साँकलियो दूहो भी है।

तुम्वेरी दूहो—यह बडे दूहे का उलटा है, अर्थात् इसके पहले और चौथे चरण मे तेरह-तेरह मात्राएँ होती है और दूसरे तथा तीसरे मे ग्यारह-ग्यारह।

खोडो दूहो—इस के पहले और तीसरे चरण मे ग्यारह-ग्यारह मात्राएँ होती है और दूसरे तथा चौथे मे क्रमश तेरह तथा छह मात्राएँ होती है।

हिन्दी मे जिस को छप्पय कहा जाता है उस को डिंगल मे कवित्त कहते है। उस के तीन भेद है —कवित्त, शुद्ध कवित्त और दोढो कवित्त।

कवित्त—इस मे छह चरण होते है। पहले चार रोला के और शेष दो दोहा के।

शुद्ध कवित्त—यह हिन्दी का छप्पय है। इस मे पहले चार चरण रोला के और अन्तिम दो उल्लाला के होते है।

दोढो कवित्त—यह आठ चरणो का छन्द है। पहले छह चरण रोला के और बाद के दो उल्लाला के होते है।

संस्कृत के मुक्तादाम (मोतीदाम), भुजग-प्रयात, तोमर, त्रोटक आदि वर्णिक छन्दो का भी डिंगल मे प्रयोग होता है। परन्तु कभी-कभी उन को वर्णिक के स्थान पर मात्रिक छन्दो के रूप मे भी प्रयुक्त किया जाता है।

इन के अतिरिक्त डिंगल का विशेष छन्द निसाणी है जिस के ग्यारह भेद है—शुद्ध, गर्वत, गन्धर, पैडी, सिरखुली, सोहणी, रूपमाला, मारू, सिहचली, झीगर, दुमिला और वार।

कुण्डलिया छन्द के डिंगल मे पाँच भेद है, यथा—झड-उलट, राजवट, शुद्ध, दोहाल और कुण्डलनी। इन के लक्षण क्रमश इस प्रकार है —

झड-उलट—इस मे पहले एक दोहा और फिर बीस-बीस मात्राओ के चार पद होते है।

राजवट—यह आठ चरणो का छन्द है। पहले दोहा होता है और फिर चौबीस-चौबीस मात्राओ के छह पद होते है।

शुद्ध—यह छह चरणो का छन्द है। उस मे पहले दोहा और फिर चौबीस-चौबीस मात्राओ के चार पद होते हैं।

दोहाल्—इस मे पहले दोहा और फिर चौबीस-चौबीस मात्राओ के छह पद होते है। अन्तिम पद मे प्रथम पद की ही आवृत्ति होती है।

कुण्डलनी—इस मे प्रथम आर्या छन्द होता है और बाद मे चार पद काव्य छन्द के होते है।

इन छन्दो के अतिरिक्त डिंगल की एक विशेषता है उस के गीत। गीत नाम से प्राय लोगो को यह भ्रम हो जाता है कि ये कोई गाने की वस्तु होगी और उन को गाने वाला कोई साधारण गायक होता होगा। परन्तु वस्तुत ये गीत गाये नही जाते थे, एक विशेष लय से पढे (रिसाइट किये) जाते थे। पढने की शैली अति भव्य और प्रभावशाली होती थी जिस को सुन कर वीर लोग हँसते-हँसते प्राणोत्सर्ग के लिए प्रस्तुत होते थे। आज भी उस भव्य शैली मे गीत पढने वाले चारण कवि यत्र-तत्र मिल जाते है परन्तु वे विरले ही हैं। इन गीतो की एक विशेषता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वह यह कि एक गीत मे अनेक दोहले होते है और प्रथम दोहले मे जिस भाव का वर्णन होता है उसी भाव का वर्णन शेष दोहलो मे भी भग्यन्तर से किया जाता है। कवि साधारण हो तो पुनरावृत्ति प्रतीत होती है परन्तु प्रभावशाली कवि ऐसे अनोखे ढग से वक्रता के साथ रचना करते है कि पुनरावृत्ति प्रतीत ही नही होती। दोहले मे प्राय चार चरण होते है। एक गीत के सब दोहले समान होते हैं। कुछ गीतो मे प्रथम दोहले के प्रथम चरण मे दो या तीन मात्राएँ या वर्ण अधिक होते है जो सभवत गीत का आरम्भ सूचित करते है। छन्दो की भाँति दोहले मात्रिक भी होते है और वर्णिक भी। उन मे भी सस्कृत छन्दो के समान सम, अर्द्धसम और विषम आदि भेद होते हैं। प्राय यह दोहले सतुकान्त होते है परन्तु ऐसे गीत भी उपलब्ध है जिन मे अतुकान्त दोहलो का प्रयोग है। हिन्दी के लिए मात्रिक छन्दो मे अतुकान्त कविता नयी वस्तु है परन्तु डिंगल मे वह प्राचीन काल से चली आयी है। डिंगल के गीतो की सख्या पचहत्तर के लगभग है जिन का 'रघुनाथ-रूपक' आदि अनेक लक्षण-ग्रन्थो मे विवेचन मिलता है। परन्तु उन का वैज्ञानिक क्रम से भेदोपभेद-पूर्वक विवेचन 'राजस्थान भारती' के भाग दो, अक एक, मे प्रोफेसर नरोत्तमदास स्वामी ने 'डिंगल गीतो की सारणी' नामक निबन्ध मे बहुत ही सुन्दर रीति से किया है।

गीतो को मुख्यत दो भागो मे बाँटा जा सकता है—मात्रिक और वर्णिक। मात्रिक गीतो के पुन तीन भेद हो सकते है—सम, अर्द्धसम और विषम। उन के नाम इस प्रकार है —

मात्रिक सम—इकखरो, भाख, अरध भाख, सुवग, सावक अडल के दो भेद, उमग, कविडलोल या धडउथल, मावझडो छोटो या पालवणी द्वितीय भेद, अरध-सावझडो छोटो या अरध पालवणी या दुमेल पालवणी या दुमेल, पालवणी त्रमेल या झडलुपत, सेलार, त्रबकडो या घोडादमो, पालवणी प्रथम भेद, गोख या जयखोडो, सावझडो (वडो), अरध सावझडो (वडो), वमाल।

मात्रिक अर्धसम—प्रोढ द्वितीय भेद कैवार, प्रोढ भेद या मोरठियो, अरट, सालूर, जांगडो साणोर या अरटी (अन्य नाम पुणिमाणोर, कुणियो छोटो), अरटियो, खुड्द

साणोर, सिधचलो, झडमुगट, सोहणो साणोर, अमेल, वेलियो, अमेल दूजो, हसावलो, छोटो साणोर, पखाली (इस गीत मे केवल तीन ही दोहले होते है), त्है्चाल, पहाडगत, शुद्ध साणोर, प्रहास साणोर या गरवत साणोर, मुगताग्रह या रिणखरो, वडो साणोर (साणोर), अरध भाखडी (भाखडी का आधा)।

मात्रिक विषम—अपखो, अवको, चितइलोल, चोटियो, अमेल, काछो, दीपक, लघु चितविलास, चितविलास, हेलो, चोटियाल, झमाल, गजगत, ललतमुगट, मनमोद, सतखणी, अठताली, भँवर गुजार दो भेद, डोढो, आटको, मदार, अगवडी, त्रकूटवध—दो भेद।

समवर्णिक—अरध गोखो, गोखो प्रथम भेद।

अर्धसम वर्णिक—अेकल वैणी दो भेद, सपखरो।

विषम वर्णिक—गोखो-द्वितीय भेद, वीरकठ, सवइयो।

विस्तार के भय से इन का पूर्ण विवेचन यहाँ नही किया जा रहा है। जिज्ञासु पाठक "रघुनाथ-रूपक गीताँ रो" अथवा राजस्थान-भारती (भाग २, अक १) मे "डिंगल गीतो की सारणी" शीर्षक प्रोफेसर नरोत्तमदास स्वामी का निबन्ध पढे।

डिंगल के छन्द-शास्त्रकारो ने इन पद्य-बन्धो के अतिरिक्त कुछ गद्य-बधो का भी विवेचन किया है। उन के अनुसार गद्य-बन्ध के भेद है—दवावैत, वचनका (वचनिका) और वार्त्ता। ये गद्य-खड प्राय तुकान्त शब्दो से भरपूर होते ह। इन के लक्षणो की कोई स्पष्ट व्याख्या प्राप्य नही है। लक्षण ग्रन्थो मे यह भी स्पष्ट नही है कि वचनिका, वार्त्ता आदि दवावैत के ही भेद है अथवा दवावैत गद्य-बध का वैसा ही एक भेद मात्र हे जैसे वचनिका आदि। वचनिका के भी दो भेद माने है—पद्य-बन्ध और गद्य-बन्ध। गद्य-बध वचनिका के दो उपभेद माने हे—एक मे आठ मात्रा के पद युग्म होते है तो दूसरी मे बीस मात्रा के।

डिंगल के अलकार

डिंगल के कवियो ने सस्कृत साहित्य-शास्त्र के सभी अलकारो को अपनाया है पर उन के अतिरिक्त एक विशेष अलकार का बहुत अधिक ध्यान रखा हे। यहाँ तक कि उस के उपस्थित होने पर अनेक दोषो का निराकरण भी सम्भव माना ह। यह अलकार है "वयण सगाई"। वयण सगाई वस्तुत छन्द के प्रत्येक चरण मे ऐसे शब्दो की योजना है कि चरण के प्रथम शब्द का प्रारम्भ जिस अक्षर से हो उसी अक्षर से अन्तिम शब्द का भी हो। यह एक प्रकार का अनुप्रास माना जा सकता हे। परन्तु डिंगल के शास्त्रकारो ने आदि अक्षर का ध्यान रखते हुए यह छूट दी हे कि उसी अक्षर की आवृत्ति न हो सके तो उस के समकक्ष दूसरे अक्षर की हो और ऐसे समकक्ष अक्षर नियत कर दिये गये है, जो इस प्रकार है—

आ, इ, उ, ऐ, य और व—ये छह अक्षर प्रथम वर्ग के है। अन्य वर्ग है—ज-झ, व-ब, प-फ, म-ण, ग-घ, त-ट, थ-ढ, द-ड और च-छ। जहाँ उसी वर्ण की आवृत्ति सम्भव न हो वहाँ वर्ग के दूसरे वर्ण की आवृत्ति से काम चल जायेगा।

वयण सगाई के मुख्य तीन भेद हैं—अधिक, सम और न्यून।

अधिक वयण सगाई—जो वर्ण आदि मे आया है उसी शब्द की आवृत्ति अन्तिम शब्द के आदि मे होने पर अधिक वयण सगाई होगी।

सम वयण सगाई—आ, इ, उ, ऐ, य और व सम अक्षर है। इन मे किसी की आवृत्ति होने से सम वयण सगाई होगी।

न्यून वयण सगाई—ज-झ, व-ब आदि वर्गो के अक्षर मित्र अक्षर हे। मित्राक्षरो की आवृत्ति न्यून वयण सगाई कहलायेगी।

मोहरा

यह तुक का पर्याय है जिसे पिंगल के आचार्य अन्त्यानुप्रास भी कहते है। इस के भी डिंगल मे तीन भेद माने गये है—अधिक, सम और न्यून। जहाँ चार वर्णों की तुक हो वहाँ अधिक मोहरा होगा, तीन वर्णों की तुक होने पर सम मोहरा और केवल दो की तुक होने से न्यून मोहरा कहलायेगा।

इस प्रकार डिंगल के कवि के लिए यह अपेक्षित था कि वह सस्कृत और व्रज-भाषा आदि के साहित्य-शास्त्र तथा छन्द-शास्त्र से तो परिचित हो ही पर उपर्युक्त विशिष्ट अलकार, छन्द, दोष इत्यादिक के लक्षणो का भी ज्ञाता हो।

डिंगल भाषा

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है डिंगल का विकास शौरसैनी प्राकृत की गौर्जर अपभ्रश से हुआ। किस काल मे गुजराती और मारवाडी (डिंगल) एक-दूसरे से पृथक् हुई यह स्पष्टत बता सकना सम्भव प्रतीत नही होता। तेस्सितोरी ने तेरहवी शताब्दी से डिंगल का प्रारम्भ माना है और सोलहवी शताब्दी तक के काल को प्राचीन-डिंगल-काल और सत्रहवी शताब्दी के प्रारम्भ से अब तक के काल को उत्तर-डिंगल-काल माना है। इस काल क्रम का भेद उस ने प्रमुखत डिंगल ग्रन्थो की प्रतियो मे प्राप्य अक्षरो के आधार पर किया है। उस के अनुसार पूर्व-डिंगल-काल मे जहाँ अइ, अउ आदि उच्चारण थे वहाँ उत्तर-डिंगल-काल मे वे सध्यक्षर हो गये थे और वर्तमान ऐ और औ मे परिणत हो चुके थे। काल-विभाजन के इस आधार को बहुत प्रामाणिक तो नही माना जा सकता परन्तु डिंगल भाषा के विकास मे इस प्रकार का ध्यान रखना भी आवश्यक है। डा० मोतीलाल मेनारिया ने 'डिंगल भाषा और साहित्य' मे तेस्सितोरी के मत से असहमति प्रकट की है और राजस्थानी के विकास को इस प्रकार विभक्त किया है —

प्रारम्भ काल—वि० स० १०४५ से १४६० तक।

पूर्व-मध्य काल—वि० स० १४६० से १७०० तक।

उत्तर-मध्य काल—वि० स० १७०० से १६०० तक।

आधुनिक काल—वि० स० १६०० से अब तक।

इस काल-विभाजन मे किस बात का प्रमुखत ध्यान रखा गया यह स्पष्ट नही है परतु इतना स्पष्ट है कि मेनारियाजी के अनुसार सम्वत् १४६० तक गुजराती और राजस्थानी का भेद स्पष्ट नही हो पाया था। यह वह काल था जिस की भाषा के लिए तेस्सितोरी ने प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी नाम उचित समझा है और गुजराती साहित्यकारो ने जूनी गुजराती। १४६० से १७०० तक के काल मे राजस्थानी और गुजराती स्पष्टत दो भाषाओ के रूप मे

बँटवारा कर चुकी थी पर राजस्थानी अथवा डिंगल मे प्राचीन रूप तब भी विद्यमान थे। १७०० से बाद के काल मे प्राचीन रूप कुछ कम हो गये परन्तु परम्परागत अपभ्रश आदि की शब्दावलि का प्रयोग बहुत-कुछ विद्यमान रहा जिस का स्पष्ट कारण कवियो का राजाओ के आश्रित होना है। राज-सभाओ मे पुरस्कारो की प्राप्ति के फल-स्वरूप काव्य-रचना प्रतियोगिता का विषय बन गयी थी। फलत उस का विषय-क्षेत्र भी सीमित हो गया था और शब्दावलि, अलकार, छन्द आदि सभी दृष्टियो से साहित्य कुछ कठघरो मे बन्द हो गया था।

डिंगल भाषा के व्याकरण के विषय मे अनेक विद्वान प्रयत्न कर चुके है परन्तु कोई बहुत प्रामाणिक व्याकरण अभी तक प्रकाश मे नही आ पाया है। जो कुछ सामग्री प्राप्त है उस के आधार पर यहाँ डिंगल भाषा का सक्षिप्त परिचय कराया जा रहा है। वैसे थोडा विस्तृत विवेचन वचनिका की भाषा के विवेचन के प्रसग मे आगे मिलेगा।

डिंगल भाषा की ध्वनियाँ

स्वर—डिंगल मे निम्नलिखित स्वर है

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऍ, ए, ऐ, ऑ, ओ, औ, अ, अ ।

इन के अतिरिक्त छन्द की सुविधा के अनुसार आ का अ से भिन्न एक ह्रस्व रूप भी मिलता है और इसी प्रकार औ का भी। सस्कृत का ऋ स्वर रि मे परिणत हो जाता है। अइ, अउ के सधिस्वर भी डिंगल मे प्राप्य ह।

व्यजन—डिंगल के व्यजन प्राय हिन्दी से मिलते-जुलते है। पर कुछ भिन्न भी है। वे निम्नलिखित है

क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, स, ह, ळ, व, ड ।

डिंगल मे ड और ड स्पष्टत दो भिन्न ध्वनियाँ है—हिन्दी के समान एक ही ध्वनिग्राम के सदस्य नही है। इसी लिए प्राचीन प्रतिलिपिकार दोनो के लिए दो सर्वथा भिन्न रूपो का प्रयोग करते थे।

स्वरो मे स्वरित रूप भी होना डिंगल की विशेषता है। यह वस्तुत स्वर के पश्चात् हकार के लुप्त होने के कारण उत्पन्न होने वाली ध्वनि है। परन्तु इस ध्वनि के फलस्वरूप अर्थ मे पर्याप्त अन्तर हो जाता है। यथा—

नार (नारी), ना'र (सिंह), पीर (पीडा), पी'र (पीहर)।

वकार के डिंगल मे दो भेद है—एक दन्तोष्ठ्य और दूसरा द्व्योष्ठ्य।

मूर्धन्य ष डिंगल मे नही होता। उस का उच्चारण ख होता है। इसी लिए पुराने हस्त-लिखित ग्रन्थो मे ख के स्थान पर सर्वत्र ष के ही चिह्न का प्रयोग हुआ है।

सज्ञाएँ—डिंगल के सज्ञा शब्दो मे केवल एकवचन और बहुवचन अर्थात् दो ही वचन होते है। इसी प्रकार लिंग भी दो ही है—पुलिंग और स्त्रीलिंग। डिंगल के कुछ प्राचीन ग्रन्थो मे नपुसकलिंग के भी पृथक् दर्शन होते है परन्तु परवर्ती काल मे उसका स्थान सर्वत्र पुलिंग ने ले लिया है। विभक्तियो मे कही विभक्ति-चिह्न मात्र है तो कही पूरे शब्द विभक्ति

के भाव को व्यक्त करते है।

सर्वनाम—सर्वनामो मे एक ही अर्थ के लिए अनेक शब्दो के प्रयोग हुए है। इस लिए किसी एक ही शब्द का निर्देश सम्भव नही है। यथा—'कौन' के लिए कुण, कूण, कवण, को, का, किण आदि अनेक रूप मिलते हैं। यह और वह के अर्थ को सूचित करने के लिए जिन शब्दो का प्रयोग होता है उन मे स्त्रीलिंग और पुलिंग का भेद रखा जाता है।

क्रियाएँ—क्रियाएँ प्राय पृथक् रूप मे भी मिलती है और सयुक्त रूप मे भी अर्थात् अनेक क्रियाएँ मिल कर भी एक क्रिया का अर्थ व्यक्त करती है।

अव्यय—काल, स्थान आदि के सूचक एक-एक भाव के लिए भी डिंगल मे अनेक शब्द मिलते है। ठीक वैसे ही जैसे सर्वनामो मे। यथा—

'जैसे' के अर्थ मे—जिम, जेम, ज्यूं, जूं आदि।

'वहाँ' के अर्थ मे—तिहाँ, तठै, वठै, तेथे आदि।

इसी प्रकार कृदन्तो और तद्धितो के भी अनेक रूप डिंगल मे मिलते है। इन शब्दो का कुछ परिचय वचनिका के भाषा-विषयक विवेचन मे आगे मिल सकेगा।

'डिंगल' शब्द की व्युत्पत्ति

डिंगल नाम की व्युत्पत्ति के विषय मे अनेक मत-मतान्तर रहे है और विद्वानो ने अनेक प्रकार की कल्पनाएँ की है। उन का भी सक्षिप्त परिचय यहाँ आवश्यक है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है डिंगल शब्द का सर्व-प्रथम प्रयोग बाँकीदास की ग्रन्थावलि मे देखने को मिलता है और इस प्रकार यह प्रयोग बहुत पुराना नही है। न डिंगल और पिंगल का वर्तमान भेद ही इतना पुराना है। यह बात 'रघुनाथ-रूपक गीतां रौ' नामक ग्रन्थ को देखने से स्पष्ट हो जाती है। उन्नीसवी शताब्दी के कवि मछ ने 'रघुनाथ-रूपक' की रचना की। उस ने अपने ग्रन्थ को मारू भाषा का ग्रन्थ माना है, डिंगल का नही। और छन्द-शास्त्र का विवेचन होने के कारण उस ने अपने ग्रन्थ को पिंगल ग्रन्थ की सज्ञा दी है। इस से यह स्पष्ट है कि उस के समय मे न तो पिंगल शब्द का भाषा के अर्थ मे प्रयोग था और न मारू भाषा के लिए डिंगल शब्द का। डिंगल और पिंगल नाम का प्रचार प्राय एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता, के कार्य-कर्ताओ की कलम से ही अधिक हुआ। इन शब्दो का राजस्थानी उच्चारण डींगल और पींगल था परन्तु अग्रेजी की अक्षरी की कृपा से डिंगल और पिंगल नाम ही अधिक प्रचलित हुए।

डिंगल शब्द की व्युत्पत्ति के विषय मे जो विभिन्न मत है उन का समीक्षा सहित सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(१) तेस्सितोरी का मत—डिंगल का अर्थ अनियमित अथवा गँवारू था। ब्रजभाषा परिमार्जित थी और साहित्य-शास्त्र के नियमो का अनुसरण करती थी उन के अभाव के कारण इस का नाम डिंगल पडा।

समीक्षा—तेस्सितोरी ने डिंगल का अर्थ गँवारू किस प्रकार किया यह समझ मे नही आता। डिंगल वस्तुत गँवारो की नही विद्वान् चारण-कवियो की भाषा थी। वह अपरिमार्जित भी नही थी। साहित्य-शास्त्र के नियम ब्रजभाषा से कही अधिक कठोर थे क्योकि

डिंगल के कवियों के लिए ब्रजभाषा के साहित्य-शास्त्र के अतिरिक्त डिंगल के साहित्य-शास्त्र का भी ज्ञान अपेक्षित था। अत तेस्सितोरी का मत युक्ति-सगत नही।

(२) हरप्रसाद शास्त्री का मत—डिंगल का मूल नाम डग्गल था। पिंगल की तुक पर डिंगल रख दिया गया। डिंगल किसी भाषा का नही कवित्व-शैली का नाम है।

समीक्षा—शास्त्रीजी का सारा भवन निम्नलिखित पद्यांश के आधार पर खड़ा हुआ है—

'दीसे जगल डगल जेथ जल वगल चाटे।
अनहुता गल दिये गला हूँता गल काटे॥'

सम्भवत शास्त्रीजी इस का अर्थ नही समझे और इस मे डगल शब्द का प्रयोग देख-कर वे इसे ही डिंगल का पूर्व रूप मान बैठे। वस्तुत यहाँ डगल का अर्थ मिट्टी का ढेला है, भाषा से इसका कोई सम्बन्ध नही। अत शास्त्रीजी की कल्पना मिथ्या है।

(३) गजराज ओझा का मत—डिंगल मे ड वर्ण बहुत प्रयुक्त होता है, यहाँ तक कि यह डिंगल की एक विशेषता हो गया है। ड वर्ण की प्रधानता के कारण पिंगल के साम्य पर इस भाषा का नाम डिंगल रखा गया।

समीक्षा—यह भी विचित्र कल्पना है। किसी वर्ण-विशेष की अधिकता के कारण किसी भाषा का नाम उस के आधार पर रखे जाने का और कोई उदाहरण ससार मे नही मिलता। अतएव ओझाजी के मत को प्रामाणिक नही माना जा सकता।

(४) पुरुषोत्तमदास स्वामी का मत—डिंगल शब्द डिम+गल से बना है। डिम का अर्थ है डमरू की ध्वनि और गल का गला। डमरू की ध्वनि रण-चण्डी का आह्वान करती है। डमरू वीर रस के देवता महादेव का बाजा है। गले से जो कविता निकल कर डिम की तरह वीरो के हृदय को उत्साह से भरे उसी को डिंगल कहते है।

समीक्षा—न तो महादेव वीर रस के देवता है और न कही डमरू की ध्वनि उत्साह-वर्धक मानी गयी है। अतएव इस कल्पना का आधार ही अयुक्त है।

(५) उदयराज उज्ज्वल का मत—चारणो ने पिंगल का परिहास करने के लिए पिंगल का अर्थ पांगळी (पगु) किया और अपनी भाषा को उस के प्रतिवाद-स्वरूप डिंगल (उडिंगल) अर्थात् उडने वाली भाषा बताया। पिंगल अनेक नियमो से जकडी होने के कारण पगु है और डिंगल स्वच्छन्द होने के कारण उडने वाली अर्थात् स्वच्छन्द गति से मुक्त-विहार करने वाली।

समीक्षा—डिंगल के नियमो से मुक्त होने का विवेचन ऊपर हो चुका है और यह बताया जा चुका है कि डिंगल मे पिंगल की अपेक्षा कही अधिक नियम-बद्धता है।

(६) मोतीलाल मेनारिया का मत—यथार्थत डिंगल का शुद्ध रूप डींगल है। डींग का अर्थ बढा-चढा कर बोलना है और डिंगल का अर्थ डींग वाली। जिस भाषा मे बहुत अत्युक्ति-पूर्ण वर्णन था वह थी डींगल।

समीक्षा—डिंगल के साहित्य को अत्युक्ति-पूर्ण होते हुए भी डींग-मात्र मानना युक्ति-सगत नही है। 'डींग' शब्द का कुछ बुरा भाव है और चारण कवि अपने काव्य की भाषा को डींगल बना कर अपने साहित्य की निन्दा नही करेंगे। अतएव मेनारियाजी की व्युत्पत्ति भी

ठीक प्रतीत नही होती ।

इस प्रकार डिंगल की उत्पत्ति के विषय मे कुछ भी निर्णय अभी नही हो पाया है । परन्तु फिर भी उस का अर्थ निश्चित हो चुका है और वह है पश्चिमी राजस्थानी का साहित्यिक रूप । इसी प्रकार पिंगल का भी अर्थ है ब्रजभाषा मे मिलती-जुलती पूर्वी राजस्थानी का वह साहित्यिक रूप जिसमे डिंगल की पर्याप्त शब्दावलि होती है ।

(२) राजस्थान का वचनिका-साहित्य

प्रबन्ध काव्य के मध्य पद्य के साथ-साथ गद्य का भी प्रयोग करने की परपरा राजस्थान के साहित्य मे दीर्घ काल से रही है। इस प्रकार के काव्य पिगल मे भी है और डिंगल मे भी जिन मे पद्य के मध्य सुमधुर, सालकार, तुकात गद्य की छटा देखने को मिलती है। ये गद्य-खड कही डिंगल अथवा पिगल मे है तो कही खडी बोली मे। परवर्त्ती काल मे जब सौती-साहित्यकारो मे बहुभाषा-ज्ञान-प्रदर्शन की लालसा बढी तो फारसी शब्दो से परिपूर्ण गद्य के भी दर्शन हुए। ये गद्य-खड कही वचनिका नाम से मिलते है तो कही वारता (वार्ता) अथवा दवावैत नाम से। कुछ उदाहरणो से उपर्युक्त विशेपताएँ स्पष्ट होगी —

वारता—

(क) दूतिका नाम। सातिका सुमतिका सहचरिका मनहरिका। पग रावि परठवासी। किसी परठवासी। (पृथ्वीराज-रासो)

(ख) औरगसा पातसा आसुर अवतार। तपस्या के तेज-पुञ्ज एक से विसतार।
माप का विहाई सा प्रताप का निदाँन। मारतड आगे जिसी जोतसी जिहाँन।
(राज-रूपक)

(ग) सब कूँ बुलाय वैंण अकवरसाह् बोले। मेरी निसाँ खातरी है तुमारे महोले।
तुम पातसाहाँ के सवादी सूर ते सूर। तुमारी सहाय आवै मेरे मुख नूर।
(राज-रूपक)

दवावैत—

(घ) ऐसा गढ जोधाँण और सहर का दरसाव। जिमके चौतरफ वगीचो का डवर और दरियावो का वणाव। पहिले वगीचो की सोभा कहि के दिखाय। पीछे दरियावो की तारीफ जिस के गुण गाय। सो कैसे कह दिखाये। जल निवाणो का निवास। रति-राज का वास। (सूरज-प्रकाश)

(ङ) जिस वखत मे और भी हुँनर वधू ने सरव हुँनर का तमासा दिखाया सो कहि कैसे दिखाया। जिस वखत कालिहार सूरतपाक हौसनायको ने नजर गुजराए। आसमानी सौहरा किये पल्ले से भिलते आये। छछोहे हौसनायको की हमराह से छुट्टे। जगजेठो की तरतीव जोम से जुट्टे। (सूरज-प्रकाश)

वचनिका—

(च) तमाम आलमगीराँ गिरफतार। आलम पनाह जिहान। ईरान तूरान स्याह सख्त जब्द कर्दम [तख्त]। कूवत दस्त। मस्त पहलवान साहजहाँ आलमीगीर। मुलक जारति खुसखवरि। दक्खिन तख्त ममारख वख्त विलद जाहर पीर। हुँनर हैफ हकीम हिकमति

हकीकति खुदाय खेल बनावे। बिलद कोह पर्न दराज कस्त सिकार मस्त फील सेर नजरू दिखावे। रवार मुलक हतसाल रइयति बेरान नाकूवत। असफ फील मुत्तर सिपाह आजिज विचारे। स्याह नादान खुरदस्याल दीवान बेसहूर चीज न्यामति मामान किल्लू उतारे। रवी खरीफ आमदजरात मुलक मस्ती फिनर फहम मनसूबे करदम। जर विमार आमद गाफिल चिकारे। (रतन-रासो)

वार्त्ता—

(छ) कविले जिहानियां में मीरां अर्ज गुजरानी। बदे दरिगाह अवलिये आले साहिजहां किरानसानी। नवाई राव बरजांग के पोते। जिन की औलादि में हेममा सूर नामत पैदासि होते। जिम बरजांग एक सौ इकहत्तर फौजूं के फतूह पाये। दूसरा रतन कहाये। (रतन-रासो)

यों पद्य-काव्यों के मध्य गद्य-खडो के अनेक उदाहरण भाट-चारणों के साहित्य मे उपलब्ध होते हैं। पर 'वचनिका' नाम से ऐसे बहुत कम चम्पू-ग्रन्थ मिलते हैं जिन मे गद्य भाग मात्रा मे आधे के लगभग हो और जिस से यह प्रकट हो कि कवि का मुख्य उद्देश्य गद्य द्वारा वर्णन करने का था तथा पद्य का प्रयोग केवल सरसता की वृद्धि के लिए ही किया गया था। ऐसे प्रमुख तो दो ही काव्य मिलते हैं। प्रथम है 'वचनिका अचलदास खीची री चारण सिवदास री कही' और दूसरी उसी को आदर्श मान कर लिखी हुई 'वचनिका राठौड रतनसिंघजी री महेसदासौत री खिडिया जगा री कही'। इसी कोटि की एक वचनिका वृन्द कवि रचित है जिस का नाम है 'वचनिका-स्थान किसनगढ'। इस मे चम्पू रूप मे किसनगढ राज्य का इतिहास है। इस को वृन्द के पुत्र वल्लभ जी ने अपने महाराजा को सुना कर जागीर प्राप्त की थी।

सिवदास-रचित वचनिका को आदर्श मान कर जगा ने अपनी वचनिका निर्मित की थी अत उस का कुछ परिचय देना आवश्यक है। मालवा के शासक होशग गोरी ने जब अचल-दास खीची के दुर्ग गागरौण पर चढाई की थी तो अचलदास खीची ने अपने पुत्र पाल्हणसी को वश जीवित रखने के लिए और कवि सिवदास को काव्य द्वारा यश अमर करने के लिए युद्ध से बच निकलने का आदेश दिया। कवि ने इस आदेश का यथार्थ पालन किया और अचलदास का नाम ध्रुव-स्थायी कर दिया।

'अचलदास खीची री वचनिका' मे गद्य के बीच मे दूहा, छप्पय, कवित्त, कुण्डलिया आदि छन्द जुडे हुए हैं पर प्रधानता तुक-पूर्ण गद्य की ही है। गद्य का एक उदाहरण देखिए —

'इसा एक ते पातसाह रा कटकबंध अचलेसवर ऊपर छूटा। वाटका खडड घरा खूटा। दह का पाणी दूटा। धनि धनि हो राजा अचलेसवर थारउ जीयो। जिणि पातिसाह सूं उखाड लीयो। परवतां सिरि पथ लागा। दुघट घट भागा। सूर सूझै नहीं खेह आगा।'

वचनिका की रस-स्निग्धता का परिचय कराने के लिए करुण रस का एक दोहा पर्याप्त होगा—

'पाल्हणसी पुहवी रह्यो अनि समह्या सरग्गि।
तिणि वेला हीया भरी राइ राइ रोवण लग्गि॥'

स्वाधीनता की गरिमा का प्रतिपादन करने वाले दो दोहे देखिए —

'एकइ घन्नि वसंतडा एवड अतर काइ ।
सीह कवड्डी ना लहै गैंवर लाख विकाइ ॥
गैंवर गलइ गलत्थियो जहें खचै तहैं जाइ ।
सीह गलत्थण जे सहै तउ दह लाखि विकाइ ॥'

(एक ही वन मे रहने वाले सिंह और हाथी मे इतना अन्तर क्यो है कि हाथी एक लाख रुपये मे बिकता है जबकि सिंह की कौड़ी भी नही मिलती ?

उत्तर—हाथी गले मे बन्धन धारण किये हुए जहाँ घसीटा जाता है वही जाता है। यदि सिंह बन्धन स्वीकार करे तो दस लाख मे विके।)

क्षत्राणियो मे जौहर के लिए उत्सुकता का वर्णन देखिए—

'छूटि न जाई छेह माहे जउहर मे छलं ।
आइ आइ चडै उतावली पटराणी पागेह ॥'

वचनिका का अन्तिम पद्य भी द्रष्टव्य है —

'सातल सोम हमीर कन्ह जिम जौहर जालिय ।
चढिय खेति चहवाँण आदि कुलवट्ट उजालिय ॥
मुगत चिहुर सिरि मडि थप्पि कँठि तुलसी वासी ।
भोजाउति भुज वलहि करिहि करिमर कइलासी ॥
गढि लडि पडला गागुरणि दिढ दाखे सुरिताण दल ।
ससारि नाँव आतम सरिग अचलि वेधि कीधा अचल ॥'

इन उदाहरणो से यह स्पष्ट है कि सिवदास प्रतिभाशाली कवि था जिस का अनुकरण करने मे जगा जैसे मेधावी कवि ने भी गौरव समझा। सिवदास और जगा दोनो की कथाओ की रूप-रेखा मे साम्य है। राजपूत वीरो की मन्त्रणा, सतियो के जौहर, विष्णु भगवान द्वारा सूर्य-मडल-भेदी पुरुष-व्याघ्रो के सम्मान आदि के वर्णन दोनो ग्रन्थो मे एक-से है। जगा की वचनिका का 'आसीस वचनिका' भाग तो सिवदास की 'विरुदावली' का उद्धरण मात्र है। इस से स्पष्ट है कि जगा के हृदय मे सिवदास की वचनिका के प्रति क्या भाव रहे होगे। साहित्यिक प्रतिभा की दृष्टि मे जगा चाहे सिवदास से आगे निकला हो पर वह चला सिवदास के प्रस्तुत किये हुए मार्ग ही पर है। इस से सिवदास की गरिमा स्पष्ट है। उस की कीर्ति अमर है।

सिवदास के निर्दिष्ट मार्ग पर चल कर भी जगा साहित्यिक दृष्टि मे उस से कम नही रहा अपितु वह उस से आगे निकला। उस का काव्य चारण कवियो और पाठको मे सर्व-प्रिय रहा। उस को अनुपम सम्मान मिला।

(३) खिड़िया जगा का जीवन-चरित्र

वचनिका के लेखक खिडिया जगा के विषय मे बहुत कम विदित है। उसके विषय मे गवेषणा करने वालो मे प्रमुख तेस्सितोरी है। वचनिका मे जगा के जीवन-चरित्र अथवा वश-परम्परा आदि के विषय मे कोई विवरण नही मिलता न अन्यत्र ही कुछ मिलताहै। यहाँ तक कि सेमलखेडा (मीतामऊ—मालवा) मे रहने वाले उस के वशज भी उस के पिता के नाम तक को ठीक से नही बता पाये। परन्तु काव्य-जिज्ञासु तेस्सितोरी ने जगा का विवरण पाने का विशेष प्रयत्न किया और उस को सफलता भी मिली। चारणो के भाट राव ने वशावली के प्रसग मे जो सूचना तेस्सितोरी को दी थी उस के अनुसार जगा का वश-वृक्ष इस प्रकार है—
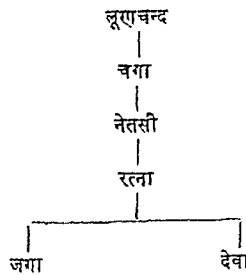
जगा के जीवन-चरित्र आदि के विषय मे भी तेस्सितोरी ने खोज करने का प्रयत्न किया परन्तु जगा के वशजो से कोई उपयुक्त सामग्री न मिल सकी। उन के अनुसार वह महाराज जसवन्तसिह् की सेवा मे रहता था। मारवाड मे उस के पूर्वजो को साँकडा नामक ग्राम शासन मे मिला था। शाहजहाँ ने जब जसवन्तसिह् को औरगजेब के विरुद्ध अभियान मे नियुक्त किया तो जगा भी उस के साथ युद्ध-भूमि मे गया परन्तु उस को योद्धाओ मे सम्मिलित नही किया गया। रतनसिह् ने अपने पुत्र रामसिह् के सरक्षण मे उस को भेज दिया और आज्ञा दी कि वह इस युद्ध की कथा को काव्य-रचना द्वारा अमर कर दे।

जगा के वशजो द्वारा बतायी हुई यह कथा वस्तुत कहाँ तक सत्य है यह विचारणीय है। इस कथा का निर्माण 'वचनिका अचलदास खीची री' के रचयिता चारण सिवदास की कथा के अनुकरण पर किया गया प्रतीत होता है। अचलदास खीची ने अपने पुत्र पाल्हणसी के सरक्षण मे चारण सिवदास को रखा था और उस को आज्ञा दी थी कि वह अपने काव्य की रचना द्वारा अचलदास के नाम को जगद्विदित कर दे। जगा के जसवतसिह् का आश्रित

होने के विषय मे सन्देह होने के लिए प्रमाण भी उपलब्ध है। वस्तुत जसवन्तसिंह की सेना मे एक अन्य जगा भी था जो युद्ध मे खेत रहा था। अत नाम साम्य के कारण ही यह भ्रम उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। जगा रतलाम के रतनसिंह की सभा का ही कवि रहा होगा। रतनसिंह की प्रशसा मे उस के कुछ अन्य कवित्त भी प्राप्य है जिस से स्पष्ट है कि वह रतनसिंह के जीवन-काल मे उस का सभा-कवि था। रतनसिंह के पश्चात् वह रतनसिंह के पुत्र रामसिंह का आश्रित रहा और उसी के आश्रय मे रह कर उस ने वचनिका की रचना की। रामसिंह कवियो का आश्रय-दाता था। उस के दरबार मे अन्य भी अनेक कवि विद्यमान थे। रतनसिंह के जीवन-चरित्र को ले कर 'रतन-रासो' नामक विशालकाय पिंगल काव्य का रचयिता कुम्भ-कर्ण भी रामसिंह के दरबार मे एक वर्ष रहा था ऐसा 'रतन-रासो' मे लिखा है। 'रामचरित्र' नामक व्रजभाषा काव्य का रचयिता रघुनाथ 'रसाल' तो रामसिंह का आश्रित था ही और उस ने उसी के आश्रय मे रह कर 'रामचरित्र' की रचना की थी। इन सब तथ्यो से यह स्पष्ट है कि खिडिया जगा रामसिंह तथा उस के पिता रतनसिंह का ही आश्रित था न कि जसवन्त-सिंह का। यदि वह जसवन्तसिंह का आश्रित होता तो जोधपुर के राज-परिवार के विषय मे भी कुछ काव्य-रचना करता। परन्तु उस की रचनाएँ केवल रतनसिंह के विषय मे प्राप्य है। इस लिए यही निष्कर्ष निकालना अधिक उचित प्रतीत होता है कि वह रतनसिंह का ही आश्रित था जसवन्तसिंह का नही।

लोक-प्रवाद के अनुसार रामसिंह ने जगा को दो गाँव आलनिया और डेरी पुरस्कार-स्वरुप दिये थे।

जगा के जन्म-समय और मृत्यु-समय के विषय मे कोई निश्चित सूचना प्राप्य नही है परन्तु सभवत उस की मृत्यु रतलाम मे ही हुई और यह माना जाता है कि रतलाम के राज-परिवार की श्मशान-भूमि शिवबाग मे उस की भी समाधि है।

(४) 'वचनिका०' की साहित्यिक विवेचना

वचनिका-कार की कर्म-भूमि

'वचनिका' एक ऐतिहासिक काव्य है। भारतीय वाङ्मय मे ऐतिहासिक काव्यो की सख्या बहुत अधिक है पर काव्य मे कल्पना-चमत्कार का प्राधान्य होने के कारण ऐसा बहुत कम साहित्य उपलब्ध होता है जिस से वास्तविक ऐतिहासिक तथ्यो का यथावत् विवरण प्राप्त हो सके। हिन्दी के प्रमुख ऐतिहासिक काव्य 'पृथ्वीराज-रासो' के अनैतिहासिक तथ्यो से हिन्दी साहित्य का प्रत्येक पाठक परिचित है। रासो के ऐतिहासिक महत्त्व पर प्रकाश डालने और उस की अनेक घटनाओ को इतिहास-सम्मत सिद्ध करने का प्रयास अनेक विद्वानो ने समय-समय पर किया है। पर आज तक उस की गुत्थी सुलझ न पायी और उस की ऐतिहासिकता आज भी सर्वथा विवादास्पद है। यही दशा अन्य अनेक काव्य ग्रथो की है जो वर्ण्य घटना के सम-सामयिक तथ्यो पर किंचित् प्रकाश तो डालते है पर अधिकाशत कल्पित अत्युक्ति-पूर्ण वर्णनो से ही ओत-प्रोत हैं। सौभाग्य से शाहजहाँ के सेनापति जसवतसिंह और औरगजेब तथा मुराद के मध्य धरमत के स्थान पर हुए युद्ध के प्रसग को ले कर कुछ ऐसे काव्य-ग्रन्थ भी विद्यमान है जो काव्य की दृष्टि से जितने प्रशसा के पात्र हैं उतने ही इतिहास की दृष्टि से भी महत्त्व-पूर्ण हैं। ऐसा ही एक काव्य-ग्रन्थ है वचनिका जो डिंगल के कवि-वर्ग के गले का हार भी रहा है और इतिहास की दृष्टि से भी अनुपम सामग्री से परिपूर्ण है। उस के ऐतिहासिक महत्त्व का प्रतिपादन तो यथास्थान होगा ही पर उस का यथाशक्य साहित्यिक मूल्याकन भी अपेक्षित है। चारण कवियो और काव्य-रसिको मे वचनिका का अत्यधिक मान और सत्कार रहा है। कदाचित् ही कोई प्रसिद्धि-प्राप्त चारण कवि या काव्य-भावक रहा होगा जिस के पास वचनिका की कोई हस्त-लिखित प्रति न हो। परम्परागत आजीविका के रूप मे कविता को प्राप्त करने वाले शास्त्र-कोटि के चारण कवियो के लिए वचनिका एक आदर्श पाठ्य ग्रथ रहा है। चारणो मे इस प्रकार सम्मान-प्राप्त काव्य को आधुनिक समालोचक की दृष्टि से देखने से पूर्व उस परिस्थिति, कर्म-भूमि और आदर्श का थोडा-सा परिचय देना आवश्यक है जिस का ध्यान रख कर वचनिका-कार को अपने भावक पाठको के समक्ष उपस्थित होना था।

जैसा कि पहले बता चुके हैं भारत मे सौती-साहित्य की एक दीर्घ-कालीन परम्परा रही है। युद्ध के समय रथ-सचालन और विरुद-गायन करने वाले तथा शान्ति के समय पुराण-वशावलियो का कीर्तन कर राजन्य-वर्ग का मनोविनोद करने वाले सूतादि का भारतीय वर्ण-व्यवस्था और व्यवसाय-नियोजन मे महत्त्व-पूर्ण स्थान रहा है। महाभारत-जैसे विश्व-कोशीय ग्रथ के निर्माण का श्रेय उसी परम्परा के एक सूत को है जिस ने परीक्षित-पुत्र जनमेजय को उस के पूर्वजो का इतिहास बताते हुए ऐसे अद्भुत महाकाव्य का प्रणयन किया

जिस को उपजीव्य बना कर पता नही कितने भारती-पुत्र महाकवि पद के अधिकारी बने। उस अद्भुत कवि सूत की वाणी मे वह चमत्कार था कि उस के जय-काव्य को केवल अपने पूर्वजो के आख्यानो के जिज्ञासु राजन्य-वर्ग से ही नही अपितु नैमिषारण्य-वासी लक्षावधि शौनकादि ऋषि वृन्द मे भी अपूर्व सम्मान प्राप्त हुआ था। निस्सदेह उस सूत की गीर्वाण-भारती से अमृत-रस की वर्षा होती थी।

सूत-मागध-वन्दीजन की यह परम्परा इतिहास के दीर्घ काल मे अविच्छिन्न रही। कवियो को आश्रय देना भी भारतीय भूपाल का अवश्यविधेय कर्तव्य रहा। विक्रम और भोज आदि की राज-सभाओ मे सहस्रो स्वर्ण-मुद्राओ का पारितोषिक पाने वाले और अमर काकली का गायन कर अमृत-पुत्र बनने वाले कवि-कुल-चूडामणियो की कीर्ति साहित्य-रसज्ञो मे सर्व-विदित है। यो विद्योपजीवी ब्राह्मण-वर्ग और विरुदोपजीवी सूत-वर्ग को राज-सभाओ मे एक साथ सम्मान प्राप्त होता रहा और स्वर्ण-मुद्राओ के प्रसाद से परितृप्त कवि-वर्ग ने काव्य-भारती के कुबेर-भडार मे अनन्त रत्न-राशि का सचय किया। मुसलमानो के भारत मे आने के समय तक कवियो का यह वर्ग वस्तुत दो भागो मे विभक्त हो गया था। एक वर्ग था ब्राह्मण कवियो का जिन की काव्य-भाषा देव-वाणी सस्कृत थी। दूसरा वर्ग था चारण-भाट आदि विरुद-गायक कवियो का जिन की रचनाएँ सस्कृतेतर लोक-भाषाओ मे हुई। राजस्थान सामन्ती परम्परा का दुर्ग था अत उस प्रदेश के राजन्य-वर्ग मे विरुद-गायक कवि-वर्ग को आश्रय और सरक्षण प्राप्त होना सर्वथा स्वाभाविक था।

पर कविता के राज-सभाओ मे गेय वस्तु बन जाने और कुछ जातियो का परम्परागत व्यवसाय बन जाने से अवाछनीय परिणाम निकलना भी निसर्ग-सिद्ध था। कविता-रचना के लिए आदर्श शास्त्रीय ग्रन्थो का प्रणयन हुआ और उन ग्रन्थो का ज्ञान प्राप्त कर के किसी भी प्रातिभ अथवा अप्रातिभ कवि के लिए कवि बन जाना सहज सभव हो गया। फलत कविता का विषय-क्षेत्र सीमित हो गया। शास्त्रकार ने उस की भूमि निश्चित कर दी। परम्पराएँ नियत कर दी। परिधि का अकन कर दिया। किस प्रसग मे किन-किन वस्तुओ का वर्णन किया जाये, किस रस की निष्पत्ति के लिए किन आलम्बनो का ग्रहण किया जाये, किन अगो की उपमाओ के लिए किन पशु-पक्षियो को उपमान बनाया जाये—ये सब बाते आचार्यों ने स्थिर कर दी। और कविता को जीविका का साधन मानने वाला कवि-वर्ग उन के ग्रन्थो का अध्ययन कर सर्वज्ञ बनने का दभ करने लगा। यद्यपि शास्त्र-कवि, काव्य-कवि और काव्य-शास्त्र-कवि मे 'उत्तरोत्तरोगरीयान्' की घोषणा करने वाले आचार्य मार्ग-प्रदर्शन करते रहे पर वस्तुत शास्त्र-कवियो की सख्या ही अधिक रही। भावुकता से ओत-प्रोत एव सहृदय-सवेद्य काव्य-धारा को प्रवाहित करने वाले प्रतिभा-सम्पन्न कवि तो शताब्दियो मे एक-दो ही उत्पन्न होते है। परिणामत हाथियो, घोडो, योद्धाओ, शस्त्रास्त्रो आदि के एक-से ही परम्परागत वर्णन सहस्रो वीर रस के ग्रन्थो मे मिलते हैं। एक-सी ही उपमाएँ और उत्प्रेक्षाएँ, एक-से ही नख-शिख वर्णन और एक-से ही ऋतु-वर्णन शृङ्गारी काव्यो मे भरे पडे है। उन सब का ही वर्णन कर कवि-कर्म की इति-श्री समझी जाती रही है। एक ही काव्य मे सभी रसो और सभी विषयो का एकत्र समावेश कर महाकवि बनने और विदग्ध पाडित्य का प्रदर्शन करने की लालसा सभी कवियो को रही है। अद्भुत लय मे अपने काव्य का

राज-सभा मे पाठ कर सभासदो का साधुवाद तथा पारितोषिक प्राप्त करने की कामना यदि विरुद-गायक कवि मे थी तो उस मे आश्चर्य की बात न थी। आश्रय-दाता राजा को अपने पाडित्य से अभिभूत कर, अपनी काव्य-मदिरा से उन्मत्त कर पारितोपिक देने के लिए उत्तेजित करने का प्रयत्न कवि-वृन्द मे था तो अस्वाभाविक न था। पर फल यह हुआ कि कविता का क्षेत्र सीमित हो गया। वर्णन के विषय नियत हो गये। शैली और शब्दावलि स्थिर हो गयी। नवीन उद्भावनाओ को प्रोत्साहन कम मिला। क्षणे-क्षणे नवता को उपेत होने वाली रमणीयता का ह्रास हो गया। 'यशसे, अर्थकृते, व्यवहारविदे, शिवेतरक्षतये' आदि प्रयोजनो वाली कविता 'अर्थकृते' तक सीमित होने लगी। वक्रोक्ति के स्थान पर सहस्रो कवियो की उच्छिष्ट परम्परागत उक्ति ही काव्य-जीवित बन गयी। 'रमणीयार्थ प्रतिपादक' शब्दावलि के स्थान पर शास्त्राभ्यास-प्रतिपादक रूढिगत शब्दावलि का प्रयोग हुआ। 'इष्टार्थ व्यवच्छिन्ना पदावलि' के स्थान पर इष्टार्थ-प्रदा पदावलि काव्य कहलायी। 'रसात्मक काव्य' के स्थान पर शास्त्राभ्यासात्मक काव्य कवि-लेखनी से प्रसूत हुए। शक्ति (प्रतिभा), निपुणता और काव्य-शिक्षा का अभ्यास—तीनो सम्मिलित रूप से काव्य के हेतु न रह कर अकेला काव्य-शास्त्र का अध्ययन ही काव्य-हेतु बन बैठा। काव्य की आत्मा ध्वनि न रह कर परम्परागत, पिष्ट-पेषित, परन्तु चमत्कार-विधायिनी शब्दावलि-मात्र रह गयी। सहस्रो वर्षों के सास्कृतिक विकास, शताधिक विदेशी जातियो के सम्पर्क और ज्ञान-विज्ञान की अनन्त वृद्धि के फल-स्वरूप वाल्मीकि-कालीन वेश-भूषा प्रयोग से सर्वथा उपेक्षित हो चुकी थी। सौन्दर्य के प्रसाधन, अलकार और आभूषण परिवर्तित हो चुके थे। नारी की रमणीयता के माप-मान कदाचित् बदल चुके थे। पर भारतीय कवि की दृष्टि मे वह तब भी कमल-लोचनी, मृग-नयनी और मीनाक्षी ही थी। पारसी कवि के साथ भारत मे बुलबुल का प्रवेश हुआ अवश्य, पर वह भी नायिका के कोकिल-कठ, खंजन-नेत्र और शुक-नास का अपहरण न कर सकी। भारतीय नायिका कम्बू-ग्रीवा, कदली-जघा, कलश-पयोधरा, विकट नितम्बिनी, गज-गामिनी, नाग-केशिनी, सिह-लकिनी ही यथावत् बनी रही। भारतीय कवि, विशेषकर राजसभाश्रित कवि, के लिए 'बाणोच्छिष्ट जगत्सर्वं' के स्थान पर 'वाल्मीकिव्यासोच्छिष्ट जगत्सर्वं' कहा जाये तो अनुचित न होगा। "नवसर्गगते माघे नवशब्दो न विद्यते" का विरुद धारण करने वाले कवि भी भारत-भूमि मे अवतरित हुए पर रीती साहित्य के प्रसग मे इस विरुद मे 'नवशब्दो न विद्यते' के स्थान पर 'नवसर्गो न विद्यते' कहा जाये तो भी कोई अत्युक्ति न होगी। वस्तुत विशाल रीती-साहित्य मे बहुत कम नवीन सर्ग, बहुत कम नूतन कल्पनाएँ, बहुत कम अभिनव उद्भावनाएँ दृष्टिगोचर होगी। सहस्रो कवि प्रसाद मान कर परोच्छिष्ट का भक्षण, चर्वित का चर्वण, पिष्ट का पेषण करते रहे। वाल्मीकि के मुक्त कानन मे स्वच्छन्द विहार करने वाली कविता-कामिनी राज-सभा मे दासी बनी तो उस को सभोचित आचरण और व्यवहार की शिक्षा लेनी पडी। अनुशिष्ट होना पडा। आपाद-मस्तक सभ्योचित वेशभूषा और अलकार धारण करने पडे। सामन्ती परम्पराओ, नियमो और रूढियो का यथावत् पालन करना पडा। निकृष्ट राजान्न पर आश्रिता होने पर उसे उच्छिष्ट-भोजिनी एव मान-मर्दिता होना पडा। वह वस्तुत कारागार के बन्धनो मे आबद्ध थी यद्यपि भ्रम-वश राज-मान्या होने के हर्ष से आप्लावित थी। यह थी कमनीय कविता-कामिनी की

दयनीय दशा । यह थी सामती परम्परा के कवि-वर्ग की कर्म-भूमि । ये थे उस के आदर्श । ऐसी ही कर्म-भूमि से कविता कर के कवि जगा को कवि-शिरोमणि कहलाना था । आश्रय-दाता राजा रामसिंह को काव्य-मदिरा से मत्त कर हर्षोन्माद मे पुरस्कार पाना था । अपने काव्य को चिर काल तक चारण-कवियो के लिए आदर्श ग्रन्थ सिद्ध करना था । इन परि-स्थितियो का ध्यान रख कर वचनिका का विवेचन करेगे तभी हम जगा की प्रतिभा की सच्ची परीक्षा कर सकेंगे । उस के काव्य के साथ न्याय कर सकेंगे । उस के उत्कर्ष की वास्तविकता समझ सकेंगे ।

वचनिका की कथा का सारांश

वचनिका का प्रारम्भ गुणग्राहक, गुणदाता, सिद्धि-रिद्धि-बुद्धि के दाता गणपति (गुणपति) की स्तुति से हुआ है । विष्णु, शिव, शक्ति और सरस्वती का स्मरण भी कवि ने किया है जिन की कृपा से महेशदास, दलपत, उदयसिंह आदि महापुरुषो के वंश मे उत्पन्न प्रतापी रतनसिंह का वर्णन करने की क्षमता कवि मे उत्पन्न हो सके । रावण और सूर्य के समान प्रचंड तथा कर्ण और अर्जुन के समान युद्ध-निपुण रतनसिंह के कृत्यो के वर्णन से पूर्व अधिकार-रूप मे उस के पिता महेशदास की बलख-विजय, जालौर-प्राप्ति आदि का भी संक्षिप्त वर्णन कवि ने उचित समझा है । इस वंश-परिचयात्मक भूमिका के पश्चात् उस ने वास्तविक कथा प्रारम्भ की है ।

दिल्ली का बादशाह शाहजहाँ रुग्ण हो कर मृत-तुल्य हो गया था । वह दिन-रात महलो मे ही रहता था । राज-सभा मे नही आता था । देश मे तज्जन्य चिन्ता व्याप्त हो गयी थी । उधर शाहजादो ने अपनी-अपनी अधिकार-भूमि मे स्वतन्त्रता घोषित कर दी थी और दिल्ली पर अधिकार करने चल पडे थे । पूर्व से शाहशुजा ने और दक्षिण तथा गुजरात से औरंगजेब तथा मुराद ने प्रस्थान कर दिया था । यह देख शाहजहाँ और दाराशिकोह कुपित हुए । उन ने शुजा के विरुद्ध जयसिंह और सुलेमानशिकोह को भेजा तथा शेष दोनो शाह-जादो के विरुद्ध केवल जसवंतसिंह को । बादशाह से सेनाधिपत्य प्राप्त कर कछवाहो, राठोडो, हाडो, गौडो, यादवो और सीसोदियो की हिन्दू-सेना और अनेक शाही उमरावो की यवन-सेना ले कर जसवंतसिंह आगरा से विदा हुआ । उस के साथ बन्दूको, तोपो, गोलो, हथगोलो की अनन्त राशि थी । हाथियो, घोडो और ऊँटो की विशाल पंक्तियो के अभियान से आकाश फटा जा रहा था । समुद्र विचलित था । पर्वत टूट कर समतल हो रहे थे । व्योम रेणु से आच्छन्न था । यो सुसज्जित जसवंतसिंह दोनो शाहजादो से लोहा लेने उज्जैन दुर्ग पहुँचा ।

व्यूह-रचना के लिए परामर्श करने को उस ने रतनसिंह को निमन्त्रित किया । परन्तु जब अजेय रतनसिंह उस से परामर्श करने पहुँचा मानो कर्ण दुर्योधन के पास गया हो अथवा लक्ष्मण राम के पास ।

इधर यम तुल्य दोनो शाहजादे भी आ डटे । उन के कटको ने कूच किया । गडगडाहट कर नगारे बजे । पौरुष-मद से मत्त भट हडबडाहट के साथ अश्वारूढ हुए । यम की सी दष्ट्राओ वाले यवन निशान गजाश्व-वाहिनी सहित उज्जैन की ओर उन्मुख हुए । काहल, नन्सान, तुरही, भेरी, नफेरी आदि के नाद से चतुर्दिक् को व्याप्त करते हुए, रत्न-जटित हेम-

छत्र धारण किये हुए शाहजादे मेघोपम गजो पर आरूढ हुए। गजराज गरजने लगे। त्रम्बाल बजने लगे। सेनाएँ ध्वजाएँ और नेजे फहराने लगीं। पृथ्वी मे धाक पड गयी। पुर, तरु, पर्वत टूटने लगे। नागेन्द्र काँपने लगा। सातो समुद्र मानो पृथ्वी पर उलट पड़े। शाहजादो की सेना भी उज्जैन आ पहुँची। दोनो पक्षो की सेनाएँ निकट दिखाई पडी। नरो-सुरो का मृत्यु-काल भी निकट आ गया।

औरगजेब और मुराद ने मिल कर जसवतसिह को एक पत्र लिखा—"राजन्! मार्ग छोड दो। हमे दिल्ली जाने दो। पिता के चरण-स्पर्श करने दो।" जसवत ने सोचा—"रोकने तो मुझ को भेजा ही है। जाने कैसे दूँ।" उस ने अपने सामन्तो को परामर्श के लिए एकत्र किया। सामत बोले—"आप जितना बुद्धिमान कौन है? पर फिर भी आप रतनसिह की सम्मति ले ले। वह व्यूह-युद्ध आदि का विदग्ध पडित है।"

जसवतसिह ने रतन को बुलाया। दोनो ने सोच-समझ कर व्यूह-नियोजन किया। दनावत बल्लू, गिरवर, पीथल, जगा, ऊदा, गोविन्द, बीठल, कर्ण, गिरधारी, माधो, रूपा आदि को यथोचित स्थान पर व्यूह के हरोल-चन्दोल-गोल आदि मे रखा गया। अनन्तर रतनसिह ने जसवतसिह से निवेदन किया—"आप मुझ को सेनापतित्व सौंपे और स्वय जोधपुर जा कर वश की रक्षा करे। मेरे यहाँ रहने पर हमारी लाज बनी रहेगी। हम निन्दा के पात्र न होगे। और आप का जाना नीति-सगत भी होगा। मानी दुर्योधन भी युद्ध-भूमि से चला गया था। कृष्ण काल यवन के सामने पलायन कर गये थे। अत आप का जाना भी कोई निंद्य कार्य न होगा। आप औरगजेब को सूचना दे दे कि रामायण-महाभारत जैसा युद्ध करेगे और मुझ को सेनापति नियुक्त कर स्वय मधुकर के साथ चले जाये। मैं शत्रु-सेना का सहार करूँगा।"

जसवतसिह ने युद्ध करने का निश्चय दृढ रखा और रतन को मर-मिटने की आज्ञा दे दी। रतन ने खड्ग ले कर सैनिको को सम्बोधन किया—"जिन को जीवन प्रिय हो वे घर चले जाये। जिन को स्वर्ग चलना हो वे मेरे साथ आये।" युद्ध की प्रतिज्ञा कर वह डेरे लौटा। उस ने स्नानादि पुण्य-कार्य किये और विप्रो को दान दिया। देव-दर्शन किया। होम किया। भोजन बनवाया। कवियो तथा वीरो को तृप्त किया। युधिष्ठिर के यज्ञ के उपमेय उस कृत्य से कवि लोग तुष्ट हो आशीर्वाद तथा जय-जयकार का उच्चारण करने लगे—"रतन चिरजीवी हो। उसका राज्य इन्द्र और समुद्र के समान स्थायी रहे।"

फौजो का भजन करने वाले, छह खण्ड खुरासान के यवनो का विध्वस करने वाले, अनेक वीर-कृत्यो का विरुद धारण करने वाले रतन ने सभा बुलायी। भगवान अमर जैसे वीरो को, बारहठ जसराज-जैसे कवियो को बुलाया। उन के बैठने से राज-सभा देदीप्यमान हुई। गुणियो ने प्रशस्ति-गायन किया। रतन ने मूँछो पर हाथ रख कर कहा—"रामायण-महाभारत की कथा आज तक प्रसिद्ध है। आज उस क्रम मे तीसरा महायुद्ध होगा। तोपो की गर्जना होगी। गजराज भिडेगे। हिन्दू-यवन लडेगे। हम उज्जैन के पुण्य क्षेत्र मे स्वामि-धर्म का पालन करेंगे। खड्ग-धारा व्रत का निर्वाह करेगे। शस्त्रास्त्रो से घोर युद्ध करेगे।" बारहठ जसराज ने समर्थन किया। इच्छा पूर्ण होने का आशीर्वाद दिया। परम वीर अमर और भगवान भी बोले—"भयकर युद्ध कर महारुद्र को शीश भेट करेगे। अप्सराओ को

करेंगे।" गिरधर ने कहा—"लड कर यावच्चन्द्र यशस्वी होगे।" साहिबखाँ ने कहा—"कर्तव्य-पालन और वश का नाम उज्ज्वल करने का उत्तम अवसर आया है। अत हम आत्म-त्याग करेंगे।" बारहठ ने कहा—"ठीक है। पर पहले वीरो के दोहो का उत्तेजक गायन करवाइये जिस से हमे उत्तेजना मिले। हमारे भी दोहे भावी वीर गायेंगे।" प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। अनेक वीरो के दोहे सुनाये गये। भटो मे उत्साह उमडा और वे अभियान को प्रस्तुत हुए। जसवन्तसिंह और औरगजेब ने परस्पर चुनौती भेज दी।

दोनो पक्षो से हाथियो का विशाल समूह युद्ध के लिए छूटा। इन गजो के श्याम वर्ण विशाल शरीर सिंदूर से रजित होने के कारण स्वर्ण पर्वत के तुल्य लग रहे थे। उन पर उडती हुई ध्वजाएँ और ढालें ऐसी फब रही थी मानो पतगें उड रही हो। उन के कपोल-पटो से मद-धारा अजस्र-वाहिनी हो रही थी। मद-मत्त हुए गजराज वृक्षो को उखाड कर, गढो को तोड कर भूमिसात् कर रहे थे। गज-वाहिनी मेघ-माला के समान थी। उस मे गज-दन्तावलि वक-पक्ति जैसी शोभायमान थी। गज-मस्तको पर प्रहार करती हुई खड्गें मानो सौदामिनी की दमक थी। शरीर पर चर्चित सिंदूर मानो इन्द्र-धनुष था। गज-घटो की ध्वनि को सुनने के लिए तीनो लोक सकौतुक थे। दोनो सेनाओ के अग्र भाग मे स्थित गजावलि ऐसी लग रही थी मानो अरावली पर्वत बीच मे आ कर डट गया हो।

विशाल वक्ष-स्थल और सुपुष्ट जघाओ वाले ऐराकी घोडे भी युद्ध-भूमि मे उपस्थित थे। उन की नासाएँ अद्भुत थी। कान तीखे थे। केशावलि सुन्दर थी। वे घोडे हाक सुन कर गज-दन्तो, सेलो, खड्गो आदि के समूह मे प्रविष्ट हो कर युद्ध-क्रीडा कर रहे थे। हाथियो की छाती पर चढ कर उसे चीर फाड कर अन्तडियाँ निकाल रहे थे।

ऐसे घोडो पर जीन कसे हुए कवच-धारी शूर युद्धार्थ प्रस्तुत थे। वे अग्नि मे पतग के समान युद्ध मे उमडे जा रहे थे। प्रचड आकाश को गिरने से रोके हुए थे। दुष्टो को मार कर खड-विखड कर रहे थे। वे वीर, खड्ग-प्रिय, त्यागी, शूरवीर, गो-विप्रो के पालक, आत्म-सयमी, क्षात्र-धर्म का पालन करने वाले और वेद-मार्गी थे। ऐसे वीर गज-दन्तो को तोड रहे थे। शत्रु-समूह का मर्दन कर रहे थे। घोडो की वाग पकड कर चला रहे थे। राजाओ को पछाड रहे थे। और हाथियो को भीम के समान घुमा कर फेंक रहे थे।

दूसरी ओर बलिष्ठ चगत्ता-वशी यवन थे। उन के बाल भूरे थे। मुख लम्बे थे। भुजाएँ यम की सी थीं। आँखें भयानक थी। वे गजो को मरोड देते थे। उन के कन्धे तोड देते थे। सिंहो को मुक्को से मार डालते थे। वे वीर हाक कर रहे थे। पृथ्वी भर के भोग उन के पास थे। जरी, बाफ, नीलक आदि के वस्त्र पहने थे। उन मे जोश का उफान था। स्वामी के लिए शरीर होम देने की अनुपम निष्ठा थी। उन के परिधान दस्ताने, टोप, मोजे, अस्थि-कवच आदि थे। उन के हाथो मे गुप्ती, कर्तरी, साँग, गुरज, गदा आदि शस्त्रास्त्र थे।

दोनो ओर के वीर भिड गये। अल्लाह्-अल्लाह् पुकारने लगे। कमधज कौरवो के समान थे तो शाहजादे पाडवो के समान। इधर 'हरिनाम' का उच्चारण हो रहा था तो उधर ठीक उस के विपरीत 'रहिमान' का।

हिन्दू तथा तुर्क युद्धार्थ दाँत पीसने लगे। भटो, घोडो, हाथियो और रथो वाली चतुरगिणियाँ ध्वजाएँ कसमसाने लगीं। नगाडो से सैधव राग बजा। धरा कम्पित हुई। कूर्म

व्याकुल हुए । नागराज थर्राए । समुद्रो ने मर्यादाएँ छोड दी । पर्वत टूटने लगे ।

युद्ध भूमि के इस वर्णन के प्रसग मे कवि ने एकत्र षट् ऋतु और नव रस का समावेश कर महाकवि कहलाने का प्रयास किया है । इस प्रकार नव रस, छह ऋतु समेत युद्ध-भूमि मे दर्शक के रूप मे विष्णु, इन्द्र, शिव, नाथ, सिंह, गण, गन्धर्व, योगिनी, यक्ष, किंनर, डाकिनी, शाकिनी, पशु, पक्षी आदि उपस्थित हुए । नौवत, निशान, रणतूर बजे । देवासुर देखने लगे ।

गोले, शर और बाण चलने लगे । नर, सुर, दानव और नाग भयाक्रान्त हुए । प्रलयाग्नि जल उठी । अग्नि-बाण चले । नक्षत्र-माला से भी बडे गोले उछले । वेगवान चमराले यवन चूर-चूर हो कर, क्षत-विक्षत हो कर धरा शायी हो गये । उधर राठोड भी कबूतर की तरह लेटने लगे । अरघट्ट घटी के समान रीती अप्सराएँ युद्ध-भूमि मे उतरी और वीरो का वरण कर वापस चली गयी । व्योम अन्धकार से आच्छन्न हो गया ।

इस प्रकार तीन प्रहर तक युद्ध हुआ । दैव के अवतार औरगजेब की विजय निश्चित प्रतीत हुई । चौथा प्रहर प्रारम्भ हुआ । राठोड सेनापतियो ने मन्त्रणा की "युद्ध शतरज का खेल है । राजा की रक्षा करो । नही तो बाजी हारेंगे । जसवन्तसिंह को यहाँ से भेज दो ।" जसवन्तसिंह चले गये । रतनसिंह ने सेनापतित्व सँभाला । भारत की लज्जा उस के भुजदण्डो पर अवलम्बित हुई । उस ने सूर्य को प्रणाम कर वैकुण्ठ की जिगमिषा सहित रण-भूमि मे प्रवेश किया । मस्तक पर मुकुट बांध कर, भुजाओ पर हिन्दू धर्म को धारण कर वह दूल्हा म्लेच्छ सेना पर झपटा । रणमाल, जोधा, सीसोदिया, हाडा, चौहान और झाला वीर उस के बराती बने । उस का पुत्र रायसिंह भी सिंह-गर्जना करने लगा । मारवाड के वीर ऐसे भिड पडे मानो सिंह भिड पडे हो । योगिनियाँ मगल-गीतो का गायन करने लगी । शीश-रूपी अक्षत ख-मण्डल मे उडे । नारद और ब्रह्मा ने वेद-पाठ किया । अप्सराओ ने वीरो का वरण किया । वे घुँघरू बजा कर नाचने लगी । युद्ध के वाद्यो मे ताल मिलाने लगी । तलवारे ऐसे बजी, मानो नर्तक डडारास खेल रहे हो । भयकर युद्ध करते हुए, शत्रुओ का विनाश करते हुए, गज-घटा को विदीर्ण करते हुए, मुगलो को खण्ड-विखण्ड करते हुए, अप्सराओ का वरण करते हुए सूजावत मधुकर, गोवर्धन, वल्लू और उसके दो पुत्र, वीठल, वामन, गोपाल-पुत्र भीम, केशावत गोपाल, जगा हृदमालोत, सोनगिरा माधोदास, जैतावत पीथल, जगराज, द्वारकानाथ, किशन केलपुरा, भाटी कुम्भकरण, साँवल रूपावत, पचायण भाऊ, रामा, सुन्दर, अज्जा, दलपति, खान, दूदावत रतना, धर्मा, मथुरा कावा, जीवा तँवर, जीवा नाई, भगवाना थोरी, भूरिया थोरी आदि के खेत रहने पर भी अकेला रतनसिंह वृक्ष-विहीन पर्वत के तुल्य खडा रहा । दोनो शाहज़ादे सेना एकत्र कर उस पर टूट पडे । रतन भी रण-वाद्यो की ध्वनि सुन हर्षोन्मत्त हो रहा था । वह हाक मार कर रण-स्थल मे अवतरित हुआ । वह औरगजेब से जा भिडा । वीरो के कलेजे और कन्धे खण्ड-विखण्ड हुए । धड कट कर छिन्न-भिन्न हुए । ढालो की खडाखड ध्वनि हुई । तलवारें झडाझड बजी । यवन तावडतोड भागे । उछलते हुए मुंड दशो दिशाओ मे बिखरे । रुद्र ने दौड-दौड कर उनको चुना । खान लोग रण-क्षेत्र मे ऐसे गिरे मानो नट गिरह खा रहे हो । भूखे मांस-भक्षी जीव, शाकिनी, डाकिनी, प्रेत, पिशाच आदि अपने भक्ष्य ढूंढने लगे । ऐसी परिस्थिति मे रतन युद्ध-भूमि मे धराशायी हुआ । उस के शरीर पर खड्ग के अस्सी घाव थे । तीन सौ बाण और छब्बीस सेल उस के

शरीर मे विद्ध हुए थे। रतन के गिरते ही युद्ध समाप्त हुआ। विजय-दुन्दुभी बजी। सूर्य का रथ यह दृश्य देखने को रुक गया।

रतन के साथियो ने उस के छिन्न अगो को एकत्र चुना। बाणो और भालो के खण्डो से चिता बनायी और रतन के नर देह को जलाया। उस को अमर देह प्राप्त हुआ। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र और देवो के समूह उस के सम्मुख उपस्थित हुए। इन्द्राणी ने मगल-गायन किया। देवो ने रतनसिंह से निवेदन किया—"विमान पर पैर रखिए। वैकुण्ठ चलिए।" रतन ने उत्तर मे प्रार्थना की—"मैं इस युद्ध का प्रमुख सेनापति होने के नाते कहना चाहता हूँ कि इस युद्ध मे जितने वीर काम आये है उन को पुनर्जीवित कीजिए। फिर बारह दिन यहाँ पडाव कीजिए जितने मे सतियाँ भी अग्नि-स्नान कर आ जाये।" विष्णु भगवान् ने स्वीकार किया। बोले—"ठीक है। बरातियो के बिना दूल्हा कैसे चले।" फिर विश्वकर्मा को आज्ञा दी कि वैकुण्ठ जैसा ही एक नगर पृथ्वी पर बसाओ और उस का नाम रतनपुर रखो। आज्ञा का पालन हुआ। सर्वगुणोपेत, साधन-सम्पन्न, कला-मडित नगर बसा। विष्णु भगवान् ने सभा की। रतन को अपने पास बैठाया। स्वय मोर-मुकुट, विशाल कुण्डल, कमल-लोचन, मदन-मोहन रूप धारण कर विराजमान हुए। शीतल-मन्द-सुगन्ध पवन प्रसरित हुआ। रम्भादि अप्सराएँ नृत्य करने लगी। छह रागो, छत्तीस रागिनियो, सप्त स्वरो मे सगीत-ध्वनि उत्पन्न हुई।

उधर रतन की मृत्यु का दु खद समाचार उस की रानियो के पास पहुँचा। उस की चार रानियाँ—अतिरूपदे, रयनमुखदे, गुणरूपदे और सुखरूपदे सती होने को प्रस्तुत हुई। उन ने गगाजल से स्नान किया। सुगधित हीर-चीर-चामीर पहन कर, पान-कपूर खा कर, शृङ्गार-सज्जित हो कर दान-पुण्य किया। फिर सरोवर-तट पर चिता बना कर जलने को चली। वे षोडश शृङ्गार से सज्जित हो कर जा रही थी। उन के चरण और कर कमल-तुल्य थे। कटि सिंह की सी। जघाएँ कदली-स्तम्भ जैसी। कण्ठ कोकिल के से। दाँत अनारकुली जैसे। ऐसी नख-शिख-शोभिता सुन्दरियाँ अपने चारो कुलो का उद्धार करती हुई शरीर त्यागने चली। जनता टकटकी लगा कर देखने लगी। वे घोडो पर सवार हो कर सरोवर पर पहुँची। पवित्र स्थान पर उतर कर उन ने पार्वती का पूजन किया। वर माँगा—"जन्म-जन्मातर मे यही पति दीजिए और कुछ नही चाहती।" फिर चन्द्र-सूर्य को नमस्कार कर अपने वशजो को अन्तिम शिक्षा दे अग्नि मे प्रविष्ट हुई। हाहाकार पुकार हुई। दर्शको ने 'राम-राम' कहा। घडी-भर मे सर्वत्र शाति छा गयी। सतियो के लिए विमान पहुँचे। सुरागनाओ ने उन का स्वागत किया। आकाश-वाणी ने रतन को बधाई दी। उमा, सावित्री और श्री ने भी सुन्दरियो का स्वागत किया। हर्ष-ध्वनि हुई। नया स्नेह बढा। रतनसिंह सतियो से उन के प्रासादो मे जा मिला। उस का यश ध्रुव-स्थायी हो गया।

वस्तु-विवेचन

इस कथा-सार से स्पष्ट है कि कवि के सम्मुख एक इतिहास-सम्मत घटना थी जिस का उसे वर्णन करना था और अपने आश्रय-दाता रामसिंह के पिता रतनसिंह की कीर्ति को अमर करना था। पर कवि का कर्तव्य साधारण जय-काव्य के लेखक कवि से भिन्न था। 'जय-

काव्य' के नायक कोटि के पात्र तो युद्ध मे विजयी हुए थे पर वचनिका के आदर्श पुरुष जसवत-सिह और रतनसिह युद्ध मे पराजित हुए थे। एक रण-क्षेत्र से पलायन कर गया था तो दूसरा वही क्षत-विक्षत हो धराशायी हो गया था। इस प्रकार पराजितो की कीर्ति का गायन करना कवि का उद्देश्य था। यह कर्त्तव्य कुछ कठिन अवश्य था। विशेषकर पलायित जसवतसिह के कलकित चरित्र की रक्षा करना तो अत्यन्त कठिन था पर कवि ने अपनी कल्पना-शक्ति, वर्णन-क्षमता और अभिव्यक्ति-कुशलता से इस कष्ट-साध्य कार्य को सिद्ध किया।

वचनिका एक प्रबन्ध काव्य है। उस मे एक कथा की अटूट शृङ्खला आद्योपान्त अप्रति-हत गति से व्याप्त रही है। चारणी-साहित्य के विशाल भण्डार मे ऐसे सहस्रो ग्रन्थ मिलेगे जिन मे दीर्घ वर्णन, पाडित्य-सूचक विवरण और भाषा-अलकार के चमत्कार भरे पडे हैं पर उन सब के कारण कथा-सूत्र छिन्न-भिन्न ही हुआ है। कथा मानो उन वर्णनो को एक सूत्र मे बद्ध करने के लिए अति दुर्बल सूत्र का काम कर रही है। वे काव्य 'अनुज्झितार्थसबध प्रबधोदुरुदाहर' के निकष पर कसने पर खरे नही उतरते पर उसी परपरा मे पले हुए वचनिका-कार की कला मे वह दोष नही है। वर्णन इस मे भी है पर कही निरर्थक नही। न इतने लम्बे है कि पाठक कथा-सूत्र को भूल जायें, न इतने असम्बद्ध कि मूल कथा मे हठात् जड दिये गये प्रतीत हो। छोटे-से काव्य मे महाकाव्य के निर्दिष्ट तत्वो का समावेश करने का यत्न भी कवि ने किया है। पर इतने छोटे आकार के सर्ग-हीन काव्य मे उन सब तत्वो का उपादान हो सकना कहाँ तक सम्भव हो सकता था। फिर भी खण्ड-काव्य की दृष्टि से वचनिका 'दुरुदाहर' कोटि का ही है।

कथा का प्रारम्भ गणेश, सरस्वती आदि देवो के स्मरण-रूपी मगलाचरण से हुआ है। फिर नायक की कीत्तिमती वश-परम्परा का उल्लेख है। उस के पिता के वीरोचित अनुपम कृत्यो का उल्लेख है —

केवियाँ दल तडल जेणि किया। दन सासण लक्ख गजेंद्र दिया।
कमधज्ज करणगिरि राज करे। विधि एणि गयौ त्रग क्रित्ति वरे।

ऐसे कीत्तिमत पिता के तेजस्वी पुत्र रतन के कीर्ति-गायन की इच्छा कवि का प्रयोजन है। इस प्रकार मगलाचरण, रूढ-वंशी नायक के यशस्वी वश के वर्णन और काव्य-प्रयोजन के निर्देश के पश्चात् कवि ने मूल कथा का प्रारम्भ किया है।

शाहजहाँ की अप्रकृत अवस्था और तज्जन्य सर्वत्र-व्याप्त चिंता का वर्णन कर शुजा, मुराद और औरगजेब के स्वतन्त्रता घोषित कर देने तथा दिल्ली विजय के लिए चल पडने का उल्लेख है। उधर उन का दमन करने के लिए जयसिह और जसवतसिह की नियुक्ति होती है। जसवतसिह के कर्त्तव्य की दुष्करता का निर्देश कवि ने तुलनात्मक शब्दो मे बहुत सुन्दर रीति से किया है

सुज्जा दिसि' जैसिघ सझि दुज्जौ मान दुदाह।
पोतौ साथै परठियौ पूरब धर पतिसाह॥
साहिजादाँ बिहु' साँमुहौ एक जसौ अणभग।
माँडण ग्रमपति माँडियौ जोध कलोधर जग॥

अकेले शुजा के विरुद्ध दो सेनापति भेजे गये—जयसिह और सुलेमान—जब कि दो शाहजादो

के विरुद्ध अकेला जसवतसिंह । जसवतसिंह के कार्य-क्षेत्र की दुर्गमता का यह निर्देश कवि की वर्णन-कुशलता का परिचायक है । पलायन कर जाने वाले जसवतसिंह के चरित्र को कलकित होने से बचाने के लिए कवि ने यही से प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया है ।

जसवतसिंह अनेक शाखाओ के क्षत्रिय वीरो की तथा यवन उमरावो की सेना ले कर चला । उस सेना के चलने पर चतुर्दिक् जिस वातावरण की सृष्टि हुई उस के वर्णन मे उपयुक्त अलकारो, समुचित शब्दो और यथेष्ट कल्पनाओ का प्रयोग कर वीर रस की भावी निष्पत्ति के लिए अच्छी भूमिका प्रस्तुत की गयी है

वहन्ती इसी पथि ओप्पै वहीर । नदी हेम थी ले चली जाँणि नीर ।
कतारां कठट्ठे चले जुग काळा । वहै वादला जाणि भाद्रव्व वाळा ।
फटी आभ कै जाणि सामंद्र फट्ट । प्रियम्मी गिर यु व फिज्जै पहट्ट ।
वहै उप्पट थट्ट राठौड वाळा । नदी सोसिजै नीर निव्वाण नाळा ।
वहतां तुरां पाय पायाळ वाया । छिलै रज्ज रैणां उडै व्योम छाया ।
धरा सेस धूजै डिगै धू धडक्क । चढै लक चक्क डरै च्यार चक्क ।

ऐसे वातावरण को उत्पन्न करता हुआ जसवतसिंह दोनो शाहजादो का सामना करने उज्जैन पहुँचा ।

कथा-सूत्र मे अब तक रत्नसिंह का प्रवेश नही था । पर कवि का प्रयोजन तो वस्तुत उसी के चित्रण का है । काव्य का नायक तो वही है जिस की कीर्त्ति को अमर करना है । अत रतन को रग-भूमि मे लाने के लिए कवि ने उपयुक्त अवसर की अवतारणा की है

वधव रतन बुलावियौ जसै रचण रिण जग ।

और जसवतसिंह-रतन ऐसे मिले मानो—राम लखमण राठवड फिर दुज्जोण करन ।

रतन के रूप और कृत्यो का वर्णन कर कवि ने उसका परिचय कराया

काळै अजुवाळौ कियौ आवि दळां अवियट्ट ।

'काळै' और 'अजुवाळौ' शब्दो का प्रयोग कर कवि ने विषम अलकार का प्रयोग किया है । विपरीत कारण से कार्य की उत्पत्ति करवायी है ।

उधर शाहजादे भी ससैन्य आ ही गये । उन की सेना की विकटता और दुर्धर्षता का वर्णन भी कवि नही भूला है । उसे काव्यादर्श का यह सूत्र विदित है

वशवीर्यश्रुतादीनि वर्णयित्वा रिपोरपि ।
तज्जयान्नायकोत्कर्षवर्णन च धिनोति न ।

प्रतिनायक के बल-वीर्य का समुचित वर्णन कर उस पर विजय प्रदर्शित कराने पर ही नायक का उत्कर्ष सिद्ध होता है । इस प्रसग मे तो प्रतिनायक के अजेय बल का वर्णन करने की और भी आवश्यकता थी क्योकि नायक की विजय भी नही हुई । उस की पराजय को निष्कलक रखने के लिए प्रतिनायक की अद्वितीय अपराजेय शक्ति का वर्णन परम अनिवार्य था । कवि ने इस दायित्व का ठीक पालन किया । यहाँ भी और आगे भी । वातावरण का चित्रण भी कवि नहीं भूला

कटकां विहुँ हुइ कूच गडगड त्रँबागळ गुडै ।
हडवड भड हुइ हैंवरां चढिया पौरस चूँच ।

वहरहि हिळै वहीर पायक ओठक पडतळाँ।
मिळिवा किर चाली महण नवसै नदि ले नीर ॥
. . . . .

रचि फौजाँ रौद्राळ हैँवर नर वहता हसति।
माँडण इन्द्र झड़ माँडियौ वादळ किर वरसाल।
. . . .

रलि काहुळि त्रवाळ तूरहि भेरि नफेरि त्रहि।
.. . .

घूवाँ रव दव धोम खेहा रव डवर खरा।
क्रमतै रौद्रायण कियौ व्योम विचाळै व्योम।

एक से बढ कर एक कल्पना करते हुए कवि शाहजादो की सेना की विकटता का वर्णन करता जाता है और दोनो सेनाओ को आमने-सामने खडी करवा देता है। सेनाओ के ये वर्णन न तो इतने लम्बे है कि पाठक ऊब जायें और कथा-सूत्र को भूल जायें, न इतने साधारण कि वल की विकटता का आभास न हो।

वीर रस के वातावरण का यह चित्रण कर कवि अपनी राजनीति-पटुता का परिचय देता है। औरगजेब और मुराद वहुत चातुर्य भरा पत्र लिखते है। पत्र मे सम्पूर्ण भाव को वहुत ही सक्षेप मे परन्तु कुशलता से कवि ने व्यक्त किया है

"राजा राह म रोकि तूं साहि लगै दे जाण ॥
राडि म करि इक तरफ रहि आगे पीछै आव।
जोइ दिली फिरि जाइस्याँ परसि असप्पति पाव ॥"

यही भाव 'रतन-रासौ' कार ने विशाल पत्र के रूप मे चित्रित किया है और अपने पत्रकला-कौशल का परिचय दिया है पर वहाँ पाठक पत्र पढते-पढते कथा-सूत्र को भूल जाता है और अर्थ-सम्वन्ध उज्झित हो जाता है। पत्र पा कर जसवतसिंह नीतिज्ञता का परिचय देता है। वह सामतो को मन्त्रणार्थ बुलाता है। सामत 'राज जितरौ कुण जाणै' कह कर भी रतन से परामर्श करने का मत प्रकट करते है। यो कवि जसवत की नीतिज्ञता का परिचय देने के साथ-ही-साथ रतन के नायकत्व का एक वार पुन प्रतिपादन करता है। जसवतसिंह के सेनापति होने के ऐतिहासिक तथ्य और रतन के नायक होने की कवि की कामना—इन दो तत्त्वो का यह सुन्दर सामजस्य है।

जसवत और रतन मन्त्रणा करते है और व्यूह-योजना वनाते हैं। विविध वीरो की यथेष्ट स्थान पर स्थापना करते हैं। यहाँ तक कथा-सूत्र मे जसवतसिंह की प्रमुखता रहना एक तथ्यात्मक आवश्यकता थी। पर शनै. शनै रतनसिंह नायकत्व का ग्रहण कर रहा था। उस ने जसवतसिंह से निवेदन कर दिया—'आप मुझ पर युद्ध का भार छोड कर स्वदेश लौट जाये और कुल की रक्षा करें। मैं आप के और अपने कुल के यश की रक्षा करूँगा। आप का जाना कोई कलक की वात नही, नीतिज्ञता है। कर्ण के मरते ही दुर्योधन भाग गया था। कृष्ण काल यवन के आगे पलायन कर गये थे। इस कथन मे नीतिज्ञता ही का परिचय नहीं जसवतसिंह के भावी पलायन के कलक को छिपाने का यत्न भी है।

युद्ध के लिए कृत-निश्चय रतन ने अपने साथियो का आह्वान किया—

"जीवै तिके भलाँ घरि जावौ । आवै स्रगि सो साथे आवौ ।"

फिर वह अपने डेरे गया और वहाँ स्नान, दान आदि पुण्य कृत्य किये । विप्रो को भोजन कराया । कवियो और वीरो को तुष्ट किया । तुष्ट कवियो ने जयजयकार किया । आशीर्वाद दिया । यह आशीर्वाद वचनिका-बद्ध है, तुकात्मक गद्य है । इस मे कवि की अपनी कल्पना नही । अचलदास खीची की वचनिका के 'विरुदावली' अश का उद्धरण मात्र है । पैतृक-सम्पत्ति के रूप मे कविता को पूर्वजो, पूर्व-गुरुओ और पूर्व-सूरियो से प्राप्त करने वाले चारण-भाटो मे इस प्रकार का वर्ण-विलोडन साहित्य-चौर्य नही माना जाता था । वह रूढि-सम्मत था ।

आशीश-वचनिका के पश्चात् रतन की राज-सभा का गद्य-बद्ध वर्णन है । अर्थ-गर्भित और अनुप्रास-मडित शब्दावलि की सुन्दर योजना है । अनेक विरुद-राजित रतनसिह सामन्तो को पान का बीडा देता है, युद्ध के लिए प्रस्तुत होने का प्रतीक समर्पित करता है । रामायण-महाभारत के युद्धो का उल्लेख कर भावी तृतीय महायुद्ध के लिए कटि-बद्ध होने के लिए उत्तेजनापूर्ण शब्दो मे आह्वान करता है—"उज्जेणि खेत धारा तीरथ धणी रौ काम खित्री रौ धरम साचवीजै । लोहाँ रा वोह सेलाँ रा धमका लीजै । खाँडाँ री खडाखडि झडाझडि दडाहडि खेली जै ।" "पुरजा पुजा हुई पडी जै । तौ वैकुठ चढीजै ।" बारहट जसराज समर्थन करता है । भगवान तथा अमर और भी अधिक उत्तेजक शब्दावली मे अनुमोदन करते हैं "महारुद्र नै सिर पेस कराँ । अपछरा वराँ । देवता स्याबास कहिसी । बात रहिसी ।" गिरधर गागावत ने भगवानदास बाघौत का कथन उद्धृत करते हुए और भी अधिक उत्तेजनापूर्ण भाषा का प्रयोग किया । कुमार रायसिह ने भी समर्थन किया । बारहठ ने सम्मति दी कि वीरो की विरुदावलि से पूर्ण दूहे सुने जाये जिस से 'पोरिस चढै । सीग अहमड आडै ।' दूहे सुने गये । और

'मारू भड चढिया मछरि करिवा भारथ कत्थ ।
राग वडाला वज्जियाँ सको सचाला सत्थ ।'

सिलहखाने खोले गये । वीरो की सेनाएँ दोनो ओर से सन्नद्ध होकर चल पडी । पर अग्र भाग मे दोनो सेनाओ ने गज-वाहिनी को रखा । यही परम्परागत रीति का अनुसरण कर कवि ने हाथियो, घोडो और वीरो का अलकारपूर्ण भाषा मे वर्णन प्रारम्भ किया । सिन्दूर-चर्चित श्याम वर्ण वाले गजराज सन्नद्ध होकर चले । वे सुमेरु पर्वत के तुल्य शोभित हुए । उन की मद-धारा मेरु से प्रवाहित नदी के समान बह चली । इस वर्णन की भाषा और शब्दावलि अभीष्ट वातावरण की सृष्टि मे सफल है । विषय के अनुकूल है । रसोत्कर्ष विधायिनी है—

मुल अट्ठ चल्लै गिर गज्ज काला । मँडै इन्द्र जाणँ घटा मेघमाला ।

. . . .

दसा गज्ज घटाल घटा अपार । त्रिण्हे लोक कौतिक्क देखत स्यार ।

शब्द-चयन और वातावरण—दोनो ही दृष्टियो से यह वर्णन हृदय-ग्राही है । यही स्थिति घोडो के वर्णन की भी है । यथा

लाल अजल' सुरंग पीयल्ल पव्य । उभै जोडि राजीव नासा उअव्व ।

. . .

विरण रेह तेजाल् वका विडंगं। कवाण गुण डाणि भल्लै कुरग।

शूरो के वर्णन मे भी वही सफलता देखिए

पड़ता दियै अत्भ थभा प्रचंडं। खलां मारि संगे करै खंड खड।

मरंता न धारै सन्नाजुद्ध माया। करै काच सीसी जिसी टूक काया।

प्रतिपक्षी के पराक्रम का वर्णन और भी अधिक विस्तार से कर के कवि ने काव्य-कला-चातुर्य का प्रदर्शन किया है .

भयाणक चीवा जिके रोम भूरा। पखे पार वीवा हिलै थट्ट पूरा।

प्रलंबा मुखी रवस चवखी परवखी। भुजां जम्म जेहा बली लब्ब भक्खी।

मरोडै गजां कध तोडै मरट्। रहच्चै जिसा सिघ मुक्की रवट्।

कमोनै गुण औस टकी कवाण। वली भीम वस्थ कली पत्थ वाण।

• , • • • •

भुथाण जुवाण कवाण सभल्ल। मिलै मीर ज.दा इसा जुज्झ मल्ल।

इन वर्णनो मे अर्थ-गौरव भी है, पद-लालित्य भी। उत्साह वर्धन की क्षमता भी है, अनुज्झित अर्थ-सम्बन्ध भी। ये वर्णन कथा-सूत्र मे दावक नही, साधक है। रस-भग के कारण नही, रसोत्कर्ष के विधायक है।

वीरो के इस वर्णन के अनन्तर कवि ने अपनी निष्पक्षता की सूचक उपमा का प्रयोग किया है

कैरव जिम आण कमंध पाडव जिम पतिसाह।

यां हरि नाम उचारियौ वां रहिमान अलाह।

यहां कमधजो को कौरवो की उपमा और शाहजादो को पाडवो की उपमा केवल अनुप्रास का दृष्टि से नही जेता और जित के सम्बन्ध की दृष्टि से भी है जिस की पुष्टि अगले दोहे मे हुई है। 'हरिनाम' और 'रहिमान' शब्दो की परस्पर विपरीत ध्वनियां दो विरोधी दलो के धर्म की उत्तम व्यंजना करती है। सेनाओ के युद्धार्थ प्रस्तुत होने पर ब्रह्माड की क्या अवस्था हुई उसका वर्णन देखिए—

च्यारि चवक नव खंड हिलै फौजां गज डवर।

कसमस्सै कौरम सेस नागेन्द्र सलस्सलि।

सात समंद गिरि आठ ताम धर मेर टलट्टलि।

उस विकट वाहिनी का वर्णन करते-करते ही कवि ने अवसर निकाल कर षट्-ऋतु-वर्णन और नव-रस-वर्णन की परम्परा का भी पालन किया है। वस्तुत न तो इस प्रकार ऋतुओ का वर्णन सभव है न रसो की निष्पत्ति। केवल उपमाओ के आधार पर इन सभी का एकत्र समावेश कोई सभव वस्तु थोडे ही थी। पर कवि ने सोचा क्यो न शास्त्रीय विधान का परिपालन करूँ। क्यो एतद्विषयक असमर्थता प्रकट करूँ। इसी आग्रह के फल-स्वरूप गद्य-मयी भाषा मे कवि ने उस सब की उत्पत्ति करना चाहा जो असभव सभावना थी। वैसे यह गद्य-खड शब्दावलि, अलकार-योजना और विषय-विस्तार की दृष्टि से किसी प्रकार हीन नहा पर जिन वर्णनीयो का वर्णन अपेक्षित था उन के साथ इस प्रकार न्याय नही किया जा सकता। वैसे कवि धन्यवाद का पात्र है कि उस ने कथा का सूत्र नही तोडा। साधारण कवि

होता तो अपने काव्य को सर्वांगपूर्ण वनाने के लिए सभी तरह के वर्णन करता। कथा-सूत्र के साथ सम्बन्धासम्वन्ध का ध्यान भी न रखता। जगा को विदित था कि उस की कथा-वस्तु मे इन सब का समावेश कथा का प्रवाह भग करेगा तथा अनावश्यक भार सिद्ध होगा। उस ने वडी चतुराई से उस अवाछनीय क्षति का परिहार किया और शास्त्रकार निर्दिष्ट परम्परा को भी नही टूटने दिया। अत यह प्रसग कवि की अकुशलता का परिचायक नही, प्रवीणता का द्योतक है।

इस के वाद के दोहे मे शब्दावलि का अद्भुत चमत्कार है

सझि आरावाँ समसमा समासमा सझि सूर।
समा समा दल सालुलै त्रहै त्रँबाला तूर॥

तदनन्तर "वह गोला सर बाण", "लागौ बरसवा गोला सर गैणाग", "गडा सवाया गण-णिया नाखत जाणि निहग" आदि उक्तियो द्वारा बरसती हुई गोलियो का वर्णन है, "चमराळा हुय चूर वेगाला तेजी वडा", "खु दालिम करि खोघ वसुधा उप्परि वाजिया" आदि द्वारा युद्ध-रत योद्धाओ का वर्णन है और "नर सुर दानव नाग धर हर मुर भुवणे थया", "आहिव घोर अधार" आदि द्वारा वातावरण का चित्रण है। उत्प्रेक्षाएँ भी द्रष्टव्य है—"ऊडन्ते ऊडाडियो आरावे असमाण", 'लागि गडा सिर लोटिया जाणि कबूतर जोध' "वहती की दल वाहतां वैकुंठ वाली वाट" आदि। पर इन से भी उत्तम कल्पना है

नरवर सूर निगेम भारथ मधि रीती भरी।
आवै जावै अपछरा जगि अरहट घडि जेम॥

परन्तु इस भयकर युद्ध का परिणाम जो कुछ हुआ वह पाठको को विदित है। विजय की आशा-लता म्लान होने पर जसवतसिंह को पलायन करना पडा था। यह किसी भी रूढ-वशी क्षत्रिय के लिए कलकमयी घटना थी। कवि के सम्मुख धर्म-सकट का प्रसग था। इस घटना पर आवरण कैसे डाला जाये। पर इस कठिन कर्म मे भी कवि सफल रहा है। उस ने गद्य-बद्ध वचनिका मे पहले औरजेब की अजेयता का वर्णन किया " **जिण आगै जम-राणौ विमुहा खडै।**" फिर जसवतसिंह की प्रशसा की "**तिण सू तीन पौहर हाथू के महा-राजा जसराज ही लडै।**" यो जसवतसिंह को अद्वितीय वीर बताया है। उस के अनन्तर राजनीतिज्ञता का उल्लेख किया है "**सतरज रौ ख्याल मडियौ। राजा राखौ। राजा रखियै वाजी रहे।**" "**ओछौ वाढौ। जसराज काढौ।**" यो इस घटना को नीतिज्ञता आदि के आवरण से आच्छन्न कर बहुत सक्षेप मे '**वागाँ झालि जसराज वलिया**' कह कर ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना को समाप्त कर दिया और '**भारथ रा भरभार रतनागिर भलिया**' कह कर पाठको का ध्यान जसवतसिंह की ओर से हटा कर रतनसिंह की ओर आकृष्ट कर दिया। एक दोहे मे फिर इस घटना का सक्षिप्त उल्लेख कर रतनसिंह के सेनापति पद सँभालने और भावी कर्म-क्षेत्र का विचार करने आदि का वर्णन कर के कवि ने जसवतसिंह की घटना को उपेक्षित विस्मरणीय घटना वना दिया। काव्य मे मर्म स्थलो की पहचान का यह अच्छा उदाहरण है।

आगे रतनसिंह निर्द्वन्द्व नायक वन जाता है। पलायित जसवत की अवशिष्ट सेना का स्वामित्व धारण कर हिन्दू वीरो की लज्जा का रक्षक वनता है। पौरुष से आप्लावित,

उल्लास से आविष्ट और युयुत्सा से प्रेरित हो कर वह रण-स्थल मे उतरता है और कवि "रुठौ सरीर उप्परि रतन तूठौ सीस पलच्चरां" कहकर उन के सकल्प का सकेत देता है। मस्तक पर मुकुट बांध कर, हिन्दू धर्म को भुजा पर धारण कर वह म्लेच्छ-वाहिनी मे कूद पडता है। अनेक विरुद-मडित उस के साथी-सहयोगी भी बराती बन कर उस दूल्हे के साथ स्वर्ग-यात्री—वर-यात्री—बनते हैं।

इन अनेक वर-यात्री वीरो के वीर कृत्यो का अनेक दोहो मे वर्णन किया गया है। उस वर्णन मे उक्ति-वैचित्र्य है। वक्र अभिव्यक्तियाँ है। शब्दालकारो की छटा है। अर्थालकारो की सज्जा है। युद्धोचित ध्वनि की गुञ्जार है। पर फिर भी सर्वत्र रस की अविच्छिन्न धारा प्रवहमान है। कोई वर्णन अनावश्यक लबा नही। कोई उक्ति अस्पष्ट नही। कोई अलकार भार नही। अर्थ-गौरव और पदलालित्य का एकत्र समावेश है। रस और अलंकार एक-दूसरे के पूरक हैं। वाणी और अर्थ सम्यक् सपृक्त हैं। दोनो की समुचित प्रतिपत्ति है। रस की यथोपयुक्त निष्पत्ति है।

ये पचहत्तर के लगभग दोहे काव्य की दृष्टि से एक-से-एक बढ कर हैं तो ऐतिहासिक सामग्री से भी उतने ही भरपूर हैं। इस युद्ध-रूपी महायज्ञ मे कितनी आहुतियाँ लगी उस का विवरण सरस भाषा मे है। रतन के साथी वीर एक-एक कर रण-भूमि मे चिर प्रगाढ निद्रा मे सोते चले गये और पर्वतोपम रतनसिह अकेला अवशिष्ट रह गया —

इतरा भड ओनाड पडिया राजा पाखती।
राजा ऊभौ रतनसी पासै तरां पहाड ॥

कवि एक-एक वीर के अनुपम कृत्य का सक्षिप्त वर्णन कर चुका पर उस को इतने से सन्तोष नही हुआ। उस ने नायक रतन सिंह के विकट सग्राम का और युद्ध भूमि के वातावरण का चित्रण भी आवश्यक समझा। वह भी परुषा वृत्ति मे, वीर रसोपयुक्त पदावलि मे, चारण-भाट कवि-वर्ग के अति प्रिय छद मोतीदाम मे। यह वर्णन वस्तुत. मौक्तिक दाम है। एक-एक छन्द नही, एक-एक चरण नही, एक-एक शब्द मोती है।

रलत्तलि नीर जिहीं रुहिराल। खलाहलि जाणिकि भाद्रव खाल।
उजेणि अकाल भडाल अछेह। मंडे घण जाणि कि बारह मेह।
. .. . . .

धुबै दल राजेन्द बाजेंद घोम। गजै गुण बाण अनै रिण गोम।
उडै घण बाण सतग अंगार। पडै झडि नाखित जाणि अपार।
. . ...

धमद्धम सेल वहै खग धार। पडै झसड़क्क पटां अणपार।
. . . .

भडां घड़ भजि हुवै वि वि भग्ग। खडक्खड ढल्ल झड़ज्झड खग्ग।
कडक्कड बाजि धडां किरमाल। बड़ब्बड भाजि पडत बंगाल।
दड़ब्बड मुंड रडब्बड़ दीस। अडब्बड लेत चडच्चड ईस।
अंगां खग झाट निराट अळग्ग। पडे वि वि भग्ग पडै झडि पग्ग।
. . . . .

वड्ड्फर टूक हुवै गज बाज । तडप्फड मच्छ जिहाँ सिरताज ।
मरह जरह पडै ग्रनमथ । कहकह वीरह नाचि कमध ॥

ऐसी विकट रण-भूमि मे विकराल युद्ध करता हुआ रतनसिंह भी भूमि-लुण्ठित हुआ । उस के शरीर पर अस्सी घाव लगे ।

वर्ण त्रिण सै सर सेल्ह छवीस । सोहै फिर वस गिरव्वर सीस ।
असी खग घाव लगा जव अङ्ग । जोधा हर ताम पडै रिण जग ।

रतनसिंह के मरने पर औरंगजेब की सेना मे विजय दुन्दुभी-बजी । युद्ध समाप्त हुआ । अनेक वीरो, गजो और अश्वो के धडो से भूमि आच्छन्न हो गयी ।

यही कवि ने अपनी कथा को एक नया मोड दे दिया । रतन की पराजय को महान् विजय मे परिणत कर दिया, मृत्यु को अमरत्व मे । विजयी शाहज़ादे तो केवल दिल्ली का—मर्त्यलोक का—शासन प्राप्त करते है पर महाविजयी रतन वैकुण्ठ का । रण मे अभिमुख हत होने वाला वह पुरुष-व्याघ्र सूर्य-मडल का भेदन करता है । यह गद्य-वद्ध वर्णन अत्यत मनोहारी है । कथा-प्रवाह की दृष्टि से भी, शब्द-चयन की दृष्टि से भी और रस की दृष्टि से भी ।

रतन का स्वागत करने देव-समूह सहित विष्णु आते है । रतन उन से प्रार्थना करता है कि वारह दिन तक वही विश्राम किया जाये जब तक उस के अन्य साथी तथा सती होने वाली उस की रानियाँ भी साथ हो सकें । विष्णु इस प्रार्थना को स्वीकार करते है । विश्वकर्मा उन की आज्ञा से वैकुण्ठ के ही सदृश नगर रतनपुर का निर्माण करता है । वहाँ स्वय विष्णु भगवान् सभापति पद पर आसीन होते हैं और रतन उन के पार्श्व भाग मे अवस्थित होते हैं ।

इस गद्य-वर्णन की ललित पदावलि द्रष्टव्य है —

वैजयन्ती माल । मोर मुकुट कुण्डल विसाल । मदन मोहन-कमल लोचन । स्याम-सुन्दर ठाकुर विराजमान हुवा छै । मणि माणिक जडित छत्रपाट सिंघासण विराजमान दीसै छै । भललाट करि जगाजोति जागै छै । तेज पुञ्ज । रूपक की गज । काम की कली । चख नख चीज । सुख की मिलाव विरह की वीज ।

इस प्रकार युद्ध-काव्य मे अद्भुत रस की सामग्री का समावेश कर कवि ने रस-भग नही किया अपितु पराजित नायक की पराजय को महान् विजय सिद्ध किया है ।

रतनसिंह की मृत्यु का समाचार जब उस की रानियो के पास पहुँचता है तो वे सती-धर्म के लिए प्रस्तुत हो जाती हैं । इस प्रसग मे कवि नख-शिख वर्णन करता है और रीति-काल के इस सर्व-प्रिय विषय को अपनी वीर-कथा मे समाविष्ट कर देता है । पाठक सोचेगे कि इस करुण प्रसग मे यह शृङ्गार की अवतारणा कैसी । पर जो सती-धर्म की इस परपरा से परिचित हैं उन को विदित है कि राजस्थान की ये सतियाँ पति की युद्ध-भूमि मे मृत्यु को सब से वडा उत्सव मानती थी और युद्ध-भूमि से पति के लौट आने को अपने जीवन का सब से वडा कलक । समस्त अलकारो-आभूषणो से सज्जित हो कर मृत पति के साथ स्वर्ग लोक मे जा मिलने की उन की परम कामना रहती थी । अत नख-शिख वर्णन का यह प्रयोग कवि की मार्मिक स्थलो की पहचान की शक्ति मे किसी अभाव का सूचक नही कहा जा सकता ।

चार रानियाँ और तीन खवासिनें सती होने चली । पर मरने से पूर्व देव पूजन कर उन ने अपनी इच्छा व्यक्त की "जुगजुग औ ही ज धणी देज्यो । न मांगां वात दूजी ।" अपने

सतीत्व का यह परिचय दे वे भस्मसात् हुई पर वस्तुतः उन ने वह पद प्राप्त किया जिस के लिए बड़े-बड़े मुनि तरसे। सावित्री, उमा और श्री उन का स्वागत करने वैकुण्ठ के द्वार पर आयी और वे अपने पति रतन के महल मे उस से जा मिली। कथा-वस्तु का यह विवेचन कवि की प्रबन्ध-पटुता का परिचायक है। उस मे अर्थ-सम्बन्ध के निर्वाह की क्षमता है, कथा के मार्मिक स्थलो की पहचान है, वर्णन-शैली को प्रसगोचित बनाने की सामर्थ्य है और भाषा तथा शब्दावलि पर पूर्ण अधिकार है।

नायक-निर्णय तथा चरित्र-चित्रण

'वचनिका' के नायक के विषय मे कुछ चर्चा 'वस्तु-विवेचन' के अतर्गत की जा चुकी है। पर भारतीय साहित्य-शास्त्र की दृष्टि से काव्य मे नायक एक प्रमुख तत्व है अत उस का कुछ विस्तृत विवेचन भी यहाँ अपेक्षित है। वैसे वचनिका का नायक स्पष्टत रतनसिंह है। कवि ने मगलाचरण के साथ ही उस के पूर्व-पुरुषो का वर्णन कर उस का परिचय पाठक को करा दिया है और यह भी व्यक्त कर दिया है कि उसी के चरित्र-गायन के निमित्त उस ने काव्य-रचना की है। अन्त मे फल का भोक्ता भी वही है। उस को वैकुण्ठ का वास प्राप्त होता और अविचल यश भी। उस की प्रिय पत्नियाँ भी उस को देवागना-रूप मे प्राप्त होती है और इसी वैकुण्ठ-वास-रूपी फलागम के साथ वचनिका की समाप्ति होती है। अत रतन के नायकत्व मे सन्देह की कोई सम्भावना नही है। पर 'वचनिका' के कवि के सम्मुख इस प्रतिपादन मे कुछ कठिनाइयाँ अवश्य थी। रतनसिंह जसवन्तसिंह की अधीनता मे नियुक्त था। शाहजहाँ ने सेनापति पद पर जसवन्तसिंह की ही नियुक्ति की थी। कथा-सूत्र के सम्यक् निर्वाह के लिए जसवन्तसिंह के नेतृत्व को स्थापित रखना आवश्यक था। कथा का वास्तविक नेतृत्व रतन के हाथ तभी आया जब जसवन्तसिंह रण-स्थल से पलायन कर गया। जिस प्रकार लक्ष्मण को नायक मान कर काव्य लिखने पर हठात् राम का चित्रण आवश्यक हो जाता है उसी प्रकार जसवन्तसिंह का चित्रण भी कवि के लिए अनिवार्य आवश्यकता थी। इन परिस्थितियो मे कवि ने अपने कर्त्तव्य का सम्यक् निर्वाह किया है और सफलता प्राप्त की है।

रतनसिंह रूढ-वशी क्षत्रिय है। उस के पिता ने देवगिरि और बलख पर विजय प्राप्त की थी और जालौर को पुरस्कार मे प्राप्त किया था। उस के वश मे अभूतपूर्व वीर, दानी, विरुद-धारी चक्रवर्ती पूर्व-पुरुष हुए थे। उन के वंश मे उत्पन्न हो कर रतन ने भी अपने वश के अनुरूप विरुदो को धारण किया। वह कर्त्तव्य मे कर्ण और अर्जुन के तुल्य था। महाज्ञानी, समर्थ, शूर, गज-राजो का दानी और गज-भजक था। अपने वश का उद्धारक और तेरह शाखाओ का शृङ्गार था। उस का सम्मान स्वय बादशाह शाहजहाँ ने किया था। नायक के वश और गुण-वर्णन के इस प्रसग के अनन्तर वास्तविक कथा-सूत्र का उदय होता है। इतिहास की दृष्टि से जसवन्तसिंह की नियुक्ति से ले कर पलायन तक रतनसिंह का कोई महत्त्व पूर्ण स्थान नही हो सकता पर कवि ने रतन का महत्व प्रतिपादन करने के लिए अनेक अवसर उत्पन्न किये हैं। जसवन्तसिंह विशाल वाहिनी को ले कर उज्जैन पहुँचता है तो उस को अपना भावी कर्त्तव्य स्थिर करने की चिन्ता होती है और वह मत्रणा के लिए रतन ही को बुलाता है

"बन्धव रतन बुलावियौ जसै रचण रिण जंग ।"

और दोनो मन्त्रणा करने के लिए ऐसे मिलते है मानो राम-लक्ष्मण अथवा कर्ण-दुर्योधन मिले हो

"राम लखम्मण राठवड किर दुज्जोण करन्न ।"

इसी प्रसग मे रतन के रूप-शौर्य का और कवि-चारण-वेष्टित होने का भी वर्णन है। औरगजेब और मुराद का पत्र पा कर जसवतसिह पुन मन्त्रणा करता है और अनेक सामन्तो की सभा बुलाता है। वे सामन्त जसवतसिह को सर्वज्ञ बताते हुए भी रतनसिह के महत्व का प्रतिपादन करते है

"कमधजां आज माहेस कौ कहियौ यौं दुज्जौ करन ।
कुबवध खत्री ध्रम जाणगर राजा वळि बुज्झौ रतन ॥"

उस के पश्चात् जसवतसिह और रतनसिह दोनो साथ बैठ कर व्यूह-रचना तथा किंकर्तव्यता पर विचार करते है। रतनसिह व्यूह व्यवस्था के बाद जसवतसिह से निवेदन करता है—'आप कुल की रक्षा के लिए चले जाये और मुझ को सेनापतित्व सौंप दे।' दुर्योधन और कृष्ण आदि के पलायन के उदाहरण दे कर जसवतसिह के पलायन को नीति-सगत भी बताता है। साथ ही यह सम्मति देता है कि औरगजेब के पास युद्ध के निर्णय का सन्देश भेज दिया जाये। इस के बाद रतन के अपने साथियो का आह्वान करने, युद्ध के लिए पूर्ण तैयारी करने तथा दान-पुण्य आदि करने का वर्णन है। तृप्त हुए कवि-चारण रतन का विरुद-गायन कर आशीर्वाद देते है। रतनसिह भी अपने साथियो को बुला कर सभा करता है और मन्त्रणा करता है जिस मे रतन तथा उस के सभी सामन्त उत्साह, वीरता, त्याग, स्वामि-भक्ति आदि गुणो का परिचय देते हैं। इस प्रकार कथा सूत्र मे एक बार जसवतसिह पृष्ठ-भूमि मे पड जाता है और रतनसिह ही प्रमुख हो जाता है। हाथियो, घोडो, वीरो आदि के वर्णन मे किसी के नायकत्व का कोई विशेष प्रसग नही आता पर फिर भी जसवतसिह और रतन-सिह दोनो का नेतृत्व बना रहता है—'बिन्हे साह राजा बिन्हे नेत बांधै' तथा 'औरँग साह मुराद वे राजा जसौ रतन्न।'

इसके पश्चात् विकट युद्ध होता है। जसवतसिह की पराजय स्पष्ट हो जाती है और राठौड यही नीति-सगत समझते है कि जसवतसिह पलायन कर जाये। जसवतसिह बाध्य होकर चला जाता है और रतनसिह नेतृत्व ग्रहण करता है—"वागां झालि जसराज वलिया। भारथ रा भर भार रतनागिर झलिया।" इस प्रकार रतनसिह के निर्द्वन्द्व नेतृत्व की स्थापना हो जाती है और आगे उस के साहस, वीरता आदि के वर्णन है। "करि प्रणाम रवि ताम "आदि से प्रारम्भ कवित्त और उस से अगला दोहा द्रष्टव्य है। रतन सेना-रूपी बरात का दूल्हा बन कर युद्ध-भूमि मे अवतरित होता है। उस के साथी एक-एक कर खेत रहते है और वह अकेला रह जाता है—"राजा ऊभौ रतनसी पाखे तरां पहाड।" अकेला रतन भयकर सग्राम करता है और रक्त की धारा प्रवाहित करता हुआ, शाही सैन्य को खण्ड-विखण्ड करता हुआ, गजराजो-वाजिराजो का भजन करता हुआ, डाकिनी, शाकिनी, प्रेत, पिशाच, गिद्ध, यक्ष, किन्नर आदि को तृप्त करता हुआ, तीन-सौ वाणो, एक-सौ-बीस सेलो और अस्सी खड्गो से छिन्नाग हो कर धरा-शायी होता है। इस समग्र वर्णन मे वह

साक्षात् वीरता की प्रतिमूर्ति चित्रित हुआ है। पर उस के बाद उस के सेवक-वात्सल्य, पत्नी-प्रेम आदि का भी वास्तविक रूप ज्ञात होता है। अमर-देह-प्राप्त रतनसिंह को वैकुण्ठ ले चलने के लिए समस्त देव-मण्डल आता है। रतन विष्णु भगवान् से प्रार्थना करता है, "मुझ को अकेले को न ले जाइए, मेरे सह-योद्धाओं को भी साथ लीजिए, सतियों को भी आ जाने दीजिए। यह है वीर-मूर्ति का सेवक-वात्सल्य और सतीत्व-सम्मान। इसी लिए उस की सम्पूर्ण कामना तृप्त होती है। उस को सपरिवार वैकुण्ठ-वास प्राप्त होता है और देव-गण बधाई देता है।

जसवंतसिंह के चरित्र का चित्रण भी कवि ने उतने ही आदर और सहानुभव के साथ किया है। उस के जीवन के अनुज्ज्वल पक्षों को भी यथासंभव गोपित करने का उस ने प्रयत्न किया है। जसवंतसिंह युद्ध मे केवल पराजित ही नही हुआ पलायन-शील भी हुआ। 'न दैन्य न पलायन' का आदर्श मानने वाले 'जय काव्य' की परंपरा के कवि के हृदय मे ऐसे व्यक्ति के प्रति सहानुभूति होना कम संभव था पर जग्गा ने जसवंतसिंह की लज्जा भी रखने का प्रयत्न किया है। उस का पक्ष निम्नोक्त बातों पर स्थापित है।

(अ) जसवंतसिंह का कर्त्तव्य जयसिंह की अपेक्षा अत्यधिक कठिन था।

(आ) औरंगजेब-जैसे अजेय शत्रु पर विजय प्राप्त करना असंभव था।

(इ) युद्ध से पलायन करना नीति-संगत और वंश के हित मे था।

(ई) जसवंतसिंह ने पलायन स्वेच्छा से नही किया, अपने सामंतों के अत्यंत प्रार्थना करने पर बाध्य हो कर किया।

इन पक्षों का थोडा स्पष्टीकरण आवश्यक है

(अ) जसवंतसिंह की कर्म-भूमि कठिन थी। बादशाह ने अकेले शुजा के विरुद्ध जयसिंह और सुलेमान शिकोह को भेजा था जब कि दो शाहजादों के विरुद्ध अकेले जसवंतसिंह को

"सुज्जा दिसि जैसिंघ सझि दुज्जौ मांन दुवाह।
पोतो साथै परठियो पूरब घर पतिसाह॥
साहिजादां विहुँ सामुहौ अेक जसौ अणभग।
मांडण असपति मांडियौ जोघ कळोघर जग॥"

दो विकट शत्रुओं से युद्ध करना वस्तुत कठिन कार्य था अत यदि जसवंतसिंह को सफलता न मिली तो आश्चर्य नही।

(आ) औरंगजेब और मुराद की विकट सेनाओं और अपार शक्ति का भी वर्णन कवि ने किया है

"घर सारी पडि धाक पुर तर गिर कीजै पहट।
हैकँप घर नागेन्द्र हुव चक च्यारूँ चढि चाक॥"

ऐसी विकट वाहिनी के वीर मुगलों का वर्णन भी द्रष्टव्य है। पर औरंगजेब से तीन पहर तक लड सकना भी केवल जसवंतसिंह के वश की बात बता कर कवि ने जसवंतसिंह के गौरव की रक्षा का सर्वाधिक प्रयत्न किया है

"औरंगसाह पातिसाह रा तप तेज अपर वळ। दइव रा अवतार। जिण आगै जम-राणौ विमुहा खडै। तिण सूं तीन पोहर हाथू के जसराज ही लडै॥"

(इ-ई) जसवतसिंह के पलायन की नीति-सगतता का प्रतिपादन सर्व-प्रथम रतन के मुख से करवाया गया है

"जोधाँ धणी घणा दिन जीवौ। दळ सिणगार वस घर दीवौ ॥
. . . .
क्रन मरतै दुज्जोन गयौ क्रमि। श्रीक्रम काळ जवन आगै तिमि ॥
राजा किसन दाव करि रहियौ। दाणव तिको पछे फिरि दहियौ ॥
हार जीप वातां हरि हाथे।... . ... ."

इस सम्मति को सुन कर भी जसवतसिंह पलायन नही करता। क्षत्रियोचित उत्साह उस मे तब भी विद्यमान रहता है और वह तीन पहर तक लडता है। अन्त मे उस के सामत शतरज के खेल की उपमा देते हैं और उस को जाने को बाध्य करते है। "राजा राखौ। राजा राखियै बाजी रहै। ओछी वाढौ। जसराज काढौ। वागां झालि जसराज वळिया।" इस प्रकार सामतो की सम्मति पर जसवतसिंह को जाना पडा।

जसवतसिंह को कायर न चित्रित करना ही सभवत कवि को रतनसिंह के उत्कर्ष की दृष्टि से अभीष्ट था। जसवतसिंह-जैसे वीर को भी जिस सग्राम मे पलायन करना पडा उस मे भी असीम साहस के साथ अन्त समय तक लडते रहने की क्षमता जिस रतनसिंह मे थी वह वस्तुत मर कर अमर बना। पराजित हो कर भी विजयी हुआ। यही सभवत कवि का प्रतिपाद्य था।

प्रतिनायक—रतन के प्रतिद्वन्द्वी दो शाहजादे—औरगजेब और मुराद बक्स—थे और उन के साथ था उन का प्रबल सैन्य-समूह। उन का वर्णन करने मे कवि ने पूर्ण सहृदयता का परिचय दिया है। पहले उल्लेख किया जा चुका है कि रसोत्कर्ष के लिए प्रतिनायक के बल-गौरव का वर्णन भी उतना ही आवश्यक है जितना नायक के इन गुणो का। कवि ने औरगजेब और मुराद के अपार सैन्य-बल और रण चातुर्य का समुचित उल्लेख किया। यही नही उन की नीतिज्ञता का भी परिचय कराया है। जसवतसिंह को लिखे गये पत्र को देखिए

"राजा राह म रोकि तूं साहि लगं दे जाण ॥
राढि म करि इक तरफ रहि आगै पीछै आव।
जोह दिली फिर जाइस्यां परसि असप्पति पाव ॥"

ये दोहे इस बात के सूचक हैं कि शाहजादे जसवतसिंह को अपनी निश्छलता और पितृ-भक्ति का परिचय दे कर युद्ध से बच जाना और सीधे दिल्ली पहुँच जाना चाहते थे। शाहजादो की अजेयता और शक्तिमत्ता का उल्लेख तो ऊपर हो ही चुका है।

अन्य चरित्र—कवि ने रणक्षेत्र मे काम आने वाले अनेक वीरो का भी परिचय दिया है। प्राय एक-एक दोहे मे उन के वश और अद्भुत कृत्य का वर्णन है पर उस से भी अधिक सहृदयता-पूर्ण वर्णन गद्य-बद्ध वचनिका मे है। वे चित्रण हैं बारहठ जसराज, भगवान, अमर, साहिब कूभाणी, कुमार रायसिंह आदि के जिन मे युद्ध के लिए प्रबल उत्साह उमडा पड रहा है। गद्य मे ऐसे भाव-चित्र वस्तुत अन्यत्र दुर्लभ हैं।

रसास्वादन

'वचनिका' के वस्तु-विवेचन से ही स्पष्ट हो चुका है कि उस का मुख्य रस वीर है। वैसे रीतिकालीन कवि के हृदय में नवो रसो का एकत्र समावेश करने का प्रयत्न एक साधारण कामना बन चुकी थी। खिड़िया जगा भी इस कवि-स्वभाव से अछूता न था। उस ने भी एक वचनिका के अन्तर्गत नव रसो और छह ऋतुओ के नाम परिगणित कर इस कवि-कर्तव्य की इति-श्री समझी। परन्तु आचार्यों ने नाम परिगणन-मात्र से रस-निष्पत्ति को सम्भव नहीं माना है। इस के विपरीत उस को दोष माना है। अस्तु यह रस-नामोल्लेख रसास्वाद की दृष्टि से उपेक्षणीय है। वस्तुत वीर रस के अतिरिक्त अन्य कुछ रसों के समावेश का प्रयत्न कथा-सूत्र में विद्यमान है जिस की विवेचना आगे की पंक्तियो मे की जायेगी।

वीर रस का स्थायी भाव उत्साह है जिस का उदय प्रतिनायक आदि आलम्बन विभावो के दर्शन से वीर आश्रय के हृदय मे होता है और चतुर्दिक् की परिस्थिति-रूपी उद्दीपन विभावो से उद्दीप्त हो कर तथा वीर-हृदय की अनेक कामनाओ-रूपी संचारियो से पुष्ट होकर रस-रूप मे निष्पन्न होता है। दान-वीर, दया-वीर, धर्म-वीर आदि की परिस्थितियाँ युद्ध-वीर से कुछ भिन्न होती हैं पर स्थायी भाव सभी में उत्साह होने के कारण सब का समावेश एक ही के अन्तर्गत किया गया है।

वचनिका का प्रधान रस युद्ध-वीर है। उस मे युयुत्सु राठौड़ो—जसवंतसिंह, रतनसिंह तथा उन के सामन्तो—के युद्धोत्साह का सांगोपांग वर्णन है :

"तामजुहार कियौ खग तोले। बीजे भवि मिलिस्याँ हंसि बोले।
जीवै तिके भलाँ घरि जावौ। आवै त्रगि मो सार्थ आवौ।" तथा—

"हक पियाला पीयस्याँ पायस्याँ। चाचरि विहंडस्याँ विहंडायस्याँ। रिण खेत रे विखै रंगियै वाणासि मतवाळाँ ज्यूँ घूमता थकाँ हाथियाँ सूँ टला खायस्याँ। महारुद्र नैं सिर पेस कराँ।" आदि उक्तियाँ यह सिद्ध करने को पर्याप्त हैं कि कमधज वारो के हृदयो मे किस प्रकार उत्साह उमड़ा पड़ रहा था। होना स्वाभाविक भी था ही। विरोधी वीरों की विकट वाहिनी सामने सन्नद्ध खड़ी हो, त्रम्बाल् गड़गड बज रहे हो, तुरही, भेरी और नफेरी शब्दायमान हों, गज-वाजि सुसज्जित हो गर्जना और हींकार कर रहे हों, आकाश रेणु से आच्छन्न हो, गोले गनगना रहे हो, योगिनियाँ, डाकिनी, शाकिनी, पिशाचिनी रक्त-पात्र लिए घूम रही हो तो वीरो के हृदयो मे उत्साह क्यो न जागृत होगा। "मूँछा करि घाति बोलै। तलवार तोलै" तथा अनेक वीर कृत्यो-रूपी अनुभावो से वह उत्साह अभिव्यक्त भी होता ही है और अप्सराओ के वरण की कामना, देवताओ से 'धन्य-धन्य' सुनने की अभिलाषा, नाम अमर होने की आकांक्षा आदि संचारी भावो से उस उत्साह की पुष्टि भी होती है और इस प्रकार वचनिका मे वीर रस पूर्ण उत्कर्ष पर पहुँचता है। गद्य तो पद्य से भी अधिक सरस है। पद्य में रतनसिंह के अन्तिम युद्ध वाला वर्णन छन्द, भाषा, शब्दावलि, रीति, वृत्ति आदि सभी दृष्टियो से वीर रस के अनुकूल है। गद्य भाग में रतनसिंह और उन के साथियो की मन्त्रणा वाला प्रसंग दर्शनीय है।

रतनसिंह के अपने डेरे आ कर दान-पुण्य करने और ब्राह्मणो-कवियो को भोजन कराने के प्रसंग मे कवि ने दान-वीर की अवतारणा की है।

"अजुवालए पख आपरा नारि तजे ग्रिह नेह ।
चढि चचल सरवर चली मगल जालए देह ॥"

मे गृह-नेह का त्याग वस्तुत निर्वेद-जन्य नही सती-धर्म से प्रेरित है । अत उस प्रसग को धर्म-वीर का प्रसग माना जा सकता है ।

वचनिका मे वीर रस के बाद दूसरा महत्व-पूर्ण स्थान शृङ्गार को देने का प्रयत्न है । नायक की मृत्यु के पश्चात् वस्तुतः जहाँ पाठक करुण रस की आशा करेगा वहाँ कवि ने शृङ्गार की अवतारणा करने और अपने काव्य को सुखान्त बनाने का प्रयत्न किया है । सामान्यत पाठक को शृङ्गार के वर्णन के लिए ऐसा प्रसग ढूँढना और सती होने के लिए—भस्मीभूत होने के लिए—जाती हुई रानियो के नख-शिख का वर्णन बहुत खटकेगा । कहाँ करुण का वातावरण और कहाँ शृङ्गार की कल्पना । परन्तु राजस्थान के कवि की कर्म-भूमि ही भिन्न थी । उस के समाज का आदर्श ही भिन्न था । वहाँ की नारी की आजीवन यही लालसा होती थी कि उस का पति शीघ्र रण भूमि मे शत्रुओ का गजन करता हुआ धरा-शायी हो जाये और उस को ऐसे अनुपम अपलायी वीर की पत्नी कहलाने और उस के साथ सती हो कर स्वर्ग मे सह-वास करने का अद्भुत अवसर प्राप्त हो । पति का जीवित युद्ध-भूमि से वापस आना तो पत्नी के लिए मानो मरण-तुल्य था । सूरजमल की उक्ति देखिए

"मणिहारी जारी अरी अब न हवेली आव ।
कत मुआ घर आविया विधवाँ किसा बणाव ।"

पलायित पति की पत्नी पति का उपालभ करती है । वह मनिहारी को सबोधन कर कहती है "मेरा पति वापस घर आया है तो निश्चित मरा हुआ आया होगा—जीवित आया हो तो मेरा पति नही—अत आज से मैं विधवा हूँ । मुझे बनाव-शृङ्गार की अब आवश्यकता नही होगी ।" कैसी व्यग्योक्ति है ? यह था सामती सस्कृति का आदर्श । अत निश्चय ही मृत वीर की पत्नी अपने लिए उस दिन को जीवन के महान् उत्सव का दिन समझती थी जब वह सती हो । वह नव वधू बन कर अपने स्वर्गस्थ पति का सहवास करने के लिए षोडश शृङ्गार सज्जित हो कर अग्नि-मार्ग से अपने भावी पति-गृह को जाती थी । इन आदर्शों मे पले हुए जगा ने—रण मे अभिमुख-हत हो कर सूर्य-मण्डल का भेदन करने वाले पुरुष-व्याघ्र को ही पुरुषोत्तम मानने वाले 'जयकाव्य' की परम्परा के चारण कवि ने—इसी दृष्टि से शृङ्गार की यह अवतरणा की है । रतन विष्णु भगवान से प्रार्थना करता है —"यहाँ बारह दिन विश्राम कीजिए जब तक सतियाँ भी अग्नि-स्नान करके आ जायें ।" उधर रतन की मृत्यु का समाचार सुन सतियाँ षोडश शृङ्गार सज्जित हो कर अग्नि-प्रवेश-मार्ग से पति के पास पहुँचने का उपक्रम करती है । इस प्रसग मे रानियो [illegible] नख-शिख-वर्णन शुद्ध शृङ्गारी परपरा का वर्णन है । भस्मसात् होने के लिए प्रस्तुत होने वाली सतियो की विशिष्ट परिस्थिति का उस पर कोई प्रभाव नही पड पाया है । पर नख-शिख-वर्णन समाप्त होने पर कवि वस्तु-स्थिति से प्रभावित हुए बिना नही रह सका । सब आदर्शों को भूल कर उस को कहना ही पडा—"करुणा सहि लोक लगा करण ।" सामन्ती आदर्श कुछ भी रहे हो पर ऐसी परिस्थिति मे नख-शिख-वर्णन साधारण रसज्ञ को थोडा सा खटके बिना नही रह सकता । अस्तु, रानियाँ सती हो कर वैकुण्ठ पहुँचती है । उन का वहाँ लक्ष्मी-उमा आदि स्वागत करती हैं । रतन को देवता

बधाई देते हैं और रतन अपनी रानियो से सहर्ष मिलता है। यो संयोग शृङ्गार की कल्पना कर कवि ने अपने काव्य को सुखान्त बनाने का प्रयास किया है। वस्तु-स्थिति के अनुकूल भाव भी हठात् बीच मे आ ही गये हैं जो सक्षिप्त होने पर भी अधिक मर्म-स्पर्शी है।

रानियो के अग्नि-प्रवेश का वर्णन करते हुए कवि हठात् अपनी शृङ्गार-कल्पना भूल जाता है और उस के मुख से करुण रस पूरित यह उक्ति निकल ही जाती है

"हा हा कार पुकार हुइ राम राम भरिण राम।
घरणूं कहर वीती घडी जहर लहर विधि जाम॥"

कथा का यह स्थल ऐसा मार्मिक था कि शृङ्गार की कल्पना करता हुआ कवि भी विवश हो करुण की धारा प्रवाहित कर चला। रस के सभी अवयव हो चाहे न हो, साहित्य के आचार्य को सन्तोष हो चाहे न हो, पर भावुक पाठक के लिए यह एक दोहा करुण रस का अच्छा उदाहरण है।

शात रस की निष्पत्ति के लिए भी अवसर उपयुक्त था पर कवि ने उस का उपयोग नही किया। वीरो की मृत्यु से ससार की असारता का ज्ञान किसी को न हुआ पर सतियो ने मृत्यु-लोक का मोह अवश्य छोडा।

"सती उमग्गे त्तग दिसा मोह तजे म्रित लोक।"

मे कवि शान्त रस के द्वार तक पहुँच कर वापस आ गया। उसे कदाचित् अपनी शृङ्गार-कल्पना मे यह भाव व्याघातक प्रतीत हुआ।

युद्ध-वीर के प्रसग मे कही-कही वीभत्स का दृश्य भी उपस्थित हुआ करता है। वचनिका के कवि का भी ऐसी परिस्थितियो से साक्षात्कार हुआ है। यथा—'रलृत्तल नीर जिहीं रुहिराल', 'कटै कर कोपर कालिज कध'; 'दडव्वड मुण्ड रडव्वड़ दीस'; 'अँत्रां खग भाट निराट अलग्ग', 'पडै वि वि जंव पड़ै भडि पग्ग।' आदि। पर ये सभी प्रसग वीर के सचारी मात्र हो पाये हैं वीभत्स की रस सज्ञा के अधिकारी नही।

कथा के प्रारम्भ ही मे—

"जीवत म्रित हुइ साहिजहाँ दिल्ली वै सुरिताण।
रात दीह अदर रहै नह मडै दीवाण॥
धु ध हुवै सारी धरा सहर दिली पडि सोर।"

आदि वर्णनो को यदि कुछ आगे वढाया जाता तो भयानक रस की सृष्टि सभव थी और रतन-रासो कार ने वैसा किया भी है पर वचनिका-कार को यह सव अभीष्ट प्रतीत नही होता। इसी प्रकार सेनाओ के प्रस्थान, तोपो की गडगडाहट, वाणो की सरसराहट आदि के प्रसग भी भयानक रस के उपयुक्त होते हैं, पर कवि ने उधर प्रयत्न नही किया है। वीर रस के साथ रौद्र रस का सयोग वहुत सभव था पर कवि ने उस दिशा मे भी प्रयास नही किया।

हाँ, वचनिका-कार की एक अद्भुत सफलता है और वह है अद्भुत रस की सृष्टि। रतन की मृत्यु के उपरान्त शृङ्गार की सृष्टि मे तो कवि सफल न हुआ पर इस अद्भुत प्रसग मे अद्भुत की कल्पना कर पाया। विष्णु प्रभृति देवो का आगमन, विश्वकर्मा द्वारा नव नगर का निर्माण अनुपम देव-सभा की सृष्टि, विष्णु के पुराणोक्त देव-रूप का वर्णन, सभा मे हो रहे अद्भुत नृत्यादि का विवरण—ये सभी कल्पनाएँ कवि की सफलता के प्रमाण हैं।

शब्दावलि भी मनोरम है—"वैजयन्ती माल। मोर मुकुट कुण्डल विसाल। मदन मोहन। कमल लोचन। स्याम सुन्दर ठाकुर विराजमान हुआ छै। मणि माणिक जडित छत्रपाट सिंघासण विराजमान दीसै छै। झललाट करि जगा जोति जागै छै। तेज पुंज। रूप की गंज।" आदि। यो वचनिका-कार यत्न करके भी शृङ्गार की सृष्टि मे असफल रहा है जब कि करुण मे हठात् सफल हुआ है और अद्भुत मे अद्भुत रूप से कृत-कृत्य।

अलंकार-चमत्कार

अलकारो के प्रति वचनिका-कार का न तो कोई विशेष आग्रह ही रहा है न औदासीन्य ही। शब्दालकार—विशेषकर अनुप्रास और वयणसगाई—तो वचनिका मे भरे पडे है। वयणसगाई का तो चारण कवियो को आग्रह था ही। यमक के भी अनेक उदाहरण हैं। पुनरुक्तवदाभास तथा वीप्सा भी यत्र-तत्र मिल जाते हैं। अर्थालकारो का कवि ने थोडा ही प्रयोग किया है। उस की उक्तियाँ स्वाभाविकता से अधिक पूर्ण है पर फिर भी उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, सदेह, विषम आदि ऐसे अलकार हैं जो भारतीय कवि की लेखनी से बिना चाहे भी अकित हो ही जाते है। उचित समय पर उपयुक्त अलकार का प्रयोग करने मे कवि नही चूका है। पर उस के अलकार कही भी काव्य-भारती के भार नही बने है। कुछ उदाहरणो से यह कथन अधिक स्पष्ट हो जायेगा

यमक (१) गुणपति गुणे गहीर गुणग्राहग दान गुण दियण।
(२) सझि आरावाँ समसमा समा समा सझि सूर।
समा समा दल सालुलै अहै अँबाला तूर॥
(३) गौ काली कुम्भाथलाँ काल गजाँ सिर काल॥
(४) घण अहिरण घण घाव साम्है चाचरि सात्रवाँ।
वाहे साहे वीठलो खांडो खांडेराव॥
(५) सूर सभा विचि सूर।

वीप्सा (१) इलल्ला इलल्ला इलल्लाह अक्खै।
(२) राम राम भणि राम।

पुनरुक्तवदाभास (१) मडै घण जाणि कि बारह मेह।
(२) असी खग घाव लगा जब अग।

वयणसगाई यह तो चारण कवि का एक अनिवार्य अलकार है। उस के किसी-न-किसी रूप का निर्वाह कवि को करना ही पडता है। जगा इस दिशा मे भी सफल रहा है।

अनुप्रास अनुप्रास की छटा वचनिका मे भरी पडी है। प्राय प्रत्येक दोहे या छन्द मे किसी-न-किसी रूप मे वह मिल ही जाता है।

अर्थालकारो मे उपमा, रूपक तथा उत्प्रेक्षा की तो बहुलता है ही पर विषम, सदेह आदि के उदाहरण भी मिल जाते है.

उपमा (१) कपोल गज चोल सिंदूर केस।
ओपै इन्द्रधानख जैसा अरेस॥
(२) भिडताँ गजाँ भीम जेही भमाडै।

(३) नरवर सूर निगेम भारथ मझि रीती भरी।
आवै जावै अपछरा पगि अरहट घडि जेम ॥
(४) मोरँग जसौ अगाहि जूटा सूरिज राह जिम।

रूपक (१) दल सिणगार वस घर दीवौ।
(२) दुरजोण माण। अरजणह वाण। भुजवली भीम।
(३) रिण समद माहै सूर कमल विकसि विराजमान हुवा।
(४) दुल्लह रयण दुभाल सूरा पूरा जान सहि।
(५) रूक रहिल वागी।
(६) है वै घड दुलहणि हुई घण तोरण गज ढाल।

उत्प्रेक्षा (१) कसे पाखरां चामरां जूह काला।
वणां जाणि पाहाड हेमग वाला।
(२) धजां फावि नेजां गजां सीस ढल्ल।
माथै उड्डिया जाणि गुड्डी महल्ल ॥
(३) कुल अट्ठ चल्ले गिर गज्ज काला।
मँडै इन्द्र जाणं घटा मेघमाला ॥

विषम (१) कालं अजुवालौ कियौ आवि दलां अवियट्ट।

भाषा-शैली

वचनिका की भाषा मारवाडी का साहित्यिक रूप डिंगल है। उक्त भाषा पर कवि का पूर्ण अधिकार है। किस रस मे, किस प्रसग मे, कैसी परिस्थिति मे कैसी भाषा और शब्दावलि का प्रयोग किया जाये इस बात का कवि को पूरा ज्ञान-है। युद्ध के विकट प्रसग मे भीषण शब्दावलि और परुषा वृत्ति के आधिक्य से वीर रस-निष्पादन की क्षमता, अद्भुत चित्रण के प्रसग मे कोमल-कान्त सस्कृत पदावलि का प्रयोग, साधारण विवरण अथवा इतिवृत्त-कथन के समय सामान्य भाषा का प्रयोग—ये हैं कवि की विशेषताएँ जो उस के भाषा-अधिकार और औचित्य ज्ञान की परिचायक हैं।

विकट शब्दावलि का उदाहरण देखिए

"भडां घड भजि हुवै वि वि भग्ग। खडक्खड ढल्ल झडज्झड खग्ग ॥
कडक्कड़ वाजि घडां किरमाल। वडव्वड भाजि पडत बँगाल ॥
दडव्वड मुण्ड रडध्धड दीस। अडव्वड लेत चडच्चड ईस ॥
.
वडप्फर टूक हुवै गज वाज। तडप्फड मच्छ जिहीं सिरताज ॥
मरद्द जरद्द पडै अनमध। कहक्कह वीरह नाचि कमध ॥"

रणरणन ध्वनि करती हुई शब्दावलि मे युद्धादि का वर्णन देखिए

"घुवै दल राजेंद वाजेंद घोम। गजै गुण वाण अनै रिण गोम ॥
उडै घण वाण खतग अँगार। पडै झडि नाखित जाणि अपार ॥
. .

विरण रेह तेजाळ वका विढंगं । फवाणं गुणं डाणि झल्ले कुरंगं ॥

.. ..

सिलहाँ खाँना ऊघड़े वह भड कछे दुवाह ।
कटकाँ विहुँ हूँकळ कळळ हुवँ सनाह सनाह ॥
दल सिरागार विरोल दल दावानल दताल ।
दिया जसै औरंग दुग्रा छोडो गज छछाल ॥
.. ..

त्रिजडा हथ सूजी केहरि तरा । किलँवाँ घडा फररा रण फरा फरा ॥"

मधुर कोमल-कान्त सस्कृत पदावलि के उदाहरण ऊपर दिये जा चुके है। अन्य उदाहरण भी उसी गद्य-खण्ड मे भरे पडे है।

गद्य-बद्ध छोटे-छोटे वाक्य लिखने मे तो कवि सिद्ध-हस्त है

(१) पतिसाहाँ रा विभाडण हार । पातिसाहाँरा पडिगाहण । गजराजाँ राजान के गजवाग । अरिसाल । विजाईमाल । लख दीयण जस लीयण ।

(२) अगनि सोर गाजसी । पवन वाजसी । गजवघ छत्रवध गजराज गुडसी । हिन्दू असुराइण लडसी । देवता स्यावास कहिसी । वात रहिसी ।

(३) रग प्रेम का झड । तेज पुञ्ज । रूप की गज । काम की कली । चख नख चीज । सुख की सिलाव । विरह की वीज ।

वचनिका मे यत्र-तत्र मुहावरो और लोकोक्तियो के भी दर्शन हो जाते हैं —'चद जस नामो चाढाँ', 'कीधा चदनामा' आदि मे "चदनामा" मुहावरागत प्रयोग है। 'हार जीप वाताँ हरि हाथे' एक लोकोक्ति है।

वृत्त-विचार

वचनिका मे अनेक छदो तथा गद्य-बधो का प्रयोग हुआ है। छदो मे सस्कृत के त्रोटक, भुजगी, गाथा, मौक्तिक-दाम आदि है तो भाषा के दूहा, वडा दूहा, कवित्त (हिंदी का छप्पय) विग्रक्खरी, चाद्रायणी, हणूफाल चौसर गाहा और दुमेल गाहा। गद्य रूपो मे वचनिका तथा वार्त्ता हैं।

गाहा (गाथा)—यह प्राकृत का बहु-प्रयुक्त छद है। गाहा-सतसई इसी छद मे लिखा हुआ सतसई-परपरा का आदि ग्रथ है। गाहा मात्रिक छद है। इस के विषम चरणो मे वारह-बारह मात्राएँ, द्वितीय चरण मे अठारह मात्राएँ तथा चतुर्थ मे पन्द्रह मात्राएँ होती है। इस को सस्कृत मे आर्या कहते है। पर इस के एक भेद के विषम चरणो मे बारह-बारह तथा सम चरणो मे पन्द्रह-पन्द्रह मात्राएँ भी होती है।

गाहा चौसर—इस के प्रत्येक चरण मे सोलह-सोलह मात्राएँ होती है। प्रथम चरण मे जो अन्तिम शब्द होता है उस की आवृत्ति प्रत्येक चरण के अन्त मे होती है।

गाहा दुमेल—इस के भी प्रत्येक चरण मे सोलह-सोलह मात्राएँ होती है पर अन्तिम शब्द की आवृत्ति का नियम नही है। पहले और दूसरे चरण मे तथा तीसरे और चौथे चरण मे तुक मिलना आवश्यक है।

कवित्त—यह हिन्दी का छप्पय छंद है। इस की रचना रोला और उल्लाला छंदों के योग से होती है। प्रथम चार चरणों में ग्यारह, तेरह की यति से चौबीस-चौबीस मात्राएँ होती हैं और अन्तिम दो मे पन्द्रह, तेरह की यति से अट्ठाईस-अट्ठाईस मात्राएँ।

हणूफाल—यह सम वर्णिक छंद है जिस मे सगण, जगण और जगण के क्रम से नौ वर्ण होते हैं। यह छंद मात्रिक रूप मे भी मिलता है।

विग्रक्खरी—यह सम मात्रिक छद है। प्रत्येक चरण मे चार चौकल अर्थात् सोलह मात्राएँ होती हैं पर अन्त में जगण नही होता।

चाद्रायणी—यह भी सम मात्रिक छन्द है। प्रत्येक चरण मे ग्यारह-दस की यति से इक्कीस मात्राएँ होती हैं। पर चौथे चरण के प्रारम्भ में प्राय 'परिहां' शब्द जुड़ा रहता है जिस की गणना इक्कीस मात्राओं के अन्तर्गत नहीं होती।

दूहो—यह हिंदी का दोहा छन्द है। यह अर्ध-सम मात्रिक छद है। इस के विषम चरणों में तेरह-तेरह तथा सम चरणों में ग्यारह-ग्यारह मात्राएँ होती हैं।

वडो दूहो—यह दोहे का भेद है। इस के प्रथम और चतुर्थ चरणों मे ग्यारह-ग्यारह मात्राएँ होती हैं और द्वितीय तथा तृतीय मे तेरह-तेरह मात्राएँ।

भुजंगी—यह संस्कृत का भुजगप्रयात वृत्त है जिस के प्रत्येक चरण मे चार यगण होते हैं। पर डिंगल मे यह मात्रिक रूप मे भी मिलता है अर्थात् एक गुरु वर्ण के स्थान पर दो लघु अथवा दो लघु वर्णों के स्थान पर एक गुरु वर्ण स्थापित कर दिया जाता है।

त्रोटक—यह संस्कृत का वर्ण वृत्त है जिस के प्रत्येक चरण मे चार सगण होते हैं। यह भी मात्रिक रूप मे भी मिलता है।

मोतीदाम—यह भी सम वर्णिक छद है जिस के प्रत्येक चरण में चार जगण होते हैं। इस का भी मात्रिक रूप मिलता है।

छंदों का प्रयोग कवि ने प्राय प्रसगानुकूल ही किया है। दोहा आत्म-पूर्ण मुक्तक उक्ति के लिए बहुत ही उपयुक्त छंद है। वीरों के पृथक्-पृथक् युद्ध का वर्णन करने मे कवि ने इस का विशेष रूप से प्रयोग किया है जिस से वे दोहे कथा-सूत्र के मोती भी बन सकें और स्वतन्त्र आभा भी व्यक्त कर सकें। युद्ध के लम्बे वर्णन के लिए चारण कवियों ने प्राय भुजगी और मोतीदाम को चुना है। त्रोटक शृङ्गार-वर्णन और वीर-वर्णन दोनो के उपयुक्त माना जाता है। वस्तुत मोतीदाम और त्रोटक सवैये के ही भेद हैं। सवैया जितना शृङ्गार के उपयुक्त होता है उतना ही वीर के भी।

वचनिका बड़े गद्य-खण्ड का नाम है और वार्ता छोटे का। दोनो का प्रयोग जगा ने यथोचित स्थान पर किया है।

वर्ण-विलोडन

पूर्व-सूरियो की अनूठी उक्तियों को अपने काव्य मे स्थान दे देना नौती साहित्य मे परम्परा-सिद्ध और शास्त्र-कार सम्मत है। आदि ग्रन्थ महाभारत तक मे पूर्व-वर्ती ग्रन्थों—उपनिषद् आदि—की उक्तियाँ मिलती हैं। इस क्रिया को चोरी नहीं माना गया। निरादर की दृष्टि से भी नहीं देखा गया। वचनिका मे भी पूर्व-वर्ती कवियो की उक्तियाँ है। 'आसीस-वचनिका'

तो पूर्णत अचलदास खीची की वचनिका की 'विरुदावली' का उद्धरण मात्र है। भुजगी छदो मे अनेक पर 'गज-रूपक' की छाप है। अश्व-वर्णन की उक्तियो मे 'राउ जैतसी रौ छद' का अनुकरण है। पर यह भी सम्भव है 'जैतसी रौ छद' तथा वचनिका दोनो ही मे किसी तृतीय मूल का अनुकरण हो।

आशा है वचनिका का यह साहित्यिक विवेचन जगा की साहित्यिक प्रतिभा का परिचय कराने मे सहायक होगा।

(५) 'वचनिका०' की भाषा का शास्त्रीय अध्ययन

(१) ध्वनि-समूह

डिंगल भाषा के स्वरूप की चर्चा करते हुए डिंगल की ध्वनियो का उल्लेख हो चुका है। प्राय वे सभी ध्वनियाँ वचनिका की भाषा मे भी उपलब्ध हैं। उन का ध्वनिशास्त्रीय विवेचन अपेक्षित है।

१. स्वर

अ—हिन्दी के समान मध्य, अर्ध-विवृत, ह्रस्व।

आ—अग्र, विवृत, दीर्घ।

आ—'आ' का ह्रस्व रूप है जिस का प्रयोग प्राय छन्द की दृष्टि से करना पडता है। जैसे-'हाडा गौड जादव ' ।'

इ—अग्र, सवृत, ह्रस्व।

ई—अग्र, सवृत, दीर्घ।

उ—पश्च, अर्ध-सवृत, ह्रस्व।

ऊ—पश्च, अर्ध-सवृत, दीर्घ।

ऍ—अग्र, अर्ध-सवृत, ह्रस्व। यह ध्वनि भारत की प्राय सभी आधुनिक भाषाओ मे विद्यमान है पर उसके लिए अलग लिपि चिह्न की व्यवस्था केवल द्रविड परिवार की भाषाओ में है।

ए—अग्र, अर्ध-विवृत, दीर्घ।

ऐ—अग्र-मध्य, अर्ध-विवृत, दीर्घ।

ऑ—पश्च, अर्ध-सवृत, ह्रस्व। इस के लिए भी लिपि चिह्न की व्यवस्था केवल द्रविड परिवार की भाषाओ की लिपियो मे की गयी है।

ओ—पश्च, अर्ध-सवृत, दीर्घ।

औ—पश्च-मध्य, अर्ध-सवृत, दीर्घ।

औ—यह 'औ' का ह्रस्व रूप है जिस का प्रयोग छन्द की आवश्यकता-वश करना पडता है।

प्राय- इन सभी ध्वनियों के नासिक्य रूप भी वचनिका मे प्राप्य है।

अं—अनुस्वार।

२. व्यंजन

वचनिका की भाषा में प्रयुक्त व्यजन प्राय हिन्दी के ही समान हैं। ल का

प्रयोग विशिष्ट है। 'व' का ओष्ठ्य रूप भी द्रष्टव्य है। ड और ढ दो पृथक् ध्वनियाँ है। इसी लिए हस्त-लिखित प्रतियो मे उन के लिए अलग लिपि-चिह्न भी मिलते हैं। हिन्दी की 'ढ' ध्वनि डिंगल मे नही मिलती।

संस्कृत के श, ष, ट और ल ध्वनियो के प्रयोग वचनिका मे नही मिलते।

विशेष विवेचन इस प्रकार हैं—

स्पर्श

क—कण्ठ्य, अल्पप्राण, अघोष।

ख—कण्ठ्य, महाप्राण, सघोष।

ग—कठ्य, अल्प प्राण, सघोष।

घ—कठ्य, महाप्राण, सघोष।

च—वर्त्स्य अल्पप्राण, अघोष।

छ—वर्त्स्य महाप्राण, अघोष।

ज—वर्त्स्य, अल्पप्राण, सघोष।

झ—वर्त्स्य, महाप्राण, सघोष।

ट—मूर्धन्य, अल्पप्राण, अघोष।

ठ—मूर्धन्य, महाप्राण, अघोष

ड—मूर्धन्य, अल्पप्राण, सघोष।

ढ—मूर्धन्य, महाप्राण, सघोष।

ण—मूर्धन्य, अल्पप्राण, सघोष, आनुनासिक।

ड—मूर्धन्य, अल्पप्राण, सघोष, उत्क्षिप्त।

त—दन्त्य, अल्पप्राण, अघोष।

थ—दन्त्य, महाप्राण, अघोष।

द—दन्त्य, अल्पप्राण, सघोष।

ध—दन्त्य, महाप्राण, सघोष।

न—दन्त्य, अल्पप्राण, सघोष, आनुनासिक

प—ओष्ठ्य, अल्पप्राण, अघोष।

फ—ओष्ठ्य, महाप्राण, अघोष।

ब—ओष्ठ्य, अल्पप्राण, सघोष।

भ—ओष्ठ्य, महाप्राण, सघोष।

म—ओष्ठ्य, अल्पप्राण, सघोष।

पार्श्विक

ल—सघोष, दन्त्य, पार्श्विक।

ळ—सघोष, पार्श्विक, उत्क्षिप्त।

घर्ष

स—अघोष, दन्त्य।

ह—अघोष/सघोष, काकल्य।

अन्त स्थ .

य और व अन्त स्थ ध्वनियाँ हैं जिन का प्रयोग कभी शुद्ध व्यजन के रूप मे होता है और कभी स्वर के श्रुति-गत रुप मे। तेस्सितोरी ने श्रुति-गत य व को स्वीकार नही किया और उन के स्थान पर इ उ के प्रयोग को उचित समझा। पर प्राचीनतम प्रतियो मे भी य व का प्रयोग मिलता है। अत हम तेस्सितोरी की कल्पना को निराधार समझते है।

(२) व्याकरण

सज्ञा

वचनिका मे प्रयुक्त सज्ञा, सर्वनाम और क्रिया-सूचक शब्दो मे हिन्दी के समान ही दो लिंग और दो वचन होते है। सजाओ के साथ विभक्तियो के अर्थ मे प्राय प्रत्ययो का प्रयोग होता है जो कभी-कभी पृथक् शब्द कहलाने के अधिकारी होते हैं। नीचे दिये हुए उदाहरणो से यह बात स्पष्ट हो जायेगी।

कर्त्ता—इस का कोई प्रत्यय नही। कभी मूल रुप से ही काम चल जाता है तो कभी विकारी रूप से। वहुवचन मे विकारो रुप अधिक मिलता है।

उदा०—मूल रुप—एक वचन— १. जसौ हालियौ (पु०)
२. नदी हेम थी ले चली (स्त्री०)
विकारी रूप—एक वचन—१. चगथै जसौ चलावियौ (पु०)
मूल रूप—वहु वचन— १ हाडा गौड जादव्व झाला हठाला (पु०)
२ गाडो नालि गोला चलै (स्त्री०)
विकारी रूप—वहु वचन—१ हाडा गौड़ जादव्व झाला हठाला (पु०)
२. हलीलाँ हिलै सप फौजाँ हसत्ती (स्त्री०)

कर्म—इस के प्रत्यय भी है और शब्द का मूल रुप अथवा विकारी रूप मे भी प्रयोग होता है।

उदा०—मूल रुप—एक वचन—चगथै जसौ चलावियौ।
मूल रूप—वहु वचन—दल वावल तावीन दे।
विकारी रूप—एक वचन—चलता इसा मीर तीरां चलावै।
प्रत्यय—नूँ, नै, दिसा, दिसि, दिसौ, सारू।
उदा०—(१) मरण तणौ सोवौ दे मो नूँ।
(२) महा रुद्र नै सिर पेस करां।
(३) मती उमगं लग दिसा।
(४) मेछ धडा दिसि मल्हपियौ।
(५) औरँगसाह दिसौ आखौ इम।
(६) सभे चालियौ एम उज्जैणि सारू।

करण—इस का प्रयोग प्राय शब्द के मूल रूप मे होता है। प्रमुख प्रत्यय 'सूँ' है।
उदा०—मूल-रुप—(१) विधि एणि गयौ लग क्रित्ति वरे।
(२) चढिया पौरस सूँच।

प्रत्यय— (१) सूं पतिसाहाँ सूत्रण समहर।

सम्प्रदान—इस के मुख्य प्रत्यय कजि, छलि, सारू आदि हैं।

उदा०—(१) कमधज राव तणां जतनां कजि।

(२) रोहड छलि राजा रतन।

(३) सीख रतन कीधी सगि सारू।

अपादान—इस के प्रत्यय थी और सूं है।

उदा०—(१) नदी हेम थी ले चली जाणि नीर।

(२) आकास सूं सोव्रन मैं विवाण पिणि आया।

सम्बन्ध—इस के प्रत्यय है तणौ, रौ, हरौ, कौ जिन के उत्तर पदके अनुसार बहु वचन, स्त्रीलिंग आदि के विचार से तणां, तणी, रै, रा, री, हरा, हरी, हर आदि रूप बनते हैं।

उदा०—(१) रासौ रैणायर तणौ।

(२) तिणि वार त्रिया रतनेस तणी।

(३) राण तणां कपि राय।

(४) कीरतियां रौ झूंबकौ।

(५) महासरवर री पालि।

(६) आप रै पूत परिवार नैं।

(७) दिली रा वाका।

(८) हणमंत ज्यूं जैता हरौ।

(९) (मधकर का आखाड मल)

कुछ प्रतियो मे 'चौ' प्रत्यय भी मिलता है। (दल सिणसागर वस चौ दीवौ) जो मराठी प्रभाव प्रतीत होता है। 'चौ' तथा उसके अन्य रूपो—'चा', 'ची'—का प्रयोग अन्य डिंगल ग्रन्थो मे भी मिलता है।

अधिकरण—इस के प्रत्यय मां मांहि, मांहे, मां, माथै, मझि आदि हैं।

उदा०—(१) तियां मांहि ऊभी वर्ण रेख तास।

(२) इतरा माहे वात करतां वार लागै।

(३) पडै आगि मां उड्डि जेहा पतग। (कुछ प्रतियो मे 'मैं')

(४) माथै साहिजादां विहां राव मारू।

(५) रहे रतन मझि राडि।

सम्बोधन—एक वचन मे शब्द मूल रूप मे रहता है बहु वचन मे विकृत रूप मे।

उदा०—(१) क्यूं बारहठ जसराज। हां महाराज।

(२) ठाकुरो सतरज रौ ख्याल मडियौ।

लिंग और वचन—वचनिका मे प्रयुक्त सज्ञाएं ओकारान्त-बहुला है। जिन के स्त्रीलिंग मे ईकारान्त और बहु वचन (पु०) मे आकारान्त रूप होते हैं।

उदा०—ऊपर सम्बन्ध कारक के उदाहरणो से स्पष्ट हो जायगा। यथा—तणौ, तणा, तणी।

सर्वनाम

वचनिका मे प्रयुक्त सर्वनाम शब्द जितने रूपो मे प्राप्य है उन का विवरण इस प्रकार है —

हूँ (मैं)—विहुँ पतिसाह सरिस हूँ बाथे ।

मो (मेरे)—रिण मो रहियां राज रहेसी ।

मौ (मुझे)—मौं थां आडी मेल्हियौ ।

मोनूं (मुझे)—मरण तणौ सोबौ दे मोनूं ।

म्हारौ (मेरा)—धड म्हारौ भजूं खग धारे ।

मूझ (मुझे)—रिण आवगो मूझ दे राजा ।

माहरै (हमारे)—माहरै तो भगवानदास वाघौत कहता ।

आपे (हमने)—आपे तौ अणी वांटि हरवल किया ।

तोनूं (तुझे)—टीलौ राज धरा छळ तोनूं ।

तुम (आप)—तुम सिरहर दुइ राह ।

थे (आप)—थे तौ आवू आंबेर ऊजळा करि ।

थां (तुम्हारे-ब० व०)—मौ थां आडौ मेल्हियौ ।

आपा (स्वय ही)
अप्प (अपनी) }—आपा औद्रकै अप्प छाया अपार ।

आप (अपना)—आप रै पूत परिवार नै ।

निय (अपना)—निय वंस चाढे नूर ।

आ (यह-स्त्री०)—आ तो ग्रीखम रित ।

ओ (यह-पु०)—ओ तौ वडौ अवसाण आयौ ।

ए (ये)—ए बेवं अरडिग ।

इण (इन)—इण जाइगा ।

एणि (इस से)—विधि एणि गयौ सग क्रित्ति वरे ।

उणि (उस)—उणि वेला लागौ अरसि ।

तिकौ (वह-पु०)—दाणव तिकौ पछे फिरि दहियौ ।

तिका (वह-स्त्री)—तिका तो वात आय ।

तिके (वे-पु०)—जीवै तिके भलां घरि जावौ ।

तिणि (उस)—तिणि वेला राजा रैणसाह ।

तिण (उस)—तिण वार त्रिया रतनेस तणी ।

तियां (उन)—तियां मांहि ऊभी वर्ण रेख तास ।

त्यां (उन)—त्यां मांहि जसराज गजणतण ।

त्यानूं (उनको)—त्यानूं सरजीत कीजै ।

ते (उस पर)—[ते पाटि अछै महिराण तन ।] कुछ प्रतियो मे यह पाठ मिलता है । अधिकाश मे 'ते' के स्थान पर 'तिणि' है जो हमने भी स्वीकार किया है ।

जास (जिस का/की/के)—पित जास महेम नरेस पिर ।

जासु (जिन का/की/के)—नळी जन्त्र मै जासु वाखाण नक्ख ।

टिप्पणी—जास और जासु दोनो ही रूप एक ही शब्द के है और इन का प्रयोग एक वचन मे भी हो सकता है और बहु वचन मे भी । जास को एक वचन और जासु को उस का बहु वचन नही समझना चाहिए ।

जियाँ (जिन का/के/की)—पुडच्छी जियाँ तोछ पै कथ पूरा ।

ज्याँ (जिन का/के/की)—तरुआर ज्याँ तेज रा ताप तुट्टै ।

जिके (जो ब० व०)—न भागै जिके जुद्ध भागाँ न मारै ।

जिणि (जिन)—गढ विड्ढि लियौ जिणि देवगिर ।

जिण (जिस)—जिण आगै जमराणौ विमुहा खडै ।

जिही (जिस)—मलराव जिही जगि आपमला ।

जे (जो-पु०)—पवै जे प्रिथीनाथ भूपाल पूरा ।

जेणि (जिन)—केवियाँ दल तडल जेणि किया ।

कासूं (क्या, कौनसा)—कहो जाव कासूं कहाँ ।

को (कोई)—जस मीढ न को नर सूर जती ।

कोइ (कोई)—कमँधाँ कोइ न बुरो कहेसी ।

कुण (कौन)—राज जितरौ कुण जाणै ।

किणि (किस)—कहि दिखावै किणि भाँति ।

आपणी (अपनी)—आपणी ही केइ एक सुणसी ।

राज (आप)—राज जितरौ कुण जाणै ।

याँ (इन ने)—याँ हरिनाम उचारियौ ।

वाँ (उन ने)—वाँ रहिमान अलाह ।

सु (सो)—सु औ वडौ अवमाण आयौ । [कुछ प्रतियो मे] ।

विशेषण

वचनिका की भाषा के विशेषणो की स्थिति प्राय हिंदी से मिलती-जुलती है । प्राय उन के लिंग और वचन विशेष्यानुवर्त्ती होते हैं पर अकारान्त विशेषण ऐसे होते हैं जिन मे लिंग और वचन से कोई अन्तर नहीं आता ।

गुण बोधक विशेषणो मे सूर, वीर, दातार आदि कुछ शब्द तो हिन्दी के समान ही हैं पर अधिकाश डिंगल के विशिष्ट शब्द हैं । यथा—*अगाह, अणकल, अणबीह, अमलीमाण, अरडिंग, अरेस, अवसाणसिध, अमथ, आपमला, लजायम, हीरजडित आदि ।*

इदकृता, इयत्ता और सख्या-बोधक विशेषणो का भाषा मे बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान होता है अत इस कोटि के वचनिका-प्रयुक्त विशेषणो का परिचय भी आवश्यक है —

घणूं—घणूं कहर बीती घडी ।

अतरा—अतरा माहे नाचौरा मछरीक ।

इतरा—इतरा भड औनाड ।

इसडी—इसडी बेढ री डाकणि वात ।

इसौ—सु इसौ अवसाण आयौ। [कुछ प्रतियो मे]।

इसै—बाजै इसै विनाणि।

इसा—चलता इसा मीर तीरां चलावै।

इसी—वहती इसी पथि ओप्पै वहीर।

ऐसा—दळां रोळ दताळ ऐसा दुगम।

ऐसी—ऐसी उरवसी जैसी अपछरा।

एहा—एराकी वडा खेंगरू गात एहा।

इहडी—उघरै पख च्यारि जिसा इहडी।

कैसा—सभा रूप कैसा।

किसडी—किसडी ही क दीसै।

किहडी—कुळवति पतीवरता किहडी।

जिसौ—रण रामायण जिसौ रचावां।

जिसा—जिसा गोवरधन अनड।

जैसा—बारहठ जसराज जैसा कवेसर।

ज्यारका—विराजै ज्यारका।

जिसडौ—जिसडौ कीरतियां री झूंबकौ।

जितरौ—राज जितरौ कुण जाणै।

जैसी—ऐसी उरवसी जैसी अपछरा।

जेहा—बलि जेहा चक्कवै हुवा जिण वस नरेसुर।

जेही—जैंगम्म पसम्म मुखमल्ल जेही।

तिसी—तन रभह खभ कनक तिसी।

संख्यात्मक विशेषण—सख्या-सूचक जितने प्रयोग वचनिका मे द्रष्टव्य हैं वे आगे दिये जा रहे है।

एक—एक जसौ अणभग।

एकणि—एकणि चोट अताग।

दुइ—तुम सिरहर दुइ राह।

दुज्जौ—कहियौ यां दुज्जौ करन।

दुवै—दुवै फौज फव्वै गिर गज्ज डाणै।

दुहुं—दुहुं बाजार भैंडा देठाळै।

दोवै } चत्रवाह साह दोय राह चढि सझि फौजां दोवै समथ।
दोय }

दूसरौ—दूसरौ मधुकर।

वि वि—खगां चढि धार हुवै बि बि खड।

बिहुं—साहिजादां बिहु सांमुहौ।

बिहां—मायै साहिजादां बिहां राव मारू।

बिन्है—निपट बिन्है दळ आया नैड़ा।

विन्हे—विन्हे फौज फौजाँ घणी चत्रवाहु ।
वीजा—वीजा या साथे दळ सव्वळ ।
वीये—रचि वीये दिन राडि ।
वे—वे भाई विरदाळ औरँग साहु मुराद इम ।
वेवै—ए वेवै अरडिंग ।
वेहू—चद सूरिज वेहू खवासी करै छै ।
उभै—उभै विरद्दाँ उद्धरै ।
तीन—तीन पोहर हाथूके महाराजा जसराज ही लडै ।
त्रिण्ह—च्यारि राणी त्रिण्ह खवासि ।
त्रिण्हे—त्रिण्हे लोक कौतिक्क देखत त्यार ।
तीसरो—औ तीसरो महाभारथ ।
गुर—थर हर गुर भुवणे थिया ।
चत्र—चत्रवाहु साहु दोय राह चढि ।
च्यारि—च्यारि राणी त्रिण्ह खवासि ।
चौथा—चौथा पोहर लागा ।
पच—इंद्री पच जीपै महासूर अेहा ।
खट—खट भाख जाण ।
छह—छह रित नव रस निजर आवै ।
छ—छ खड खुरसाण ।
सपत—छह राग छत्तीस रागणी सपत सुर ।
गुरचत्र (तीन + चार = सात)—जलनिधि गुरचत्र जाणि ।
सात—सात समँद गिरि आठ ताम धर मेर टळट्टळि ।
आठ—आठ असुर गज एक ।
नव—नव लाख नाखित्र माल ।
नव्व—खगाँ मारि डडे जिके नव्व खड ।
दसो—घोडा चढि चढि दसो दिसि चाली ।
बारह—वारह घण भुँहडा आगे छिडकाव करै ।
तेरह—सिणगार तेरह सक्ख ।
सोळ—विधि साहस सोळ सिंगार वणी ।
सोलह—सोळह सिंगार रग प्रेम का झड ।
अढार—जाणै अढार भार वनसपति ।
छवीस—वणाँ त्रिण सै सर सेल्ह छवीस ।
त्रीस—कसीस गुण त्रीस टकी कवाण ।
तेतीस—तेतीस कोडि देवता ।
छत्तीस—छत्तीस वस हिंदू सरजीत करि ।
छत्रीस—छत्रीस वाजित्र वाजे छै ।

छतीस—अैसा वंस छतीस देरगह उम्बरा ।

त्रीस-छै—कसै आवध त्रीस छै जुज्झ कज्ज ।

बावन—चौसठि जोगणी बावन वीर ।

बासठि—बासठि हजार फौजां रा भांजणहार।

चौसठि—चौसठि जोगणी बावन वीर ।

असी—असी खग घाव लगा जब अग ।

चौरासी—चौरासी सिद्ध विराजमान हुवा छै।

आधी—क्रमं जाणि आधी निसा अधकार ।

आधौ—आधौ दल ऊडाडि ।

सवाया—गडा सवाया गणणिया ।

चौथा—चौथा पीहर लागा ।

सातमै—पग सातमै पयाळि ।

हजारां—हजारां मुहां वाथि ह्वै गीर हक्क ।

हजारी—पच हजारी पाडतौ ।

सद्दी—पच सद्दी वि सद्दी ।

पनरोतर—पनरोतरै वरस्सि ।

लक्ख—दन सासण लक्ख गजेद्र दिया ।

लाख—लाख लाख रा लाखीक ।

कोडि—तेतीस कोडि देवता ।

सको (सब)—सको सचाळा सत्थ ।

सारा—जोध सारा इम जप्पै ।

सारी—धुध हुवै सारी धरा ।

स्रब्ब—लियां साहि रा उबरां स्रब्ब लारां ।

वौह—करि बौह कोड पौहप वरिखा करि ।

बह—रैणा सुरही बह ।

एतां—रूप भूप एतां रतन ।

इतरा—इतरा भड औनाड ।

सार्वनामिक विशेषणो का परिचय सर्वनामो के प्रसंग मे कराया ही जा चुका है ।

क्रिया

किसी भी भाषा की सब से बडी विशेषता है उन के क्रिया-रूप । वचनिका मे प्रयुक्त क्रियाएँ सस्कृत मूलक भी हैं और डिंगल की विशिष्ट क्रियाएँ भी, जिन को देशज कहा जा सकता है । दोनो ही वर्गों की क्रियाएँ सयुक्त रूप मे भी मिलती हैं और एकल रूप मे भी । सयुक्त क्रियाएँ पुन दो प्रकार की है—दो क्रिया-शब्दो के मेल से बनी हुई और क्रियेतर शब्द के साथ क्रिया के मेल से बनी हुई । बहुत-सी क्रियाओ के णिजन्त रूप भी वचनिका मे द्रष्टव्य हैं । इन सभी वर्गो की क्रियाओ का परिचय कराने के लिए आगे उन के उदाहरण

दिये जा रहे है। डिंगल की क्रियाओ के मानक रूप मे अन्त मे 'णौ' होता है जैसे हिन्दी मे 'ना' (पढना आदि)। उदाहरणो मे हम 'णौ' को छोडकर शेष मूल रूपो का ही प्रयोग करेंगे। जैसे मानक रूप 'सुमरणौ' के स्थान पर केवल 'सुमर'।

सस्कृत मूलक क्रियाएँ—(१) एकल—सुमर, बखाण, हो (व), उद्धर, दे (व), समाप, ले (व), ग्रह, कर, जा (व), पूज, रह, पड, बैठ, कोप, कह, सज, चल, चाल, उड, वह, फट, सोख, पा (व), खड, आ (व), रच, मिल, भाग, गुड, बध, धर, कस, बैस, आरोह, छा (व), क्रम, मर, उल्लट, गाज, लिख, रोक, परस, सुण, पूछ, आस, जाण, जप्प, थप्प, बूझ, सूत्र, मरण, अड, सझ, जीव, भोग, दह, गज, भज, तोल, हस, दरम, पोख, विधूँस, विभाड, तपण, विराज, खेल, डड, धूँस, हण, जळ, बाँध, अप्प, जुड, उचार, सूक, वरण, जाग, लाग, वाज, वाग, गा(व), ऊछल, बरस, भर, जूट, बसण, तज, उल्हस, तूठ, वधार, विहड, झाड, सोह, नीवड, पाधार, मान, दीप, जीप, जिगमग, पुग, लोप, पी, धूम, सोच, वर, ऊवर, लह, ऊघड, छोह, आण, ताण, राज, पूर, गिण, धस, त्रुट, भाज, तोड, मरोड, ओड, वाच, भाव आदि।

(२) सयुक्त—(क) (क्रिया+क्रिया)—ले चल, जाण पा (व), गाज हो (व), जाण दे (व), खड कर, वणि आ, कहि दिखा।

(ख) (क्रियेतर+क्रिया)—वधारो दे, साधि कर, सग लग, वणाव कर, चाक चढ, राड कर, सिनान कर, पाव परस, पारि कर, राड रच, लूण वार, समाइ जा, सग जा, कामि आ, क्रीडा कर, निरत कर आदि।

देशज क्रियाएँ—(१) एकल—वेढ, विढ, हकार, हाल, वल, छिल, सालुल, ढुल, रुल, ग्रह, भिल, फरर, आमूझ, गूँडल, घुन, मेल्ह, तेड, हेडव, घात, साचव, छिक, गाह, सेल, ओद्रक, ऊमट, रोल, खिंव, लुड, खलक, ऊपट, पट, चोपड, कछ, ठेल, कड्ख, कसस्स, निहस्स, सलम्सल, टलट्टल, ढूक, गणण, खूट, भल, मल्हप, खडर, घडहड आदि।

(२) सयुक्त—मेल हो (व), झाँखो कर, धाक पड, जोडै धर, टल्ला खा (व), ऊभो हो (व), कोड कर, तण्डल कर, दाग दे, झोला खा (व) आदि।

विदेशी—कुछ फारसी आदि की क्रियाएँ मूल रूप मे भी आयी है और कुछ फारसी शब्दो के साथ अन्य क्रियाएँ जोड कर बनी सयुक्त क्रियाएँ भी दृष्टि-गोचर होती हैं। यथा

(१) एकल—वहस्म, बगस, फाब आदि।

(२) सयुक्त—कूच हो (व), डेरा हो (व), जाब कह, अरज कर, निजरि आ, पेस कर, मुकाम कर, पैदास कर आदि।

णिजन्त—णिजन्त रूपो मे भी कुछ क्रियाएँ वचनिका मे प्रयुक्त हुई है। यथा

मँडाह, चाट, पाड, चलाब, वजाड, वहाड, सुणाव, पाब, विहँडाव, गवाड, वजाड, बैसार, गिराव, चाव, भमाड, जडाव, दाख, ऊडाड, वाढ, रचा (व), दिढाव, वेढाड, परठ, बुलाव, भुजा आदि।

तिडन्त और कृदन्त—वचनिका मे प्रयुक्त क्रिया-रूप सस्कृत तिडन्त के वर्ग के भी हैं और कृदन्त के वर्ग के भी। भूत काल मे हिंदी के समान कृदन्त-जन्य प्रयोग है पर वर्तमान तथा भविष्य काल मे प्राय तिडन्त-जन्य है। यथा

कृदन्त—क्त—हुँता<भूता (पु०, व० व०)।

किया<कृता (पु०, व० व०)।

कहियो<कथित (पु०, ए० व०)।

परठियो<प्रस्थापित (पु०, व० व०)।

मडियो<मण्डित (पु०, व० व०)।

चली/चाली<चलिता/चालिता (स्त्री०)।

तिङन्त—वर्तमान—दीसै<दृश्यते।

पडै<पतति।

भविष्य—जाइस्याँ<गमिष्याम, खाइस्याँ<खादिष्याम।

गाजसी<गर्जिष्यति, कहिसी,<कथयिष्यति।

पुरुष—वचनिका की क्रियाओ मे उत्तम, मध्यम और अन्य (प्रथम) पुरुष का भेद है। विध्यर्थक (लोट्) रूप का तीनो पुरुषो मे प्रयोग द्रष्टव्य है।

प्र० पु०—अखियाति ऊबरै। ए० व०।

गाजै द्वारि गयन्दो। व० व०।

म० पु०—कहो जाव कासूँ कहाँ। व० व०।

राजा राखो। व० व०।

राडि म करि। ए० व०।

उ० पु०—मराँ तो अपछराँ वराँ। व० व०।

कहो जाए घूँ केम। ए० व०।

लिंग—वचनिका की क्रियाओ मे भूत काल मे तो लिंग-भेद होता है क्यो कि वे कृदन्त-जन्य हैं पर वर्तमान और भविष्य मे नही होता। कुछ उदाहरणो मे यह कथन पुष्ट हो जायेगा।

भूत— जुवि जूटो जैसा हरो। ए० व०, पु०।

रिण तूर वागा। देवासुर देखवा लागा। व० व०, पु०।

हेमन्त रित लागी। सिसिर रित जागी। ए० व०, स्त्री०।

नालेर उछालि वलण चाली। व० व०, स्त्री०।

वर्तमान— पवन वाजै छै। ए० व०, पु०।

अनेक खग विहगम कीला करै छै। व० व०, पु०।

उरवसी जैसी अपछरा निरत करै छै। व० व०, स्त्री०।

सती उमगै नग दिसा। ए० व०, स्त्री०।

भविष्य— देवता न्यावाम कहिसी। व० व०, पु०।

वात रहिसी। ए० व०, स्त्री०।

राज रहेसी। कोई न बुरो कहेसी। ए० व०, पु०।

पर वर्तमान काल मे यत्र-तत्र कृदन्ती रूप के साथ 'छै' क्रिया का प्रयोग होता है। फलत कृदन्ती रूप मे लिंग-भेद होना स्वाभाविक है। यथा

विराजमान हुआ छै। (पुंलिंग)। जिसका स्त्रीलिंग मे 'हुई छै' होगा।

वाच्य—वचनिका की भाषा मे हिंदी के समान कर्तृ-वाच्य, कर्म-वाच्य और भाव-

वाच्य—तीन वाच्य पाये जाते है। यथा

कर्त्तृ— जुवि जूटो जैसा हरो। ए० व०, पु०।
देवासुर देखवा लागा। ब० व०, पु०।
डाकरिण वात दसो दिसि चाली। ए० व०, स्त्री०।
दान पु न करण लागी। ब० व०, स्त्री०।

कर्म— गढ विड्ढि लियौ जिणि देवगिर। ए० व०, पु०।
केवियाँ दळ तडळ जेरिण किया। ब० व०, पु०।
अमर देह पाई। ए० व०, स्त्री०।
सुन्दर मिन्दर सौव्रने अदर लई बधाइ। ब० व०, स्त्री०।

भाव— महाराज मानी।
राजा रतन वैकुण्ठनाथ महाराज सूँ कहियो।

लकार—वचनिका मे वर्तमान, भूत और भविष्य काल को व्यक्त करने के लिए तो पृथक् क्रिया रूप हैं ही साथ ही लोट् (आज्ञा, प्रेरणा आदि) तथा लिङ् (कामना, चाहिए आदि सूचक) के लिए भी पृथक् रूप है।

वर्तमान, भूत और भविष्य के उदाहरण तो लिंग-विवेचन के प्रसग मे आ ही गये है। लोट् और लिङ् के अर्थ को व्यक्त करने वाले कुछ उदाहरण पर्याप्त होगे।

लोट्— जाण द्यूँ केम।
राजा राखो।
अखियात ऊबरे।

लिङ्— गाजै द्वारि गयन्दो।
लोहाँ रा बोह सेलाँ रा धमका लीजै।
डण्डाहडि खेलीजै।
पुरजा पुरजा हुई पडीजै।
जोधाँ धणी घणा दिन जीवो। (मिलाइए—राजा राखो)।
मुंहडा आगे लडाँ।
टूट टूक होय पडाँ।

अव्यय—क्रियाविशेषणादि

इस वर्ग के प्रमुख शब्दो के उदाहरणो से उन का प्रयोग स्पष्ट हो जायेगा।

अनमध=अबाध रूप मे	—मरद् जरद् पडै अनमध।
इम, ईम =यो	—इम अक्खै उँवराव राज जितरो कुण जाणै।
	—अडै सिर व्योम कमधज ईम।
अेम, अेमि =यो	—सभै चालियो अेम उज्जेणि सारु।
	—आगा कहियो अेमि।
केमि=कैसे	—कहो जाणद्यूँ केमि।
क्यूँ=क्यो	—क्यूँ बारहठ जसराज।
जई=जब	—जालोर पटै गढ दीध जई।

जद=यदि, जब	—जपि आवाहन सुर ईसट जद ।
जब	—जसवत औरँग साह जब ।
जेम } =जैसे, मानो	—आवै जावै अपछरा जग अरहट घडि जेम ।
जेमि }	—भुवपत्तिय जेमि रतन भण ।
ज्यूं=जैसे	—पाडव ज्यूं पतिसाह ।
जेही=जैसी	—जँगम्म पसम्म मुखमल्ल जेही ।
जाम }	—जुटा रतनागर औरँग जाम ।
जियार } =जब	—जयज्जय जोगिणि किद्ध जियार ।
ज्यारां }	—जसवत अेम बोलियो ज्यारां ।
जिणि वार=जिस समय	—सार तणै भरि सोहियो जीवो ही जिणि वार ।
जिम=ज्यों	—भमाडण रोद गजां जिम भीम ।
तई=तब	—टगटग्गी लग्गी तई ।
तठै=वहां	—तठै बधेज कियो ही ज छै ।
आगलि	—सोनगिरो आगलि सळवळां ।
आगै } पीछै }	—आगै पीछै आव ।
अग्गै	—आरावां निवावां किया थट्ट अग्गै ।
उप्परै } =ऊपर	—पवै उप्परै जाणि फूले पलास ।
ऊपरै }	—उललटिया इल ऊपरै ।
उप्परां	—पतिसाही थां उप्परां ।
आडो	—मो थां आडो मेल्हियो ।
आडा	—आडा साहि मडिया अनड ।
आम्हो साम्हां	—आम्हो साम्हां ऊछलै ।
ताम }	—ताम रयण तेडियो त्रिभं तण ।
तियारां }	—तेडि माहेस तियारां ।
त्यार } =तब	—त्रिण्हे लोक कौतिक्क देखत त्यार ।
त्यारां }	—तण माहेस अरज की त्यारां ।
सई }	—सनमग्न करे सुरताण सई ।
ज्यॉं=जहां	—ज्यां साहिजादो जोर ।
तिमि=त्यों	—श्रीकम काल जवन आगै तिमि ।
अनै } =और	—सुपह अनै पतिसाह ।
अर }	—गाया अर सुणाया ।
नै=कर	—चरणाइ नै ऊभा हुवै ।
अवर	—अवर ही छत्तीस वस ।
कि	—जाणि कि बाग विधूंसिया ।
क	—किसडी ही क दीसै ।
किना=अथवा	—किना लका पति कुम्भेण कहीजै ।
किर } =मानो, अथवा मानो	—बादल किर वरसाल ।
किरि }	—किरि दुज्जोण करन ।

कै=अथवा	—फटो आभ कै जाणि सामद्र फट्ट ।
पिण=पर	—पिण औ महाभारथ री आगम ।
बळि=भलेही	—राजा बळि बुज्भो रतन ।
तो	—तिका तो वात श्राय ।
तौ	—तौ वकुण्ठ चढीजे ।
निपट	—निपट विन्है दळ श्राया नैडा ।
फिरि	—जोड़ दिली फिरि जाइस्यां ।
लगै=तक	—साह लगै दे जाण ।
म	—राडि म करि इक तरफ रहि ।
नही तौ	—नही तौ जीवित सिम हुई ऊवरा ।
जाणि } =मानो	—पवै उप्परै जाणि फूले पलाम ।
जाणै	—जाणै वरफ रा टूक ।
ही	—सती ही श्रावै ।
कजि } =के लिए	—कमधज राव तणाँ जतनाँ कजि ।
काज	—करण मरण पह काज ।
कन्है } =के पास	—करनाजल श्रणवर कन्है ।
गोढै	—सूजावत गोढै मधकर सझि ।
पाखती=पास	—पडि भूंइ कमधाँ पाखती ।
छलि } =के लिए	—जसवत छळि मार्तं जुडणि ।
छळ	—टीली राजधरा छळ तानू ।
चौसरा=चारो श्रोर	—चौसरा चँवर ढुळै छै ।
तरफ	—इक तरफ रहि ।
दिसा } =तरफ	—सती उमग्गे लग दिसा ।
दिसि	—सुज्जा दिसि जैसाह सजि ।
दिसौ	—श्रौरगसाहि दिसौ श्राखौ इम ।
परवै } =बिना	—पखे पार वीवा हिलै थट्ट पूरा ।
पारवै	—पाखै तराँ पहाड ।
हाँ जी	—हाँ जी दूलह क्यूं चलै विगर जानी ।
ज	—श्रौ ही ज धणी दे ज्यौ ।
परि=तरह	—भीम तणी परि भीम ।
सारिखा=सदृश	—सूर वलू सारिखा ।
नै	—श्रापरै पूत परिवार नै ।
नूं	—मरण तणी सोवौ दे मो नूं ।
तणौ	—रामौ रैणायर तणौ ।
तणी	—तिण वार त्रिया रतनेस तणी ।
तणाँ	—कमधज राव तणाँ ।
रै	—श्राप रै पूत परिवार नै ।

रो	—कीरतियाँ रो भूँवणो ।
रा	—दिली रा वाका ।
री	—महासरवर री पालि ।
का	—मयकर का आखाड मल ।
पूठि=पीछे	—डेरा पूठि चदोल दिवारे ।
यूँ	—यूँ कहियो अनपत्ति ।
साम्हाँ	—ऊडे सर साम्हाँ अखत ।
साँम्ही =सामने	—आगै सुर त्रिय साँम्ही आई ।
सामुहा	—सेन उजेणी सामुहा ।
माँ	—पडै अगिग माँ उड्डि जेहा पतग ।
माथै=ऊपर	—माथै साहिजादाँ विहाँ राव मारू ।
विचै	—गोल विचै सिरदारे ।
विचि =बीच मे	—विचि झड थड मडे वडा ।
विचाल्ँ	—क्रमतै रौद्रायण कियो व्योम विचालँ व्योम ।
वाहिर	—आया वाहिर अेम ।
माहे =मे	—इतरा माहे वात करताँ वार लागै ।
महि	—महि लोहडो पुरसाण मँडोवर ।
सारू=के लिए	—मझे चालियो अेम उज्जेणि सारू ।
हरो=वाला	—जोवा हरो-रूप जैतारण ।
ते से	—खळक्कै गिरा मेर ते नीर खाळ ।
तै	—आत लोक तै स्रग लोक जायस्याँ ।
सूँ =से	—पतिसाहाँ सूँ पाघरै लोह जरी का लेण ।
थी	—नदी हेम थी ले चली जाणि नीर ।
सहित	—चडी सहित ईसर त्रिखभ चढि आया ।
सगि	—लजाथभ सीसोदियाँ सगि लीधाँ ।
साथै =साथ	—पोतो साथै परठियो ।
साथि	—कमधाँ वडाँ कूरिमाँ साथि कीधाँ ।
सहि	—तुम सहि जोवाँ छात ।
मझि=मे	—रहे रतन मझि राडि ।
वाह वाह	—वाह वाह वारहठ जी भली कही ।
हो	—वाप हो वाप ।

कृदन्त

कृदन्तो के जो अनेक रूप वचनिका मे दृष्टिगोचर होते हैं उन का उदाहरणो सहित परिचय आगे दिया जा रहा है ।

१. पूर्वकालिक—ये प्राय इकारान्त होते है । यह इकार वचनिका की कम पुरानी प्रतियो मे लुप्त हो गया है ।

उदा०—सुमरि, ग्रहि, समापि, चढि, कराडि, भरणादि ।

२ विशेषणार्थक (Participles)

ग्राँ—लियाँ, हुग्राँ, कीधाँ, लीवाँ ।

ग्रत—सोभत, देखत, वारत ।

ग्रता—पडता, मरता, भिडता, कसता ।

ग्रती (स्त्री)—वहती ।

तौ—जातौ (विकरण-जातँ) ।

३ तुमर्थक—ण—लेण, रचण, करण ।

वा—करेवा, मरेवा, जुडेवा ।

४. भूतकालिक (क्तार्थक)—जीवत, मृत, मुवा, हुग्रा, ग्राडियौ ।

५ कर्तृत्वबोधक—ण—तारण, दियण, माँडण, मडण ।

हार—भाँजणहार, विधूंसणहार ।

ग्रार—दातार, झूझार ।

गर—जाणगर ।

तद्धित

ग्रपत्यार्थक तद्धित का बोध कही तो मूल शब्द के बहु वचन रूप से व्यक्त कर दिया जाता है और कही पृथक् प्रत्यय द्वारा ।

उदाहरण—बहु वचन—चाँपाँ, कूपाँ, ग्रचलाँ, जोधाँ ।

ग्रा—साँचोरा (साँचोर गाँव का) ।

वत—दलावत, जैतावत, धरमावत ।

ग्रौत—डूंगरौत, सुरताणौत, भारमलौत ।

ग्राण—बोधाण

ई—देवडी, कछवाही ।

वति—सेखावति, राजावति ।

मत्वर्थी—जमडाढाल, चामरियाल, हथाला, भूलाल, ग्रोचालौ, दताल ।

मयार्थी—जत्र मैं ।

समास

वचनिका मे समस्त शब्दो की भी कमी नही है पर उन मे विशेष द्रष्टव्य बात है फारसी ढग के समास । यथा —भाँजण गर्जा, तारण पवस ग्रादि ।

(३) शब्द-भडार

वचनिका के शब्द-भण्डार मे ग्रनेक कोटि के शब्द दृष्टिगोचर होते है । जैसे—डिंगल के विशिष्ट शब्द, विदेशी (ग्ररबी-फारसी के) शब्द और ध्वन्यनुकरण-मूलक शब्द । इन मे विदेशी शब्दो की मात्रा ग्रनुपात की दृष्टि से बहुत कम है । ऐसे शब्दो के उदाहरण

है —दीवाण, साहिजादा, तावीन, राह, फौजां, दर कूच, हुकम, काइम, निजर, स्याबास, जिहाज आदि।

ध्वन्यनुकरण-मूलक शब्दो की सख्या अनुपात मे विदेशी शब्दो से अधिक है पर सस्कृत और डिंगल के शब्दो से कुछ कम। उदाहरण द्रष्टव्य है —

गडगड, हडवड, धडडि, खाटखडि, झहझह, चडच्चड, झाटझडि, धडधड, कणकण, कळळ, सळस्सळि, टळट्टळि, खडक्खड, गणणिया, घमधम, वडवडते, वडवड्डियो झडज्झड, कडक्कड, वडव्वड, दडव्वड, रडव्वड, अडव्वड, रमज्झम आदि।

डिंगल के विशिष्ट शब्दो की सख्या तो वचनिका मे बहुत अधिक है ही पर इस से भी अधिक ध्यान देने योग्य बात है एक ही अर्थ के व्यजक अनेक पर्यायो की बहुलता। नीचे के उदाहरणो से यह स्पष्ट हो जायेगा कि एक ही भाव के लिए कितने-कितने पर्यायो का प्रयोग वचनिका मे उपलब्ध है

घोड़ा—अलल्ला, खेंगरू, तुरी, पवग, प्रवग, भिडज्ज, वाज, विडग, सारग, हैमर, हैवर।

हाथी—गैंवर, गज, छछाळ, धेंधिंगर, पटाल, वइण्डा, हाथी, कुजर, मैंमत, गयदो।

मुसलमान—असुरायण, किलव, खुदालिम, खान, चकथा, चामरियाल, चुँगलाल, जवन, बगाळ, वीबा, मळेच्छ, मेछ, मुगल, मुगलाल, मेछाल, रवद, रौद्र, रौद्राल, रुद्र, रौद्रायण।

ये शब्द मूलत मुसलमानो की विविध जातियो अथवा उन के गुणो के बोधक थे पर वचनिका मे मुसलमान के सामान्य अर्थ मे ही प्रयुक्त हुए है।

तलवार—असि, असमरि, किरमाल, खग्ग, खगा, खांडा, चौधार, छरा, जमदढ, दुछरा, दुजड, दुवाह, तिजडा, त्रिजड, धजवड, धाराळ, पडियाळग, विजडी, रुक, सार।

भाला—छड, छडाळ, सावळ।

समूह—गरह, घमचाळ, जूह, थाट, थट, थट्ट, थड, डवर, साथ।

आकाश—अवर, गैण, गैणाग, गोम, व्योम, वोम, असमाण (फा०), आकाश (स०), निहग।

सस्कृत-मूलक शब्द तत्सम रूप मे भी प्राप्य हैं और अर्ध-तत्सम तथा तद्भव रूपो मे भी। यथा·

तत्सम—पवन, गजवध, छत्रवध, गजराज, कुजर, मरण, सग्राम, प्रचड, भूपाल, दन्त, पच, रोम, नवखड, डवर, वैकुठ, रौद्ररस, देवासुर, नर, सुर, दानव, वसुधा, वास, कमल, हस, क्रीडा, उत्तम, द्रुम, लता, चक्र, नदी, मदनमोहन, विराजमान, पुज आदि।

अर्ध-तत्सम शब्दो की सख्या और भी अधिक है। यथा—गुणग्राहग, सिधि, रिधि, सुबुधि, ग्यान, गज्ज, तपतेज, क्रित, जीवत, धर, द्रव्व, रिण, अभग, मेघाडवर, हीरजडित, नागेन्द्र, इळ, जळनिधि, दळ, मती, अविनासी, जळ, दुरजोधन, म्रित, सूर, द्वारि, म्हाराजा, राज, गुणीजण, ब्रहमड, छत्रपती, सनाह आदि।

तद्भव शब्दो की सख्या भी अर्ध-तत्सम से कम नही। कदाचित् अधिक ही हो। यथा—घडा, भड, समहर, त्रिभें, भाई-बध, दुज्जोण, विहग, त्रीकम, किसन, सरिस, स्रग, गयन्द, रजपूत, जुजिठल, इन्द, समन्द, जळहर, बात, सामि, पुन्न, रेहा, ऊजळा, अपछरा, सीग, साथ, धजां, माथे, त्रिण्हे, खेत, गात, असप्पति आदि।

(६) धरमत के युद्ध की ठीक तारीख

वचनिका के अनुसार धरमत का यह युद्ध शुक्रवार, वैशाख वदि ६, १७१५ वि० स० के दिन हुआ था (छ० स० १७२)। 'इण्डियन एफिमेरीज' के अनुसार उस दिन तारीख अप्रैल १६, १६५८ ई० थी। वचनिका एक समकालीन ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थ है। परम्परागत जनश्रुति के अनुसार उसका रचयिता खिडिया जगा अपने आश्रयदाता रतनसिंह राठौड के साथ धरमत गया था और युद्ध के समय वह वहाँ उपस्थित था। अत उसकी दी हुई इस युद्ध-तिथि मे किसी प्रकार की भूल होने की कोई सम्भावना नही होनी चाहिए। किन्तु डॉ० यदुनाथ सरकार ने अपने इतिहास-ग्रन्थ 'हिस्ट्री आफ औरंगजेब' मे इस युद्ध की तारीख गुरुवार, अप्रैल १५, १६५८ ई० दी है जो अब तक प्राय सब ही इतिहासकारो द्वारा मान्य रही है, और तदनुसार 'रतलाम का प्रथम राज्य' मे भी धरमत के युद्ध की यही तारीख दी गई। यो इन दोनो तिथि-तारीखो मे एक दिन का भेद पाया जाता है, एव वचनिका का सपादन करते समय यह प्रश्न स्वत सामने आया कि उसमे दी गई वह युद्ध-तिथि डॉ० यदुनाथ सरकार द्वारा निर्धारित इस युद्ध-तारीख की तुलना मे कहाँ तक ठीक है। अत तदर्थ धरमत के युद्ध के ठीक दिन और तारीख सम्बन्धी समूचे प्रश्न की पूरी-पूरी जाँच-पडताल सर्वथा अनिवार्य हो जाती है।

डॉ० यदुनाथ सरकार ने सारे महत्त्वपूर्ण समकालीन फारसी आधार-ग्रन्थो का गहरा अध्ययन किया और प्रधानतया उन्ही के आधार पर उन्होंने अपने उक्त इतिहास-ग्रन्थ की रचना की थी। अत इस युद्ध के दिन और उसकी हिजरी तारीख के सम्बन्ध मे उन विभिन्न फारसी आधार-ग्रन्थो मे क्या लिखा मिलता है यह पहले देखना चाहिए।

(१) शाहशुजा को लिखे गये पत्र मे मुराद ने तब ही लिखा था—"गुरुवार, २१ रजब को देगलपुर मे मैं भाई (औरगजेब) के साथ जा मिला। शुक्रवार के दिन (हमारी) सेना ने युद्ध किया।" (फैयाज-उल्-कवानीन, २, पृ० ५६०)।

(२) 'आदाब-इ-आलमगीरी' मे औरगजेब ने स्वय लिखा है—"शुक्रवार, २२ रजब के दिन मैंने सेना को आदेश दिया कि वह व्यूह-बद्ध हो कर युद्ध के लिए तत्पर हो।" (२, पृ० २१६ ब-२२० अ)।

(३) 'वाकिआत-इ-आलमगीरी' मे लिखा है—"दूसरे दिन, शुक्रवार २२ रजब, १०६८ हि० को छोटे से सकडे ऊबड-खाबड मैदान मे अपनी सेना को क्रमबद्ध कर जसवन्त-सिंह युद्ध के लिए उताल हुआ।" (अलीगढ सस्करण, पृ० ३८-३९)।

(४) 'आलमगीर-नामे' मे उल्लेख है—"शुभ दिन शुक्रवार, २२ रजब, १०६८ हिजरी तथा इलाही सन् के ७ उर्दिबहिश्त को प्रात काल मे औरगजेब ने हिन्दुओ के साथ

युद्ध प्रारम्भ किया और उन्हे पराजित किया।" (पृ० ६१)।

(५) 'मासिर-इ-आलमगीरी' के मूल फारसी ग्रन्थ मे मिलता है—"शुभ दिन शुक्रवार, २२ रजब को औरगजेब ने (जसवतसिंह के साथ) युद्ध के लिए तत्पर होने के लिए सेना को आदेश दिया।" (पृ० ५)।

यो इन सब समकालीन फारसी आधार-ग्रन्थो मे धरमत के युद्ध की एक ही तारीख २२ रजब, १०६८ हिजरी समान रूप से मिलती है। परन्तु 'इण्डियन एफिमेरीज़' के अनुसार २२ रजब के दिन अप्रैल १५, १६५८ ई० थी और उस दिन शुक्रवार नही होकर गुरुवार ही था। फारसी आधार-ग्रन्थो मे दिए गये दिन और हिजरी तारीख तथा 'इण्डियन एफिमेरीज़' द्वारा निर्धारित दिन और तारीख मे यो एक दिन का भेद जो सामने आता है उससे अवश्य ही एक उलझन उत्पन्न हो जाती है। डॉ० यदुनाथ सरकार के सामने भी यही समस्या उपस्थित हुई होगी। स्पष्ट है कि 'इण्डियन एफिमेरीज़' की तारीख गणना को ठीक मान कर तदनुसार २२ रजब की ईसवी तारीख गुरुवार, अप्रैल १५, १६५८ ई० को धरमत के युद्ध की तारीख निर्धारित करते समय तब फारसी आधार-ग्रन्थो मे दिये गए शुक्रवार के उल्लेख की पूर्ण उपेक्षा करना ही उन्हे उचित प्रतीत हुआ होगा। 'मासिर-इ-आलमगीरी' का जो अनुवाद डॉ० यदुनाथ सरकार ने किया है उसमे भी उन्होने मूल फारसी ग्रन्थ मे दिए गये वार को बदल कर धरमत के युद्ध की तारीख "गुरुवार, १५ अप्रैल १६५८, २२ रजब" दी है (पृ० २)।

इधर वचनिका मे जो युद्ध-तिथि मिलती है उसमे भी युद्ध के दिन शुक्रवार होने का सुस्पष्ट उल्लेख है। पुन मारवाड की ख्यातो मे इस युद्ध का जो सविस्तार विवरण लिखा है, उनमे भी युद्ध की तिथि शुक्रवार, वैशाख वदि ६, १७१५ वि० सं० ही दी गई है (मुरारी २, पृ० ६६, ख्यात०, १, पृ० २०७)। अत स्वाभाविकतया यह प्रश्न उठता है कि सब ही आधार-ग्रन्थो मे समान रूप से दिए गये युद्ध-दिन, शुक्रवार, की पूर्ण उपेक्षा कर निश्चित की गई तारीख अप्रैल १५, १६५८ ई० क्या सर्वथा ठीक है और क्या आगे भी यह मान्य होनी चाहिए। इस सम्बन्ध मे निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण बाते विचारणीय हैं।

(क) मुसलमान लोग शुक्रवार को शुभ दिन मानते है तथा उसके प्रति उनकी विशेष धार्मिक भावना होती है, और इस बार उसी दिन तो औरगजेब ने महत्त्वपूर्ण विजय प्राप्त की थी, एव युद्ध के दिन शुक्रवार होने के जो सुस्पष्ट उल्लेख सारे विभिन्न समकालीन फारसी आधार-ग्रन्थो मे मिलते है उनमे किसी भी प्रकार की कोई भूल होने की सम्भावना ही नही रह जाती है।

(ख) 'आलमगीर-नामे' मे इलाही सन् के अनुसार भी युद्ध के दिन की तारीख दी है। उक्त तारीख ७ उर्दिबहिश्त भी शुक्रवार, अप्रैल १६, १६५८ ई० को ही पडती है। समकालीन इतिहासकार द्वारा सौर वर्ष गणना के अनुसार दी गई इस तारीख की भी उपेक्षा करना सम्भव नहीं।

(ग) प्रत्येक हिजरी मास का प्रारम्भ चन्द्र-दर्शन से होता है और दूसरे चन्द्र-दर्शन तक वह मास माना जाता है। हिजरी तारीख-पत्रक सम्बन्धी नियमो के अनुसार विभिन्न हिजरी महीनो की दिन-संख्या निश्चित है, किन्तु चन्द्र-दर्शन सम्बन्धी जो अनिश्चितता यदा-

कदा बनी रहती है उसके कारण ईसवी महीनों की तरह प्रत्येक हिजरी माह के लिए निश्चित रूपेण यह कह सकना कदापि संभव नहीं हो सकता कि वह किसी विशेष दिन ही प्रारम्भ होगा। अत हिजरी तारीख-पत्रक के नियमानुसार निश्चित किसी माह की पूर्ण दिन-सख्या के समाप्त हो जाने पर भी उस विशिष्ट दिन चन्द्र-दर्शन नहीं हो सकने के कारण समाप्त-प्राय माह का एक और दिन बढ जाना हिजरी तारीख-पत्रक के विगत इतिहास मे कोई नई अनहोनी बात नहीं है। यों 'अखबारात-इ-दरबार-इ-मुअल्ला' के अनुसार हिजरी सन् १०७८, १०८१ और १०८८ मे ३० सफर, हिजरी सन् १०७७ और १०८८ मे ३० रबि-उस्-सानी और हिजरी सन् १०७७, १०८१ और १०८२ के अधिक-दिन वर्ष नहीं होते हुए भी उन वर्षों मे ३० जिल्हिज्ज की तारीखे हुई थी। (जयपुर अखबारात, जुलूस सन् ६, पृ० १८१, जुलूस सन् १०, खण्ड १, पृ० २७७, और खण्ड २, पृ० १२६, जुलूस सन् २४, खण्ड १, पृ० ४३१, जुलूस सन् २५, पृ० ११, जुलूस सन् २६, खण्ड १, पृ० ३७४, जुलूस सन् २८, खण्ड १, पृ० ४४६, और खण्ड २, पृ० २०६)। चान्द्र-गणना कर निश्चित नियमानुसार हिजरी तारीख-पत्रक मे जो हिजरी तारीखे और उनके जो वार दिए जाते हैं उनमे और तब जो हिजरी तारीख जिस वार को वास्तव मे मनाई गई तथा समकालीन कागज-पत्रो और इतिहास-ग्रन्थो मे तदनुसार किए गए उनके उल्लेखो मे इसी कारण यदा-कदा एक दिन का भेद हो ही जाता है।

(घ) अन्त मे इस बात का भी निर्णय करना अनिवार्य हो जाता है कि हिजरी तारीख २२ रजब पिछले दिन सूर्यास्त से प्रारम्भ होकर गुरुवार, अप्रैल १५, १६५८ ई० के दिन सूर्यास्त तक चलती रही या गुरुवार, अप्रैल १५, १६५८ ई० के दिन सूर्यास्त से प्रारम्भ होकर अगले दिन भी सूर्यास्त तक चलती रही। तदर्थ हिजरी माह रजब, १०६८, किस ईसवी तारीख को वस्तुत प्रारम्भ हुआ था यह निश्चय किया जाना अत्यावश्यक हो जाता है। प्रत्येक हिजरी माह का प्रारम्भ चन्द्र-दर्शन से होता है। स्युएल और दीक्षित का मत है कि "(हिन्दू) माह (के शुक्ल पक्ष) की प्रतिपदा तिथि यदि सूर्यास्त से कम-से-कम ५ घटिका पहले ही समाप्त हो जाती है तो उसी दिन सध्या को बहुत करके चन्द्र-दर्शन हो जायगा। किन्तु यदि (उक्त) प्रतिपदा तिथि सूर्यास्त से ५ घटिका या अधिक समय बाद मे समाप्त होती है तो चन्द्र-दर्शन बहुत करके अगले दिन सध्या समय ही हो सकेगा।" (इण्डियन एफिमेरीज' मे 'इण्डियन केलेण्डर' का उद्धरण, खण्ड १, भाग १, पृ० ७०)। 'इण्डियन एफिमेरीज' के अनुसार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा बुधवार, मार्च २४, १६५८ ई० को थी और उसी मे प्रतिपदा समाप्ति-काल ८१ दिया है, जिसके अनुसार मार्च २४, १६५८ ई० के सूर्योदय से कोई ४८½ घटिका अथवा १६ घटे और ३० मिनट पर प्रतिपदा तिथि समाप्त हुई थी। अत उपर्युक्त कथन के अनुसार चन्द्र-दर्शन अगले दिन, शुक्रवार, मार्च २५, १६५८ ई० की सध्या को ही हो सका होगा। 'इण्डियन एफिमेरीज' के अनुसार हिजरी तारीख १ रजब गुरुवार, मार्च २५, १६५८ ई० को पडती है, किन्तु जैसा कि ऊपर बताया गया वस्तुत तारीख १ रजब गुरुवार, मार्च २५ की सध्या से ही प्रारभ होकर अगले दिन सूर्यास्त तक चलती रही। अतएव इसी प्रकार हिजरी तारीख २२ रजब भी वास्तव मे गुरुवार, अप्रैल १५, १६५८ ई० को सूर्यास्त समय से प्रारम्भ होकर अगले दिन शुक्रवार, अप्रैल १६, १६५८ ई०

को सूर्यास्त काल तक चलती रही। धरमत के युद्ध के दिन का जो वार और जो हिजरी तारीख समकालीन फारसी आधार-ग्रन्थो मे दिये गए है वे सर्वथा ठीक है, यह इस प्रकार निर्विवाद रूप से प्रमाणित है। अत शुक्रवार की उपेक्षा कर निर्धारित की गई युद्ध-तारीख गुरुवार, अप्रैल १५, १६५८ ई० मे आवश्यक परिवर्तन करना अनिवार्य हो जाता है।

धरमत का युद्ध यथार्थ मे शुक्रवार, २२ रजब, १०६८ हिजरी अथवा अप्रैल १६, १६५८ ई० को ही हुआ था, यह मान्य हो जाने से वचनिका मे दी गई युद्ध-तिथि के सम्बन्ध मे कोई भी कठिनाई या समस्या नही रह जाती है। शुक्रवार, वैशाख वदि ६, १७१५ वि० स० के दिन ईसवी तारीख अप्रैल १६, १६५८ ही थी। यो स्पष्ट हो जाता है कि वचनिका मे दी हुई युद्ध-तिथि सर्वथा ठीक है और समकालीन फारसी आधार-ग्रन्थो से भी इसी तिथि का पूर्ण समर्थन होता हैं। अत अब यह अत्यावश्यक हो जाता है कि आगे भविष्य मे सब ही इतिहासकार धरमत के युद्ध की इस सशोधित ठीक तारीख, शुक्रवार, अप्रैल १६, १६५८ को स्वीकार कर उसे ही मान्य करे।[१]

---

१ "दी डेट आफ बेटल आफ धरमत" शीर्षक मेरा लेख "बगाल पास्ट एण्ड प्रेजेण्ट" (खण्ड ७४, भाग २, पृ० १४४-१४६) मे छपा था। उसे पढकर डा० यदुनाथ सरकार ने नवम्बर ७, १६५५ ई० के अपने पत्र में लिखा था "पुनर्विचार के बाद मै सहमत हूँ कि महीने की तारीख (२२) की अपेक्षा सप्ताह के दिन (शुक्रवार) का उल्लेख करने में भूल की सभावना कहीं कम ही थी (और इसीलिए दिन का उल्लेख फारसी हस्तलिखित ग्रन्थो में किया जाता था)। एव ईसवी तारीख अप्रैल १५ नहीं होकर अप्रैल १६ ही होनी चाहिए।"

(७) धरमत का युद्ध और रतनसिंह राठौड

मार्च, १६४७ ई० मे अपने वीर और साहसी पिता महेशदास राठौड की मृत्यु पर रतनसिंह राठौड जालोर परगने का शासक बना, जो उसे भी वतन के रूप मे मिला था। किन्तु अगले आठ वर्षों मे उसे शाही सेना के साथ अधिकतर बाहर ही रहना पडा, जिसमे उसका काफी द्रव्य व्यय हो गया तथा निजी देख-रेख और पर्याप्त प्रयत्नो के अभाव मे जालोर परगने की आय भी बहुत घट गई थी। यो रतनसिंह की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी न रही। एव सन् १६५६ ई० के प्रारम्भ मे उचित अवसर पा कर रतनसिंह ने जालोर परगने की आमदनी का ठीक-ठीक ब्योरा और अपनी सारी आर्थिक कठिनाइयो का सच्चा-सच्चा विवरण शाहजहाँ की सेवा मे निवेदन करवाया। तब अप्रैल, १६५६ ई० के लगभग रतनसिंह को जालोर परगने के बदले मे मालवा सूबे के अन्तर्गत रतलाम परगना वतन के रूप मे वशपरम्परागत दे दिया गया और उसके मनसब के अनुरूप आमदनी पूरी करने को रतलाम के आसपास के कुछ और भी परगने उसे जागीर के रूप मे मिले। अपने युवा पुत्रो और मुख्य साथी-सैनिको को ले कर रतनसिंह मई, १६५६ ई० मे ही रतलाम चला आया। परन्तु अपने इस नए वतन की ठीक व्यवस्था होने के बाद ही सन् १६५८ ई० के प्रारम्भ मे उसने अपनी रानियो तथा अन्य रहे-सहे कुटुम्बियो आदि को जालोर से रतलाम बुलवाया।

उस समय शाहजादा औरगजेब दक्षिणी मुगल सूबो का सूबेदार था। दिसम्बर, १६५६ ई० मे उसे बीजापुर पर चढाई करने का आदेश दिया गया तथा उसकी सहायतार्थ एक बडी शाही सेना दक्षिण भेजी गई। आदेशानुसार दक्षिण पहुँच कर रतनसिंह भी फरवरी, १६५७ ई० के लगभग उसमे सम्मिलित हो गया। शाही सेना ने मार्च, १६५७ ई० मे बीदर पर और अगस्त १, १६५७ ई० को कल्याणी पर अधिकार कर लिया। बीजापुरियो के विरुद्ध अच्छा परिश्रम करने के उपलक्ष्य मे रतनसिंह के मनसब मे चार सौ सवार बढा कर उसका मनसब दो हजारी जात—दो हजार सवारो का कर दिया गया।

परन्तु इधर कुछ महीनो से मुगल साम्राज्य के भाग्याकाश मे विद्रोह और गृह-कलह के घने बादल घिरने लगे थे। सन् १६५७ ई० की गरमी के दिनो से ही बूढे मुगल सम्राट् शाहजहाँ का स्वास्थ्य बहुत गिरने लगा था। आदिलशाह के साथ सन्धि कर लेने का शाही आदेश जुलाई, १६५७ ई० मे औरगजेब को मिला। कुछ समय बाद दिल्ली से प्राप्त शाही फरमानो के अनुसार महाबत खाँ, राव शत्रुसाल हाडा आदि सेनानायक बीजापुर की चढाई के लिए दक्षिण भेजी गई सारी शाही सेना को ले कर सितम्बर, १६५७ ई० के लगभग औरगजेब की आज्ञा लिए बिना ही उत्तरी भारत के लिए रवाना हो गए। रतनसिंह भी उन्ही के साथ दक्षिण से चल दिया तथा दिसम्बर २०, १६५७ ई० को सब के साथ आगरा

शाही दरबार मे उपस्थित हुआ ।

सितम्बर ६, १६५७ ई० को शाहजहाँ दिल्ली मे सख्त बीमार पड गया था और एक सप्ताह तक दरबार मे नही दिखाई देने के कारण उसकी मृत्यु की झूठी खबर सब दूर फैल गई और अधिकाधिक विकृत रूप मे यह समाचार सुदूर प्रान्तो मे भी जा पहुँचा । अपनी स्थिति सुदृढ करने के लिए शाहजादा दारा शिकोह ने बाहर जाने वाले समाचारो पर पूरी पाबन्दियाँ लगा दी थी, जिनका परिणाम पूर्णतया विपरीत ही हुआ । शाही दरबार से आने वाले सच्चे समाचारो पर भी अब कोई विश्वास नही करता था । शाहजहाँ को सचमुच मृत जान कर मुगल राज्य-सिंहासन के लिए निकट भविष्य मे होने वाले गृह-युद्ध की अनिवार्य सम्भावना के कारण सर्वत्र भय, आशका और अस्थिरता की भावना उत्पन्न हो गई, एव सारे साम्राज्य मे अशान्ति और अराजकता उभडने लगी ।

सुदूर प्रान्तो मे नियुक्त तीनो ही शाहजादे मुगल राज्य-सिंहासन के लिए युद्ध की पूरी-पूरी तैयारी करने लगे । मुराद ने नवम्बर ३०, १६५७ ई० को अहमदाबाद मे स्वय को बादशाह घोषित किया । कुछ सप्ताह बाद बगाल मे शाहजादा शुजा भी सिंहासनारूढ हुआ और अपनी सुसज्जित सेना ले कर बिहार की ओर बढा । औरगजेब भी दक्षिण मे अपनी आवश्यक तैयारी मे लगा हुआ था । ऐसी स्थिति मे विवश हो कर अपने इन विद्रोही छोटे शाहजादो का सामना करने के लिए शाही सेनाएँ भेजने की आज्ञा शाहजहाँ ने दी । शायस्ता खाँ के स्थान पर जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह को मालवा का सूबेदार नियुक्त किया गया । उधर आम्बेर के मिर्जा राजा जयसिंह की देख-रेख मे शाहजादे सुलेमान शिकोह के साथ एक बडी सेना पूर्व की ओर शाहजादा शुजा के विरुद्ध दिसम्बर, १६५७ ई० के अन्तिम सप्ताह मे भेजी गई ।

महाराजा जसवन्तसिंह एक बडी शाही सेना लेकर दिसम्बर १८, १६५७ ई० को आगरा से मालवा के लिए रवाना हुआ । आठ दिन बाद शाहजादा मुराद के स्थान पर कासिम खाँ गुजरात का सूबेदार नियुक्त किया गया और दिसम्बर २६ को कासिम खाँ भी एक बडी सेना लेकर मालवा की राह गुजरात के लिए आगरा से चल पडा ।

रतनसिंह एक अनुभवी योद्धा था, वह महाराजा जसवतसिंह का चचेरा भाई होता था, एव उसका वतन तथा जागीर भी मालवा मे थे । इसलिए जब वह बीजापुर की चढाई से लौट कर आगरा पहुँचा तब उसकी भी नियुक्ति महाराजा जसवतसिंह की सेना के साथ कर दी गई और मालवा लौटने के लिए जल्दी ही उसे विदा कर दिया गया । आगरा से रवाना हो कर रतनसिंह सीधा रतलाम पहुँचा, वहाँ अपने वतन और जागीर की उचित व्यवस्था की एव उसका शासन-प्रबन्ध अपने ज्येष्ठ पुत्र रामसिंह को सौप दिया । अप्रैल, १६५८ ई० के प्रारम्भ मे रतनसिंह को महाराजा जसवतसिंह का भी सन्देश मिला एव वह जल्दी ही ससैन्य उज्जैन के लिए रवाना हो गया । उसका दूसरा पुत्र, रायसिंह, जिसकी वय इस समय १६-१७ वर्ष से अधिक की नही थी, हठ करके रतनसिंह के साथ ही उज्जैन के लिए रवाना हुआ ।

महाराजा जसवतसिंह जनवरी २७, १६५८ ई० को ही उज्जैन पहुँच गया था और वही से शाहजादो की गति-विधि का पता लगाने का कुछ-कुछ प्रयत्न करता रहा । तथापि

अप्रैल ३ को जब औरंगज़ेब नर्मदा पार कर मालवा मे घुस आया तब ही जा कर जसवंतसिंह को उसकी सेना सम्बन्धी कोई समाचार प्राप्त हो सके। मार्च २०, १६५८ ई० को बुरहानपुर से रवाना हो कर औरंगज़ेब ने अकबरपुर के पास नर्मदा नदी पार की और माण्डू के किले के पास की घाटी से चढ कर धार होता हुआ वह देपालपुर की ओर बढा। उधर अहमदाबाद से रवाना हो कर अप्रैल १४ को मुराद भी देपालपुर के पास आ पहुँचा था। अप्रैल १५ को देपालपुर के तालाब के पास ही औरंगज़ेब और मुराद की सेनाएँ सम्मिलित हो गईं, और तब पूर्ण उत्साह और तत्परता के साथ दोनो शाहज़ादे ससैन्य उज्जैन की ओर बढे।

इधर कुछ दिन पहिले औरंगज़ेब के ब्राह्मण दूत कविराय ने उज्जैन पहुँच कर जसवतसिंह को औरंगज़ेब का सन्देश सुनाया और शाहज़ादो की राह न रोकने का आग्रह किया, परन्तु जसवतसिंह ने यह सलाह नही मानी एव औरंगज़ेब का प्रस्ताव ठुकरा दिया। अन्त मे जसवतसिंह सारी शाही सेना ले कर औरंगज़ेब की राह रोकने के लिए अप्रैल १३ को उज्जैन से निकला। गुजरात का नया सूबेदार कासिम खाँ भी अपनी शाही सेना ले कर जसवतसिंह के साथ चला। उज्जैन से कोई १४ मील दक्षिण-पश्चिम मे गम्भीर नदी के पूर्वी तट पर स्थित धरमत गाँव के सामने सारी शाही सेना के साथ जसवतसिंह ने पडाव डाला। अप्रैल १५ को सन्ध्या होते होते शत्रु सेनाएँ भी आ पहुँची और उन्होने भी गम्भीर के पूर्वी तट पर धरमत के पास ही डेरा डाला। औरंगज़ेब ने अगले दिन जसवतसिंह के साथ युद्ध करने का निश्चय किया।

दोनो शाहज़ादो को युद्ध के लिए कृत-निश्चय जान कर जसवतसिंह पुन किंकर्त्तव्य-विमूढ होने लगा, क्योंकि आगरा से रवाना होते समय शाहजहाँ ने उससे विशेष रूप से आग्रह किया था कि जहाँ तक हो सके वह शाहज़ादो को किसी प्रकार की हानि न पहुँचावे और सर्वथा अनिवार्य हो जाने पर ही उनके साथ युद्ध करे। आसकरण नीबावत ने आधी रात के समय आक्रमण कर शत्रु सेना की सारी तोपे छीन लेने का प्रस्ताव किया, परन्तु क्षत्रिय-सुलभ सरलता के साथ इसे धर्म-युद्ध के विपरीत घोषित कर जसवतसिंह ने उसे अस्वीकार्य समझा। युद्ध के दिन भी प्रात काल मे समझौते के लिए दोनो ओर से विफल प्रयत्न किये गए।

अन्त मे शुक्रवार, अप्रैल १६, १६५८ ई० के दिन सूर्योदय से कोई दो घण्टे बाद तोपो की गडगडाहट और बन्दूको के चलने के साथ ही युद्ध प्रारम्भ हो गया। शत्रु के तोपखाने पर आक्रमण करने के लिए मुकुन्दसिंह हाडा ने अपने भाइयो को ले कर उस ओर घोडे दौडा दिए। दयालदास झाला, अर्जुन गौड और सुजानसिंह सिसोदिया ने भी अपने सवारो को साथ ले कर मुकुन्दसिंह हाडा का साथ दिया। रतनसिंह इस हमले मे उनके साथ नही था, वह जसवतसिंह के साथ ही बना रहा।

मुकुन्द हाडा आदि राजपूत सेनानायको के नेतृत्व मे राजपूत घुडसवारो का यह दल तोपखाने पर टूट पडा, तोपचियो के छक्के छुडा दिए और तोपो की पक्तियो मे होता हुआ शत्रु-सेना मे हरोल के सामने के दल पर टूट पडा। राजपूतो का यह आक्रमण किसी भी प्रकार नही रोका जा सका और आगे बढते हुए वे हरोल मे जा घुसे, जहाँ बडी घमा-

मान लड़ाई हुई। तब औरगजेब अपने चुने हुए साथियो को ले कर आक्रमणकारियो के दल के पीछे जा पहुँचा और उन्हे सब ओर से घेर लिया। तब ये घिरे हुए राजपूत योद्धा घायल शेर की तरह दुश्मनो पर टूट पडे और एक-एक कर सभी वहाँ खेत रहे।

अब तक दोनो सेनाएँ सब दूर उलझ चुकी थी और चारो ओर मार-काट मची हुई थी। औरगजेब के तोपची पुन अपनी तोपो पर आ डटे और शाही सेना पर गोले बरसाने लगे। साथ ही औरगजेब की सेना का विजयी हरोल शाही सेना की ओर बढा, तब तो शाही सेना मे यत्र-तत्र भगदड मचने लगी। रायसिह सिसोदिया, सुजानसिह बुन्देला और अमरसिह चन्द्रावत अपने सैनिको के साथ युद्ध-क्षेत्र छोड कर भाग खडे हुए, जिससे शाही सेना के दाहिने पक्ष पर शत्रुओ का सामना करने वाला कोई भी नही रहा। उधर मुराद ने शाही सेना के पडाव पर हमला किया। देवीसिह बुन्देला तो मुराद के साथ हो गया और दोनो मरहठे सेनानायक भाग खडे हुए। तब लौट कर मुराद ने शाही सेना के बाएँ पहलू पर आक्रमण किया। शाही सेनानायक इफ्तिखार खाँ लड़ता हुआ मारा गया और तब शाही सेना का वह पहलू भी सुरक्षित नही रहा।

युद्ध-क्षेत्र के मध्य मे जसवर्तसिह अपने वीर राठौड़ योद्धाओ के साथ डटा हुआ पूर्ण उत्साह के साथ लड रहा था। उसी के सामने कुछ ही आगे रतनसिह भी अपने सेनानायको तथा वीर साथियो के साथ शत्रु-सहार कर उन्हे पीछे हटा रहा था। इस युद्ध मे जसवतसिह को दो घाव भी लगे, फिर भी पूरे उत्साह के साथ वह अपने सैनिको को प्रोत्साहित कर रहा था। किन्तु अब युद्ध की परिस्थिति बिगडने लगी थी। शाही सेना के हरोल के प्राय सब ही राजपूत योद्धा मर मिटे थे। हरोल का दूसरा भाग कासिम खाँ के सेनापतित्व मे था और उसने अब तक युद्ध मे विशेष भाग नही लिया था। औरगजेब को ससैन्य आक्रमण के लिए आगे बढते देख कर कासिम खाँ के साथ ही वह युद्ध-क्षेत्र से भागने को उतारू हो गया। सारी शाही सेना मे घबराहट फैल गई और खलबली मच गई।

शाही सेना की हार अब सुनिश्चित-सी हो गई थी। जसवतसिह और उसके अटल वीर साहसी सेनानायको एव सैनिको पर आक्रमण करने को सामने से औरगजेब, बाई तरफ से मुराद और दाहिनी तरफ से सफशिकन ससैन्य तेजी से बढ रहे थे। वीरो को प्रिय रणक्षेत्र पर एक योद्धा की मृत्यु को अपनाने को जसवतसिह अधीर हो उठा, परन्तु उसके राठौड वीर साथी और सेनानायक बाधक हुए। रतनसिह ने भी जसवतसिह को कहा-सुना और अन्त मे राठौड़ वीर आसकरण तथा महेशदास सूरजमलोत ने जसवतसिह के घोडे की बागे पकड ली और उसे खीच कर युद्ध-क्षेत्र से बाहर ले चले। इस प्रकार युद्ध-क्षेत्र छोडते समय जसवंतसिह ने वहाँ लडती हुई बाकी रही शाही सेना का सेनापतित्व रतनसिह को सौंपा।

इने-गिने साथियो और कुछ सैनिको के साथ जसवतसिह ने जोधपुर की राह ली। इधर धरमत के युद्ध-क्षेत्र मे बाकी बची थोडी-सी शाही सेना के साथ रतनसिह अपने जीवन का अन्तिम युद्ध करने को शाहजादो की आगे बढती हुई शत्रु-सेना पर पूरे उत्साह के साथ टूट पडा। उसके निजी सेनानायको और सैनिको के अतिरिक्त जोधपुर की सेना के भी कई वीर सेनानियो ने इस समय रतनसिह का साथ दिया। युद्ध समाप्त-प्राय था और

रतनसिंह का युद्ध एक प्रकार से जसवंतसिंह का पीछा नहीं करने देने के लिए किया गया पृष्ठानीक युद्ध ही था। प्राणो का मोह छोड कर रतनसिंह एव उसके सारे साथी सेनानायक और सैनिक अलौकिक वीरता तथा अद्वितीय साहस के साथ शत्रुओ पर टूट पडे। एक-एक कर उसके वीर साथी सेनानी कट-कट कर गिरने लगे। रतनसिंह के कई घोडे बारी-बारी से घायल हो कर गिरे, परन्तु हर बार वह किसी दूसरे घोडे पर सवार हो कर पुन युद्ध मे जुट गया। अन्त मे घावो से जर्जरित हो कर रतनसिंह भी गिर पडा। युद्ध का अन्त हो गया। शाही सेना पहले ही मर-कटी थी या तितर-बितर हो गई थी। अब रतनसिंह और उसके साथियो के मरते ही कोई विरोध नही रह गया था। औरंगजेब और मुराद ने विजय के नक्कारे बजाए। इस विजय के स्मारक-स्वरूप फतेहाबाद नामक नए कस्बे के बसाने का आदेश दिया गया जिससे धरमत गाव के पास ही वर्तमान फतेहाबाद कस्बे की नीव पडी।

यो धरमत के इस ऐतिहासिक युद्ध मे वीरतापूर्वक लडता हुआ रतनसिंह खेत रहा। इस युद्ध मे उसे छब्बीस तीर लगे थे और सारे शरीर पर तलवार के कोई अस्सी घाव भी लगे थे। इन्ही सबसे जर्जरित और लोहू-लुहान हो कर वह अचेत धरती पर गिरा। युद्ध समाप्त होने के कुछ ही समय बाद रतनसिंह की मृत्यु हो गई। यत्र-तत्र बिखरे हुए तीर और भालो को एकत्र कर वीरोचित चिता रची गई और युद्ध-क्षेत्र मे जहाँ रतनसिंह धरती पर गिरा था, वही उसकी दाह-क्रिया की गई। उसकी अस्थियो और भस्म को उज्जैन के पुण्य तीर्थ पर क्षिप्रा मे बहा दिया गया, एव रतनसिंह के इस अपूर्व आत्मत्याग की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए रतनसिंह के उत्तराधिकारी रामसिंह ने रतनसिंह के दाह-स्थान पर एक पूजनीय स्मारक—एक चौतरा बनवा दिया था। समय, आंधी, पानी और धूप की मार ने इस स्मारक को बहुत-कुछ तोड-फोड डाला था, एव रतनसिंह की मृत्यु के पूरे ढाई सौ वर्ष बाद रतनसिंह के वशजो ने उस चौतरे के स्थान पर श्वेत सगमरमर की एक नई सुन्दर भव्य छतरी बनवा दी।

मार्च, १६५८ ई० मे उस दिन रतलाम से विदा ले कर गया हुआ रतनसिंह अपनी राजधानी को लौट कर नही आया। वहाँ से वापस आई केवल उसके सिर की रक्त-रजित पाग। जालोर से रतलाम के लिए रवाना हो कर रतनसिंह की रानियाँ और उसके अन्य कुटुम्बी साथी तब तक रतलाम नही पहुँचे थे। एव उस पाग को ले कर साडनी-सवार रतनसिंह की रानियो के पास उसे पहुँचाने के लिए रवाना किया गया। रतलाम से उत्तर-पश्चिम दिशा मे कोई २५ मील पर नीनोर (कोटडी) नामक स्थान पर रतनसिंह की रानियो ने अपने पति के खेत रहने के समाचार सुने। तब उन्होने वही सती होने का निश्चय किया। नीनोर के तालाब की पाल पर मई १५, १६५८ ई० को रतनसिंह की चार रानियाँ और तीन उपपत्नियाँ सती हुई। इन सतियो का स्मारक एक चौतरा, आज भी नीनोर (कोटडी) मे विद्यमान है।

(८) 'वचनिका०' का ऐतिहासिक महत्त्व

जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह और मुगल सम्राट् शाहजहाँ के विद्रोही पुत्र औरगजेब एव मुराद के बीच मालवा मे उज्जैन से कोई १४ मील दक्षिण-पश्चिम मे धरमत गाँव के पास शुक्रवार, १६ अप्रैल, १६५८ ई० को जो निर्णायक ऐतिहासिक युद्ध हुआ था, उसी को ले कर कवि खडिया जगा ने अपने इस डिंगल ग्रन्थ वचनिका की रचना की थी। महाराजा जसवन्तसिंह की ओर से लडने वाले प्रमुख शाही सेनानायको मे रतलाम का शासक रतनसिंह राठौड़ भी था। साहसपूर्ण प्रारम्भिक आक्रमण, भयकर मार-काट और पहर-भर से भी अधिक समय के घमासान युद्ध के बाद भी शाही सेना की हार को सर्वथा सुनिश्चित जान कर जब उसके साथी सेनानायको ने जसवन्तसिंह को युद्ध-क्षेत्र छोडने के लिए विवश किया, तब उसने वहाँ बची-खुची युद्ध-रत शाही सेना का सेनापतित्व रतनसिंह को सौंपा। रतनसिंह निरन्तर वीरतापूर्वक लड़ता रहा और अन्त मे वही खेत रहा। खडिया जगा ने रतनसिंह के अलौकिक साहस, अद्वितीय वीरता एव उसके गौरवपूर्ण चरम आत्म-त्याग का वर्णन कर इस वचनिका का नामकरण भी उसी के नाम से किया। डिंगल भाषा मे लिखित यह वीर रस प्रधान ग्रन्थ तब बहुत ही लोकप्रिय हुआ था और उसकी हस्तलिखित प्रतिलिपियाँ भी राजस्थान तथा मालवा के प्राय सभी साहित्य-प्रेमी अथवा इतिहास-जिज्ञासु घरानो मे पहुँच गई।

वशपरम्परागत जन-अनुश्रुति के अनुसार इस वचनिका का रचयिता कवि खडिया जगा रतनसिंह के ही दरबार का राजकवि था। रतनसिंह के साथ ही वह भी उज्जैन और धरमत गया था तथा वहाँ जसवन्तसिंह एव रतनसिंह की सेना मे जो कुछ भी हुआ उसे उसने देखा-सुना था। कहा जाता है कि युद्ध प्रारम्भ होने से पहिले ही कवि जगा को आदेश हुआ था कि वह उस युद्ध मे भाग न ले, जिससे कि युद्ध के बाद भी जीवित रह कर वह उस युद्ध मे दिखाए गए अपने वीर स्वामी के शौर्य्य और साहस का ठीक-ठीक विवरण लिख सके। यो किम्वदन्ती के आधार पर यह माना जाता है कि कवि जगा ने उस दिन वह सारा युद्ध अपनी आँखो से देखा था तथा वहाँ से प्राप्त अपनी निजी जानकारी के आधार पर ही उसका पूरा विवरण अपनी इस वचनिका मे लिखा था। यह बात तो तेस्सितोरी भी मानता है कि इस काव्य की रचना युद्ध के कुछ ही काल बाद हुई होगी (वचनिका, इट्रोडक्शन, पृ० १-२)। अतएव इस वचनिका मे खडिया जगा ने धरमत के इस निर्णायक युद्ध का जो विवरण दिया है उसका अपना विशेष ऐतिहासिक महत्त्व है। इस युद्ध-सम्बन्धी प्राथमिक ऐतिहासिक महत्त्व की जो भी आधार-सामग्री अब तक प्राप्य हो सकी है उसमे जो बहुत बडी कमी रह जाती है उसको यह वचनिका कई अशो तक पूरा करती है।

फारसी मे लिखे गए सारे प्राप्य महत्त्वपूर्ण आधार-ग्रन्थो मे प्रधानतया इस युद्ध के विजेता और बाद मे राज्यारूढ मुगल सम्राट औरगजेब की ही तरफ से युद्ध का हाल लिखा है। विजेता का दृष्टिकोण और उस ओर से प्राप्त सामग्री या जानकारी ही इन लेखको के आधार बन गए। 'आलमगीर-नामा', 'आमल-इ-सालिह' एव 'जफरनामा-इ-आलमगीरी' मे दिए गए विवरण मुख्यतया मुगल साम्राज्य के राजकीय कागज-पत्रो के आधार पर लिखे गए थे। मीर मुहम्मद मासूम ने अपना पूरा समय बगाल मे ही बिताया था एव धरमत के युद्ध-सम्बन्धी उस समय प्रचलित अन्य विवरणो का बगाल तक पहुँचना सम्भव नही था कि उन्हे 'तारीख इ शाहशुजाई' मे स्थान मिल पाता। जसवन्तसिंह ने इस युद्ध मे जो वीरता दिखाई और जो-कुछ भी उसने वहाँ किया, ईश्वरदास नागर ने उसका उल्लेख अपने ग्रन्थ 'फतूहात-इ आलमगीरी' मे विशेष रूप से किया है। परन्तु उसने यह विवरण इस युद्ध के कोई चालीस-पचास वर्ष बाद लिखा था, एव उसे जसवन्तसिंह के सब ही प्रमुख राजपूत सेनापतियो के बारे मे विशेष जानकारी नही प्राप्त हो सकी होगी, उसने केवल मुकुन्दसिंह हाडा की वीरता एव उसके मारे जाने का ही उल्लेख किया है।

धरमत के युद्ध से पहिले जसवन्तसिंह के शिविर मे क्या-क्या हुआ? युद्ध के समय जसवन्तसिंह की सेना मे कौन-कौन-सी घटनाएँ घटी? जब जसवन्तसिंह को युद्ध छोडने को विवश किया गया, तब जसवन्तसिंह के अधीन शाही सेना का नेतृत्व किसने सँभाला? आदि प्रश्नो का उत्तर हमे किसी भी फारसी ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थ मे नही मिलता है। इस-लिए इन प्रश्नो पर प्रकाश डालने के हेतु अन्य भाषाओ मे प्राप्य ऐतिहासिक सामग्री की खोज तथा उसकी पूरी पूरी जाँच-पडताल अत्यावश्यक हो जाती है।

यह सत्य है कि राठौडो के अतिरिक्त गहलोत, हाडा गौड आदि विभिन्न कुलो के भी कई वीर योद्धाओ ने इस युद्ध मे भाग लिया, और प्राय सारे रजवाडो तथा सब महत्त्वपूर्ण राजघरानो के वीर इस युद्ध मे काम आए, तथापि यह युद्ध प्रधानतया राठौडो का ही गिना गया जिससे अन्य राजपूत घरानो की ख्यातो आदि मे इस युद्ध की विशेष चर्चा नही पाई जाती है।

पुन यद्यपि जसवन्तसिंह इस शाही सेना का प्रधान सेनापति था और उसने इस युद्ध मे शत्रुओ का वीरोचित साहस तथा दृढता के साथ सामना किया था, तथापि अन्तत युद्ध मे हार कर उसे युद्ध-क्षेत्र से जीवित ही लौटना पडा था। अत जोधपुर के सुप्रसिद्ध रणबका राठौड राजघराने के इतिहास को कलकित करने वाली इस घटना विशेष वाले इस युद्ध का विस्तृत विवरण न तो जोधपुर राज्य की ख्यातो मे मिलता है और न जोधपुर के राजघराने सम्बन्धी काव्य-ग्रन्थो मे ही।

किन्तु इस युद्ध मे मर कर रतनसिंह राठौड ने अमरत्व प्राप्त किया। उसके साहस, उसकी वीरता तथा युद्ध-क्षेत्र मे लडते हुए खेत रहने के कारण रतनसिंह राजपूत वीरो के लिए पूजनीय आदर्श बन गया। उसके शौर्य, मर-मिटने की साधना और उत्कट अडिग राजभक्ति ने कवियो को अत्यधिक आकर्षित किया, एव उन्होने रतनसिंह की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए इस युद्ध के विशद विवरणपूर्ण काव्य-ग्रन्थो की रचना की। ऐसे काव्य-ग्रन्थो मे खडिया जगा कृत वचनिका अधिक प्रामाणिक एव सर्वथा समकालीन होने

के कारण सब से महत्त्वपूर्ण रही जा सकती है। जसवन्तसिंह की सेना में होने वाली घटनाओं का पर्याप्त विवरण हमें वचनिका में मिलता है और यों फारसी ऐतिहासिक ग्रन्थों की इस बड़ी कमी को कई अंशों में यह वचनिका पूरा करती है।

विभिन्न महत्त्वपूर्ण इतिहास-ग्रंथों में धरमत के इस युद्ध के जो भी विवरण अब तक लिखे गए हैं, उनमें अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'हिस्ट्री आफ औरंगजेब' में डा० यदुनाथ सरकार द्वारा लिखित वृत्तान्त सब से अधिक प्रामाणिक कहा जा सकता है। सारे प्राप्य फारसी ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थों की पूरी-पूरी छान-बीन कर उन्हीं के आधार पर उन्होंने यह विवरण लिखा था। इस ग्रन्थ की दूसरी जिल्द, जिसमें कि धरमत के युद्ध का वृत्तान्त पाया जाता है, पहली बार सन् १९१२ ई० में प्रकाशित हुई थी। तब उन्हें वचनिका प्राप्य नहीं थी। सन् १९१७ ई० में बंगाल एशियाटिक सोसायटी ने टेस्सितोरी द्वारा सम्पादित वचनिका का मूल ग्रन्थ प्रकाशित किया था। परन्तु यों प्रकाशित होने पर भी भाषा की दुरूहता के कारण डिंगल भाषा से अनभिज्ञ विद्वानों के लिए यह वचनिका तब भी दुष्प्राप्य ही रही और सन् १९२५ ई० में 'हिस्ट्री आफ औरंगजेब' की प्रथम दो जिल्दों का संशोधित संयुक्त संस्करण तैयार करते समय भी वचनिका में वर्णित घटनाओं की अत्यावश्यक जाँच-पड़ताल नहीं की जा सकी थी।

यदि वचनिका में दिये गए युद्ध-विवरण की सयत्न ब्योरेवार जाँच-पड़ताल की जावे तो अनेकानेक छोटी-मोटी बातों में यह वृत्तान्त डा० यदुनाथ सरकार द्वारा मान्य प्रामाणिक विवरण से विभिन्न दिख पड़ेगा। किन्तु इन दोनों विवरणों में विभिन्नता मुख्यतया दो विशेष बातों में ही पाई जाती है। प्रथमतः जहाँ वचनिका के अनुसार रतनसिंह की मृत्यु सब के बाद में एवं जसवन्तसिंह के युद्ध-क्षेत्र छोड़ने के अनन्तर कुछ समय बाद ही हुई थी, वहाँ डा० यदुनाथ सरकार के मतानुसार रतनसिंह भी मुकुन्दसिंह हाडा आदि राजपूत घुड़सवारों के पहले हमले के समय ही मारा गया था (औरंग०, १-२, पृ० ३६०, ३६३)। दूसरे, वचनिका के अनुसार युद्ध-क्षेत्र छोड़ते समय जसवन्तसिंह ने तब भी वहाँ लड़ रही बाकी शाही सेना के संचालन का भार रतनसिंह को सौंपा था, तथा जसवन्तसिंह के युद्ध-क्षेत्र छोड़ने के बाद भी कुछ समय तक रतनसिंह और उसके साथी सेनानायक वीरता-पूर्वक विद्रोही शाहजादों की सेना का सामना करते रहे। डा० यदुनाथ सरकार के मतानुसार रतनसिंह की मृत्यु प्रारम्भिक हमले में ही हो गई थी। अतः उनको सेना-संचालन का भार तब सौंपने की बात उठती कैसे। जसवन्तसिंह के युद्ध-क्षेत्र छोड़ने के बाद, डा० यदुनाथ सरकार के मतानुसार "शाही सेना के बाकी रहे विरोध का भी अन्त हो गया। शाही सेना के जो बचे-खुचे दल अब तक शाहजादों की सेना का सामना कर रहे थे, वे भी अब युद्ध-क्षेत्र छोड़ कर भाग खड़े हुए। राजपूत सैनिक अपने-अपने घरों को लौट गए और मुसलमान सैनिकों ने आगरा की राह ली।" (औरंग० १-२, पृ० ३६६)।

अतः यह बात विशेषरूपेण विचारणीय है कि इन दोनों विवादपूर्ण विषयों-सम्बन्धी जो भिन्न वर्णन वचनिका में पाया जाता है, वह ऐतिहासिक दृष्टि से कहाँ तक मान्य और विश्वसनीय कहा जा सकता है। रतनसिंह की मृत्यु कब हुई थी इस विषय की कुछ जानकारी एकमात्र 'आलमगीर-नामा' में मिलती है। पहिले हरोल में नियुक्त सरदारों में

रतनसिंह का नाम दिया है और आगे मुकुन्दसिंह हाडा के साथ घुडसवारो के हमले मे वीर-गति प्राप्त करने वाले सेनानायको की सूची मे रतनसिंह का भी उल्लेख है (आ० ना०, पृ० ६४)। इन्ही उल्लेखो के आधार पर ही डा० यदुनाथ सरकार ने प्रारम्भिक हमले मे मुकुन्दसिंह हाडा के साथ रतनसिंह के भी मारे जाने की बात लिखी है। अत प्रश्न उठता है कि रतनसिंह के मृत्यु-समय को निश्चित करने मे किसे अधिक विश्वसनीय समझा जावे 'आलमगीर-नामा' को या वचनिका को। युद्ध की प्रधान हलचलो, विशिष्ट सेनानायको अथवा प्रमुख योद्धाओ के कारनामो तथा युद्ध मे मारे गए महत्त्वपूर्ण विरोधी सेनानायको की ठीक-ठीक सूची औरगजेब तथा उसके पक्षवालो को ज्ञात हो गई होगी परन्तु प्रत्येक विरोधी सेनानायक के व्यक्तिगत कारनामो का ठीक-ठीक एव पूरा विवरण उनमे से किसी को साधारणतया ज्ञात हो सका होगा यह कठिन ही जान पडता है। अतएव किसी भी विरोधी सेनानायक सम्बन्धी व्यक्तिगत घटनाक्रम को निश्चित करने मे 'आलमगीर-नामा' मे दिये गए सक्षिप्त उल्लेख को सर्वथा निर्विवाद स्वीकार नही किया जा सकता है। पुन वचनिका मे दिया हुआ तत्सम्बन्धी विवरण किसी प्रकार अनहोना या पूर्णतया अप्रामाणिक नही कहा जा सकता है।

दूसरा प्रश्न यह है कि जसवतसिंह के युद्ध-क्षेत्र छोडने के बाद भी क्या युद्ध कुछ समय तक चलता रहा था। इस विषयक कुछ-कुछ जानकारी केवल दो फारसी आधार-ग्रथो मे ही मिलती है। 'जफरनामा-इ-आलमगीरी' के अनुसार जसवतसिंह के युद्ध-क्षेत्र छोडने के बाद बाकी रही शाही सेना तितर-बितर हो गई और इन भागने वालो के साथ औरगजेब की सेना की लडाई हुई जिसमे कई शाही सैनिक मारे गए (जफर०, पृ० ३१-२)। 'आमल-इ-सालिह' मे युद्ध की अन्तिम घडियो मे शाही सेना के दो दल हो जाने का उल्लेख है। ये दोनो दल युद्ध क्षेत्र के तग दर्रे मे घिर गए और वहाँ लडते रहे। अन्त मे जसवतसिंह युद्ध-क्षेत्र छोड कर रवाना हो गया और औरगजेब ने कुछ मीलो तक उसका पीछा भी किया (कम्बू०, ३, पृ० २८७)। एक दल के इस प्रकार चले जाने के बाद दूसरे दल का क्या हुआ इसका वहाँ कोई भी उल्लेख नही है। तथापि यह तो स्पष्ट है कि जसवतसिंह के युद्ध-क्षेत्र से रवाना होने के बाद भी कुछ समय तक तो अवश्य ही वहाँ बहुत-कुछ मार-काट होती रही होगी। डा० यदुनाथ सरकार ने भी शाहजादो की सेना का तब भी सामना करते रहने वाले शाही सेना के बचे-खुचे दलो का उल्लेख किया है (औरग०, १-२, पृ० ३६६)। किन्तु युद्ध की अन्तिम घडियो मे शाही सेना के प्रधान सेनापति जसवतसिंह तथा कासिम खाँ का युद्ध-क्षेत्र छोडना ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण घटना थी। उसके बाद भी शाही सेना के कौन वीर सेनानायक शाहजादो का सामना करते रहे तथा उन्होने क्या-क्या वीरता दिखाई ये सभी बाते मुगल साम्राज्य के इतिहासकारो तथा औरगजेब के शासन-काल और उसकी सफलताओ का विवरण लिखने वालो के लिए सर्वथा गौण और महत्त्व-हीन थी, एव फारसी आधार-ग्रथो मे रतनसिंह राठौड तथा उसके सेनानायक साथियो के वीरतापूर्ण अन्तिम युद्ध का कोई स्पष्ट उल्लेख नही मिलता है। प्रत्युत वचनिका मे वर्णित यह अन्तिम युद्ध पूर्णतया असभावित घटना नही ज्ञात होता है।

पुन जसवन्तसिंह जिस समय युद्ध-क्षेत्र से रवाना हुआ, तब तक मुकन्दसिंह हाडा

मारा जा चुका था, और कासिम खाँ, जो पहले से ही युद्ध से किनारा काट रहा था, इस समय युद्ध-क्षेत्र से रवाना होने को तत्पर था, एव शाही मनसवदारो मे तब बच रहे सर्वोच्च सेनानायक रतनसिह को युद्ध-क्षेत्र मे लड रही वाकी शाही सेना का भार सौपना स्वाभाविक ही नही सर्वथा न्याय-सम्मत भी था। अतएव वचनिका मे वर्णित इस घटना के इस मूल तथ्य को सर्वथा अमान्य नहीं किया जा सकता है।

इस सम्बन्ध मे विशेषरूपेण उल्लेखनीय बात यह भी है कि इन सब ही बातो विषयक जो-जो विवरण वचनिका मे मिलते है उनका बहुत-कुछ समर्थन कवि कुम्भकर्ण रचित 'रतन-रासो'[1] नामक राजस्थानी मिश्रित पिंगल वीर-काव्य मे दिये गए धरमत युद्ध के वर्णन मे भी होता है। कुम्भकर्ण स्वय मालवा निवासी था और रतनसिह के राजघराने एव रतनसिह के उत्तराधिकारियो के साथ कुम्भकर्ण का बहुत अधिक सम्बन्ध रहा था, जिससे इस युद्ध विषयक सारी बातो की पूरी-पूरी प्रामाणिक जानकारी प्राप्त करने मे उसे किसी प्रकार की कोई कठिनाई नही हुई होगी। रतनसिह की मृत्यु के कोई २० वर्ष बाद इस काव्य की रचना उज्जैन मे हुई थी। इस काव्य के पिछले तृतीयाश से भी अधिक भाग मे कवि कुम्भकर्ण ने मुगल राज्य-सिंहासन के लिए होने वाले इस गृह-युद्ध के प्रारम्भ एव धरमत के इस ऐतिहासिक युद्ध का सविस्तार वृत्तान्त लिखते हुए रतनसिह के वहां वीरता-पूर्वक अन्त तक लडते-लडते खेत रहने का भी पूरा-पूरा वर्णन किया है। यो वचनिका के समान यह 'रतन रासो' भी इस युद्ध के लिए तो अवश्य ही प्राथमिक महत्त्व का ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थ है।

अतएव इस सारे विचार-विमर्श के बाद यह बात निश्चित रूपेण स्पष्ट हो जाती है कि धरमत के इस युद्ध के लिए तो वचनिका निर्विवाद रूप से एक महत्त्वपूर्ण प्राथमिक आधार-ग्रन्थ है जिसकी यत्किंचित् भी उपेक्षा करना किसी भी सच्चे इतिहासकार के लिए न सम्भव है और न किसी प्रकार उचित ही समझा जायगा। इसी कारण 'रतलाम का प्रथम राज्य' मे धरमत के युद्ध का विवरण लिखते समय वचनिका मे वर्णित इन सारी घटनाओ के ऐति-हासिक तथ्यो का यथा-स्थान समावेश कर उसे सर्वथा प्रामाणिक एव सम्पूर्ण बनाने का प्रयत्न किया गया था। पुन डा० यदुनाथ सरकार कृत 'ए शार्ट हिस्ट्री आफ औरगजेब' का सशो-धित सक्षिप्त हिन्दी सस्करण 'औरगजेब' जब तैयार हो रहा था तब 'वचनिका और 'रतन-रासो' मे दिये गए धरमत के युद्ध के समकालीन विवरणो की ओर डा० यदुनाथ सरकार का ध्यान आकर्षित किया गया था। तब उन्होने भी स्वीकार किया कि इन दोनो ग्रन्थो मे दी गई बातो के आधार पर उनके पहिले के विवरण मे यत्र-तत्र कुछ परिवर्तन किया जाना आवश्यक हो गया था। अत. उनके ग्रन्थ के उक्त हिन्दी सस्करण मे डा० यदुनाथ सरकार द्वारा मान्य धरमत के युद्ध का जो सशोधित विवरण छपा है उसमे अवश्य ही वचनिका आदि मे वर्णित आधार पर कुछ अत्यावश्यक परिवर्तन कर दिए गए हैं। [औरगजेब (हिन्दी), पृ० ७८-९ फुटनोट]। अब अन्य इतिहासकारो द्वारा भी इन सशोधनो के सर्वमान्य होने मे

१. 'रतन-रासो' अब तक छप कर प्रकाशित नही हुआ है। भावार्थ एव अत्यावश्यक टिप्पणियो सहित इसका एक सुसम्पादित सस्करण तैयार किया जा रहा है जो शीघ्र ही प्रकाशित किया जायगा।

वचनिका के भावार्थ आदि सहित इस नए सस्करण का प्रकाशन अवश्य ही बहुत सहायक होगा।

धरमत के युद्ध का एक समकालीन प्रामाणिक पूरक विवरण प्रस्तुत करने के अतिरिक्त भी वचनिका द्वारा कई एक महत्त्वपूर्ण बातो पर सर्वथा नया प्रकाश पडता है। शाही राजदरबार से सम्बद्ध उस समय के उच्चवर्गीय राजपूत समाज के सगठन, रहन-सहन, आचार-विचार, विश्वासो और रुचि आदि विषयक बहुत-सी उपयोगी जानकारी इस वचनिका मे सर्वत्र बिखरी पडी है। पुन वचनिका मे उस समय साधारणतया प्रचलित एव इस युद्ध मे भी प्रयुक्त युद्ध-प्रणाली का बहुत-कुछ पता लगता है। यद्यपि शाहजादो की सेना के साथ तोपखाना भी था और उसकी गोलाबारी अन्तत' इस युद्ध मे निर्णायक ही प्रमाणित हुई तो भी साधारणतया युद्ध तलवारो और तीरो से ही लडा जाता था। हाथी तब भी युद्ध मे उपयोगी समझे जाते थे। फिर भी यह युद्ध प्रधानतया घुडसवारो द्वारा ही लडा गया था। इस युद्ध मे लडने वाले या वहाँ खेत रहे योद्धाओ तथा सेनानायको का उल्लेख करते हुए खडिया जगा ने यत्र-तत्र उनके बारे मे जो कुछ भी लिखा है उससे भी इन या इनके घरानो सम्बन्धी कई एक छोटी-मोटी बाते ज्ञात होती हैं जिनसे तद्विषयक ऐतिहासिक ज्ञान अधिक समृद्ध ही होगा।

(६) सम्पादन-सम्बन्धी

वचनिका का पहला सम्पादन आज से ४५ वर्ष पूर्व डिंगल साहित्य के अपूर्व भक्त और पारखी इटली-निवासी विद्वान् डा० तेस्सितोरी ने किया था। उसे बीकानेर, उदयपुर, जोधपुर, मालवा आदि के पुस्तकालयो मे वचनिका की अनेक हस्तलिखित प्रतियां देखने को मिली थी। उन मे से अधिक प्राचीन और प्रामाणिक तेरह प्रतियो का सग्रह कर के उन के आधार पर उन ने वचनिका का सम्पादन किया था। उस मे भूमिका, प्रामाणिक पाठ और अन्य पाठान्तरो के साथ-साथ तेस्सितोरी ने व्याकरण के विशिष्ट प्रयोगो का परिचय कराने के लिए छन्द-क्रम से कुछ टिप्पणियां भी लिखी थी और अन्त मे डिंगल के विशिष्ट शब्दो की एक सूची भी सम्मिलित की थी, जिन मे प्राय सभी व्यक्ति-वाचक नामो को उद्घृत किया गया था। व्याकरण-सम्बन्धी टिप्पणियो मे उस ने डिंगल के अन्य ग्रन्थो मे प्राप्त होने वाले मिलते-जुलते प्रयोगो के साथ वचनिका के प्रयोगो की तुलना भी की थी। तेस्सितोरी का विचार था कि वचनिका का एक और खण्ड निकाला जाये जिस मे पूरे पाठ का अग्रेजी मे अनुवाद हो, वचनिका की भाषा का पूरा व्याकरण हो और ऐतिहासिक विवेचन हो।

दुर्भाग्य से डा० तेस्सितोरी की असामयिक मृत्यु हो गयी और वचनिका का वह दूसरा खण्ड प्रकाश मे न आ सका। फलत इतिहास के विद्वानों और डिंगल से अपरिचित साहित्य-सेवियो के लिए वचनिका एक दुरूह रचना ही बनी रही। अब तो तेस्सितोरी द्वारा सम्पादित सस्करण की प्रतियां दुर्लभ होती जा रही हैं अत वचनिका के एक ऐसे सस्करण की आवश्यकता थी जिस का साहित्य और इतिहास के अधिक-से-अधिक पाठक प्रयोग कर सके और डिंगल के इस अद्‌भुत ग्रन्थ-रत्न से परिचित हो सकें। इसी को ध्यान मे रख कर वचनिका का यह सस्करण प्रस्तुत किया गया है।

पहले तो हमारा विचार तेस्सितोरी के सम्पादित पाठ को ही पूर्णत प्रामाणिक मान कर केवल हिन्दी अनुवाद और विशिष्ट शब्दो के अर्थ आदि दे देने का था परन्तु बीकानेर के श्री अगरचन्द नाहटा से चर्चा होने पर विदित हुआ कि वचनिका की कुछ ऐसी प्राचीन प्रतियां भी प्राप्य हैं जो तेस्सितोरी को सुलभ न हो पायी थी और जिन के आधार पर वचनिका का अधिक प्रामाणिक सम्पादन किया जा सकता है। नाहटाजी से कुछ प्राचीन प्रतियां प्राप्त भी हो गयी। अधिक खोज करने पर एक प्रति बनेडा के श्री रविशकर देराश्री के सग्रह से भी प्राप्त हुई और एक बीकानेर के खजाची-सग्रहालय से। इन प्रतियो की सहायता से वचनिका का एक बार पुन सम्पादन करना ही आवश्यक समझा गया।

इस प्रकार सात हस्तलिखित प्रतियो और आठवी तेस्सितोरी द्वारा सम्पादित और मुद्रित प्रति के आधार पर वचनिका का यह सम्पादन प्रस्तुत किया गया है। तेस्सितोरी द्वारा

प्रयुक्त सभी प्रतियो पर पुन विचार करने की आवश्यकता न समझ कर केवल तेस्सितोरी द्वारा निर्धारित पाठ को ही प्रामाणिक माना गया है परन्तु उस ने उन प्रतियो के कुछ पाठ को अप्रामाणिक मान कर छोड दिया था और उस का उल्लेख केवल पाठान्तर के रूप मे किया था। उस पाठ मे साहित्यिक तत्त्व भी हैं और ऐतिहासिक सामग्री भी। अत इस सस्करण मे उस सामग्री को भी सर्वथा त्याज्य नही माना गया। हाँ, उसे पूर्णत प्रामाणिक मानने के लिए अभी और अधिक शोध की आवश्यकता है और इस समय प्राप्त हुई प्रतियो से भी प्राचीन प्रतियाँ मिलने पर और उन प्रतियो मे वह पाठ प्राप्त होने पर ही उसे प्रामाणिक माना जा सकेगा। अत ऐसे पाठो को भी पाठान्तर के रूप मे न दे कर दिया तो मूल पाठ के अन्तर्गत ही गया है पर उस की छन्द-सख्या क्रमागत नही रखी गयी है। ऐसे पाठ को [ ] कोष्ठको के अन्तर्गत रखा गया है और उस की छन्द सख्या अलग से एक, दो, तीन आदि अकित की गयी है। यदि बडे छन्द के अन्तर्गत एक चरण मात्र रखा गया है तो चरण सख्या पृथक् नही दी गयी है केवल पाठ को [ ] कोष्ठको के अन्तर्गत रखा गया है।

तेस्सितोरी ने पाठ-निर्धारण मे नियम-पूर्वक 'य', 'व' श्रुतियो का बहिष्कार किया था और उन के स्थान पर शुद्ध स्वरो का प्रयोग किया था। तेस्सितोरी की धारणा थी कि वचनिका की रचना के समय तक य, व श्रुतियो का आगम डिंगल भाषा मे न हो पाया था किन्तु धरमत के युद्ध से कोई २१ वर्ष बाद की प्रति मे भी ये 'य-व' श्रुतियाँ पायी जाती हैं। अत तेस्सितोरी की यह कल्पना कष्ट-साध्य ही प्रतीत हुई और शुद्ध स्वरो के स्थान पर य और व श्रुतियो के पाठ को ही प्रामाणिक मानना उचित समझा गया। पाठ का यह भेद वचनिका मे आदि से अन्त तक है इस लिए उस का निर्देश पाठान्तरो मे बार-बार कर के पाठान्तर का कलेवर नही बढाया गया है।

छदो का सख्याकन भी तेस्सितोरी से भिन्न पद्धति से किया गया है। तेस्सितोरी ने भुजगी, मोतीदाम आदि को चार चरणो का छद मान कर छद-सख्या दी है। पर सौती-साहित्य के अनेक हस्तलिखित ग्रन्थो को देखने से पता चलता है कि उस के लेखक छद विशेष मे एक साथ लिखे हुए सभी चरणो को मिला कर एक ही छद मानते थे। इसी लिए ऐसे पाठो का प्राय चार-चार चरणो मे विभाजन भी नही हो सकता है। उदाहरणार्थ वचनिका के छद स० ४५ मे ६४ और छद सख्या ५८ मे १५० चरण हैं। अत. दूहा, गाहा और कवित्त के अतिरिक्त सभी छदो मे चार चरणो की छद-योजना नही की गयी और एक साथ आये सभी चरणो को एक ही छद के चरण माना गया है। पाठान्तर ढूँढने की सुविधा की दृष्टि से दो-दो चरणो के बाद उप-सख्या अवश्य दे दी गयी है।

तेस्सितोरी द्वारा सम्पादित प्रति और उस की टिप्पणियो को देखने पर पता चलता है कि तेस्सितोरी कुछ शब्दो के अर्थ को ठीक से समझ नही पाया था। उदाहरणार्थ—'छलि' डिंगल का चतुर्थी के अर्थ का सूचक प्रत्यय है परन्तु तेस्सितोरी ने उस का अर्थ सर्वत्र 'युद्ध' किया है। 'वळि' शब्द का अर्थ तो 'भले ही' है परन्तु तेस्सितोरी ने 'वल' धातु के रूपो को भी यत्र-तत्र 'वळि' का ही पाठान्तर समझा है। जैसे—'वळे वश छत्रीस साथै वडाला' मे। यहाँ 'वळे' का अर्थ 'चले' है। इसी प्रकार तेस्सितोरी ने अन्त मे जो शब्दावलि दी है उस की टिप्पणी मे लिखा है कि उस शब्दावलि मे सभी व्यक्ति-वाचक नाम सम्मिलित कर लिये गये

है। परन्तु छाडा, तीडा आदि नाम उस सूची मे नही हैं जिस से पता चलता है कि तेस्सितोरी इन को नाम नही समझता था। इसी प्रकार 'तोग' का अर्थ समझने मे तेस्सितोरी ने कष्ट-कल्पना की थी। उस ने इसे 'तेग' का भ्रष्ट रूप माना था जब कि वह मनसबदारी का एक विशेष चिह्न रहा है। ऐसे दोषो का निराकरण करने का *यथा-शक्य* यत्न किया गया है।

वचनिका के प्रस्तुत संस्करण मे ग्रीक भाषा के श्रेण्य ग्रन्थो के अंग्रेजी अनुवादो की पद्धति को अपनाया गया है एव बाएँ पृष्ठ पर मूल पाठ तथा दाहिने पृष्ठ पर उस का अनुवर्ती हिन्दी रूपान्तर रखा गया है। मूल पाठ के नीचे अन्य प्रतियो के पाठान्तर दिये गये हैं। उधर अनुवाद के नीचे ऐसे कठिन शब्दो के अर्थ दे दिये गये है जिन के बिना भाव पूरी तरह स्पष्ट नही हो पाता। पाठान्तरो मे जहाँ पाठ स्वीकृत पाठ से सर्वथा भिन्न हैं वहाँ स्वीकृत पाठ भी पाठान्तर के आगे [ ] मे दे दिया गया है जिस से यह समझने मे सरलता हो कि अमुक पाठान्तर किस पाठ के स्थान पर मिलता है। लुप्त पाठ को भी इसी [ ] के अन्तर्गत दिया गया है।

वचनिका के सम्पादन मे सब से बडी कठिनाई थी अक्षरी की। राजस्थान के प्रति-लिपिकार और कवि भी ह्रस्व-दीर्घ के भेद का प्राय बहुत कम ध्यान रखा करते थे और उस का निर्णय केवल छन्द की दृष्टि से ही किया जा सकता है। ह्रस्व ऍ और ह्रस्व ऑ की ध्वनियाँ डिंगल के समान हिन्दी की विविध बोलियो मे भी विद्यमान है परन्तु उन के लिए देवनागरी मे भी कोई लिपि-चिह्न नही है। इसी तरह छन्द-सुविधा के लिए यत्र-तत्र आ का भी ह्रस्व उच्चारण करना पडता है। यदि इन सब ह्रस्व रूपो के लिए लिपि मे व्यवस्था न की जाये तो इन भाषाओ से अल्प परिचित लोगो के लिए वास्तविक उच्चारण जान सकना बहुत कठिन होगा। सब प्रकार के पाठको का ध्यान रख कर इस संस्करण के लिए विशेष रूप से लिपि-चिह्नो की योजना की गयी। इस प्रकार ऍ, ऑ और आ के ह्रस्व रूप के लिए नये लिपि-चिह्न बनवाये गये। प्रतिलिपिकार प्राय ळ और ल मे भी बहुत कम भेद करते आये है और अनुस्वार तथा चन्द्र-बिन्दु का भेद तो बहुत ही कम किया गया है। अत इस संस्करण के मूल-पाठ मे इस प्रकार के दोषो का निराकरण करने के लिए ळ के लिए मराठी मे प्रचलित विशिष्ट चिह्न को अपनाया गया है और अनुस्वार तथा चन्द्र-बिन्दु का भी पूरा भेद रखा गया है जिस से पाठक वास्तविक उच्चारण को समझ सके। अनेक प्रतियो मे ख ध्वनि के भी दो रूप मिलते हैं, एव जहाँ वह संस्कृत के ष से उत्पन्न है वहाँ ष ही लिखा जाता है और जहाँ शुद्ध ख है वहाँ ख। हमने इस भेद को मिटा दिया है क्यो कि डिंगल मे उच्चारण सर्वदा ख ही है। मूल पाठ मे साम्य की दृष्टि से ए और ऐ ध्वनियो के लिए अे और अै रूप रखे गये है क्योकि तभी वे अे के ह्रस्व रूप के साथ साम्य रख पायेंगे।

प्रस्तुत सम्पादन मे जिन प्रतियो का प्रयोग किया गया है उन का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है —

(क) यह प्रति श्री *अगरचन्द नाहटा* से प्राप्त हुई। इस का लिपि-कर्ता कोई पण्डित रामचन्द्र है, जिस ने उस की प्रतिलिपि बीकानेर के निकट नापासर ग्राम मे कार्तिक शुक्ल अष्टमी संवत् १७४१, तदनुसार मंगलवार तारीख ४-११-१६८४ ई० को की थी। इस प्रति का कागज गला हुआ और यत्र-तत्र त्रुटित है। अक्षर सुवाच्य हैं। पत्रो का आकार १०"×४" है।

कुल पत्र-सख्या ६ है, जिस मे अब पत्र-सख्या ८ विद्यमान नही है। पत्र सख्या २ का भी कोना टूट गया है। प्रत्येक पत्र के दोनो पृष्ठो पर लिखा गया है। प्रत्येक पृष्ठ की पक्ति-सख्या १८ है। प्रत्येक पक्ति की अक्षर-सख्या ५० के लगभग है। यह प्रति धरमत के युद्ध से केवल २५ वर्ष बाद लिखी होने के कारण महत्त्वपूर्ण है।

(ख) यह श्री नाहटाजी से प्राप्त एक अपूर्ण प्रति है जिस के केवल पाँच पत्र प्राप्य हैं। प्रत्येक पृष्ठ मे पक्ति-सख्या २२ से २५ तक है और प्रत्येक पक्ति की अक्षर-सख्या ६० से ८० तक। पत्रो का आकार १०"×४½" है। अक्षर कही छोटे है कही बडे। कागज मैला गला हुआ है और चौथे पत्र का दूसरा पृष्ठ अधिकाश खाली है। पाँचवे पत्र से आगे के पत्र लुप्त होने के कारण उस के लिपि-कर्ता, लिपि-स्थान तथा लिपि-काल आदि के विषय मे कुछ भी विदित नही है।

(ग) यह प्रति भी श्री नाहटाजी से प्राप्त हुई है। इस मे तेरह पत्र हैं जिन मे पहले पत्र का पहला पृष्ठ रिक्त है। प्रत्येक पृष्ठ मे पक्ति-सख्या १४ और प्रत्येक पक्ति की अक्षर-सख्या ४६ है। कागज १०"×४½" आकार का है। प्रतिलिपि-कार टेह ग्रामवासी विद्वज्जय-चन्द्र है और प्रतिलिपि-काल वैशाख शुक्ल दशमी स० १७३६, तदनुसार शुक्रवार तारीख १०-४-१६७६ ई० है। इसमे यत्र-तत्र हाशिये मे कुछ सशोधन भी किये हुए हैं।

(घ) नाहटाजी से प्राप्त इस प्रति के केवल प्रारम्भ के पाँच पत्र विद्यमान हैं जिस के प्रथम पत्र का पहला पृष्ठ रिक्त है। प्रत्येक पृष्ठ मे पक्ति-सख्या १४ है और प्रत्येक पक्ति मे अक्षर-सख्या प्राय ४५ है, परन्तु कही-कही मोटे अक्षर होने पर केवल २६ है। पत्रो का आकार १०"×४½" है। यह प्रति भी अपूर्ण होने के कारण इस के लिपि-कर्ता, लिपि-स्थान और लिपि-काल आदि के विषय मे कुछ भी विदित नही है।

(ङ) नाहटाजी से प्राप्त यह प्रति भी अपूर्ण है और इस के केवल प्रारम्भ के चार पत्र विद्यमान हैं। प्रथम पत्र का पहला पृष्ठ रिक्त है। प्रत्येक पृष्ठ की पक्ति-सख्या १३ है। प्रत्येक पक्ति की अक्षर-सख्या ४५ है और कही-कही ३६ भी। पत्रो का आकार १०"× ४½" है। पत्र बहुत साफ-सुथरे है और अक्षर सुवाच्य है। परन्तु प्रति अपूर्ण होने के कारण लिपि-कर्ता, लिपि-स्थान और लिपि-काल के विषय मे कुछ भी विदित नही है।

(च) यह बीकानेर के खजाची-पुस्तकालय की प्रति है एव आधुनिक पुस्तक की तरह लिखी हुई, एक सग्रह-पुस्तक है जिस मे अनेक दोहो, गीतो आदि का भी सग्रह है। उस के पत्र १० से २४ तक मे वचनिका है। इस प्रकार कुल पुस्तक के १४ पत्रो मे वचनिका लिखी गयी है। प्रत्येक पत्र मे पक्ति-सख्या २४ है और प्रत्येक पक्ति मे अक्षर-सख्या भी २४ है। इस का प्रतिलिपि-कार मुनि तेजा है जिस ने भेड गाँव मे इस की प्रतिलिपि की। प्रतिलिपि-काल आषाढ कृष्ण नवमी सवत् १७३६, तदनुसार रविवार तारीख २२-६-१६७६ ई० है। यह अब तक प्राप्त हस्तलिखित प्रतियो मे सब से प्राचीन है, धरमत के युद्ध से केवल २१ वर्ष बाद की। अत यह सब से अधिक महत्त्वपूर्ण प्रति है।

(छ) यह श्री रविशकर जी देराश्री से प्राप्त प्रति है। इस मे भी पत्र-सख्या १०१ से ११६ तक—इस प्रकार कुल १६ पत्रो मे वचनिका लिखी हुई है। प्रत्येक पत्र की पक्ति-सख्या २० है और प्रत्येक पक्ति की अक्षर-सख्या २२ से २४ तक है। पत्रो का आकार

८$\frac{३}{४}$" × ६$\frac{१}{२}$" है। इस का लिपि-कर्ता कोई वेणीदास है जिस ने आश्विन शुक्ल चतुर्थी सवत् १७६४, तदनुसार शुक्रवार तारीख १६-१०-१७०७ ई० को बीकानेर नगर मे प्रतिलिपि की थी। इस के अक्षर सुवाच्य और सुडौल है।

(ज) यह तेस्सितोरी द्वारा सम्पादित और रायल एशियाटिक सोसाइटी द्वारा प्रकाशित मुद्रित प्रति है जिसका सम्पादन तेरह प्रतियो के आधार पर किया गया था। उन तेरह प्रतियो मे भी कुछ प्रतियाँ ऐसी है जिन के पाठो को तेस्सितोरी ने अप्रामाणिक मान कर केवल पाठान्तर के रूप मे दिया था। तेस्सितोरी के पाठान्तरो के आधार पर ही उन प्रतियो के केवल ऐसे पाठ को वचनिका मे सम्मिलित किया गया है और उसे प्रायः [ ] के अन्तर्गत रखा गया है। उन प्रतियो के विशेष परिचय के लिए तेस्सितोरी के सस्करण के अन्तर्गत B, D, F, J, P, R, S, U प्रतियो का विवरण द्रष्टव्य है।

इस प्रकार वचनिका की अब तक प्राप्य प्राचीन प्रतियो के आधार पर किया हुआ यह सम्पादन पाठको के लिए विशेष उपयोगी होगा, ऐसी आशा है। इस सम्पादन के लिए प्रेरणा देने और समय-समय पर आवश्यक सभी प्रकार की सामग्रियो का प्रबन्ध करने के लिए मेरे साथी सम्पादक डॉ० रघुवीरसिंह जी को धन्यवाद देना केवल उपचार-मात्र होगा। वस्तुत यह सम्पादन और उस का प्रकाशन कराने का सारा श्रेय उन को ही है, मैं तो इस मे निमित्त-मात्र हूँ। परिश्रम मुझे भी करना पडा है। परन्तु इस परिश्रम मे मैं ने वहुत कुछ सीखा है, और उस प्रशिक्षण का प्रयोग भविष्य मे अन्य अप्राप्य राजस्थानी ग्रन्थो के सम्पादन और सशोधन मे भी कर सकूँगा, यह मेरे लिए परम सन्तोष की बात है।

वचनिका

राठौड़ रतनसिंघजी री महेसदासौत री

खिड़िया जगा री कही

वचनिका

राठौड़ रतनसिंघजी री महेसदासौत री

खिड़िया जगा री कही

गाहा—गणपति गुणे गहीर गुणग्राहग दानगुणदियण ।
सिधि रिधि सुबुधि सधीर मुण्डाळा देव सुप्रसन्न ॥१॥

कवित्त—समरि विसन सिव सकति सिद्धिदाता सरसत्ती । [१]
वाखाणूं कमधज्ज पुहवि राजा छत्रपत्ती ॥ [२]
वळि जेहा चक्कवै हुवा जिण वस नरेसुर । [३]
खाग त्याग सोभाग वस छत्रीस तणा गुर ॥ [४]
गजराजदियण भांजण गजां उभै विरुद्दां उद्धरै । [५]
कुळ भांण घरै प्रगट्यौ कमंध रतनमल्ल रिणमल्ल रै ॥ [६] ॥२॥

दळपति उदयासिह माल गगेव महाबळ । [१]
वाघा सूजा जोध कमंध रिणमाल अणकळ ॥ [२]
चूंडा वीरम सलख साख तेरह अजुवाळा । [३]
छाडा तीडा छात हुआ कमधज्ज हथाळा ॥ [४]
हिंदुवाण तिळक हिंदू विहद धूहड आसो सीह धन । [५]
तिणि पाटि अछै महिराण तन रूप भूप अेतां रतन ॥ [६] ॥३॥

१ गुणपति (छ) (ज), गमीर (क), गुणदातारदानि (च), लेयण (क), देयण (ख) (ग) (ङ), नियण (छ), दिग्रण (ज), रिद्धिसिद्धिसुबुद्धि (ग), सिधिबुधिरिधि (छ) ।

२ [१] समर (ङ), सिमरि (ग) (च), सगति (ख) (घ) (छ) (ज), [२] वाखाणिस (ङ), [३] बत्तजिहा (ख), [४] रत्तागत्याग (ग) (घ), त्याग त्याग (छ), गुरु (क) (ख) (ग), [५] विरुदह (ख) (ग) [६] कुलि (च) ।

३ [१] उदयासग (ग), उदयासिंघ (ङ), मल्ल (क) (ग), मल (च), [२] रिणमल्ल (ङ), [३] चौंडा (ग) (ङ), [४] हठाला (ट), [५] वेहिद्द (ङ), आसो (ङ) (च) (ज), [६] त्यै (छ), ते (ज), हुअ (ङ), हुअे (च) [अछै] के स्थान पर ।

वचनिका
राठौड़ रतनसिंहजी महेशदासौत की
खड़िया जगा कृत

गभीर गुणो वाले, गुणग्राहक, गुणो का दान करने वाले, सिद्धि, रिद्धि, वुद्धि और धैर्य को धारण करने वाले शुडधारी देव गणपति प्रसन्न हो ।।१।।

सिद्धिदाता विष्णु, शिव, शक्ति और सरस्वती का स्मरण करके पृथ्वी के छत्रपति राजा कमधज (राठौड) का वर्णन करता हूँ जिसके वश मे खड्ग-प्रयोग, त्याग और सौभाग्य मे छत्तीस राजवशो से श्रेष्ठ वलि जैसे चक्रवर्ती राजा हुए । उस राठौड का गजराजो के दान का और गज-सैन्य के भजन का—दोनो प्रकार का—विरुद उच्च कोटि का है । वह राठौड़ रतनमल्ल (रतनसिह) रणमल्ल के घर मे वश के सूर्य के समान प्रकट हुआ ।।२।।

ऐसे रूपवाला महेशदास का पुत्र रतन उसी राज्यासन पर बैठा जिस पर (उत्क्रम से) दलपति, उदयसिह, मालदेव, महावली गांगा, वाघा, सूजा, अजय राठौड़ रणमल, चूडा, वीरम, तेरह शाखाओ मे उज्ज्वल सलखा, विशाल भुजाओ वाले कमधज क्षत्रिय छाडा और तीडा, हिन्दू-तिलक और हिन्दुओ मे वडे धूहड, आसा और सीहा जैसे धन्य भाग्य वाले राजा आसीन हो चुके थे ।।३।।

१ गहीर=गभीर, ग्राहग=ग्राहक, दियण=देनेवाला ।

२ समरि=स्मरण करके । वाखाणूं=वखान करता हूँ । जेहा=जैसे, चत्रकवै=चक्रवर्ती (चक्रवति) । खाग=खड्ग, तणा=वाले । भांजण=भजन करने वाले, उद्धरै=धारण करने वाले ।

३ कमँध=कमधज, अणकल=अजेय । अजुवाला=उज्ज्वल। हथाला=विशाल भुजाओं वाले । विहद=वृहत् । पाटि=सिंहासन पर, अछै=है, महिराण तन=महेशदास का तनय, अेतां=इतने ।

छद हणूफाल—रढ रांण भांण रतन। करतब्बि भारथ क्रंन ॥[१]
नर नाह जे मुखि नीर। ग्रहवन्त ग्यानि गहीर ॥[२]
ससमत्थ सूर सकज्ज। गजदियण भांजणगज्ज ॥[३]
पित मात तारण पक्ख। सिणगार तेरह सक्ख ॥ [४]॥४॥

छद त्रोटक—गुरुदेव सुमत्ति समापि गण ।
भुवपत्तिय जेमि रतन भण ॥ [१]
पित जास महेस नरेस पिरं ।
गढ विड्ढि लियौ जिणि देवगिरं ॥ [२]
छळि साहि तणै ग्रहि खग्ग छरा ।
धु सी चढि लीध वलक्क धरा ॥ [३]
सनमान करे सुरताण सई ।
जाळोर पटै गढ दीध जई ॥ [४]
केवियां दळ तडळ जेणि किया ।
दन सासण लक्ख गजेन्द्र दिया ॥ [५]
कमधज्ज कणैगिरि राज करे ।
विधि अेणि गयौ स्रग क्रित्ति वरे ॥ [६]
तिणि पाटि रतन महेस तणै ।
घण थाट लियां तपतेज घणै ॥ [७]
मलराव जिहीं जगि आपमला ।
भुज पूजै साहिजिहान भला ॥ [८] ॥५॥

४ [१] भाणराण (छ), करतव्य (क) (ग) (छ), करतव्व (ख) (ज), करन्न (घ), [२] ज्यु [जे] (ङ), [३] सममाथ (क) (ग), [४] तारह पाख (ग), साख (ग)।

५ [१] गिणा (ङ), गणु (च), गुण (ज), भूपत्ती (क), यति (ख), [२] नरस (घ), वोढ (ख) (ग) (घ) (ज), विद्ठलिया (ङ), [३] सीह [माहि] (क), घूंसे (ख) (ग) (घ) (ज), जिणनीव (घ) (च), वलकध (ख), [४] सय (च), जय (च), [५] लाख गजेन्द्र (क) (घ) (ट) (ज), लक्ख गजेन्द्र (ख) (ग) (च) (छ), [६] कणैगढि (च), कीत (क), कील (छ), कीया (ङ), [७] घट (ख), थट्टथीयै (ग), लीयण (छ), तणै [घणै] (घ), तेण (ङ), [८] मलराज (ङ); भत [भुज] (ङ)।

वह रतन रावण और सूर्य के समान प्रचण्ड है। कर्तव्य (युद्ध) मे अर्जुन और कर्ण के तुल्य है। राजाओ के मुख की आब के समान है। दृढ़ और गम्भीर ज्ञान वाला है। समर्थ, शूर तथा सुकार्य करने वाला है। गजों का दान और भंजन करने वाला है। अपने मातृ पक्ष और पितृ पक्ष दोनों का तारण करने वाला है और तेरह शाखाओ का शृंगार है ॥४॥

गुरुदेव ने मुझे सुमति और गुण समर्पित किये है जिनसे मै उस राजा रतन का वर्णन कर सकूं जिसका पिता वह राजा महेसदास था, जिसने देवो के ही द्वितीय दुर्ग के समान देवगिरि दुर्ग को युद्ध करके जीता था।

जिसने बादशाह के लिए खड्ग ग्रहण करके युद्ध किया और बलख पर चढ़ाई करके उसे नष्ट कर उसकी भूमि को जीत लिया था। तब सुल्तान ने उसका सम्मान करने के लिए जालौरगढ़ का पट्टा उसे दिया था।

जिसने शत्रुओ के दलो को खण्ड-खण्ड किया था और लाखो हाथी और शासन-पत्र दान मे दिये थे। उस कमधज ने स्वर्णगिरि (जालौर) का राज्य करके और इस प्रकार कीर्ति का वरण करके स्वर्ग-यात्रा की।

उस महेश का पुत्र रतन उस पाट का उत्तराधिकारी हुआ जिस पर अदम्य मालदेव शोभित हो चुका था। वह रतन अत्यधिक तप और तेज का समूह धारण करने वाला था और शाहजहाँ उसकी श्रेष्ठ भुजाओ का आदर करता था ॥५॥

४ रढ रांण=रावण जैसा दुर्धर्ष, भारथ=अर्जुन। नीर=आब, ग्रहवत=दृढ, ग्यानि गहीर=गंभीर ज्ञानवाला, समसत्थ=सुसमर्थ। सकज्ज=सुकार्य (कारी)। पक्ख=कुल (पक्ष), सक्ख=शाखा।

५ समापि=समर्पित किया, जेमि=जिसने। विड़ढि=लडकर। छलि=हेतु, हेरितो ? के अनुसार युद्ध, तणं=के, छरा=तलवार। धुंमी=ध्वंस की, लीध=ली। तई=तब, जई=जब, वेरियां=शत्रुओ के, तण्डल=छिन्न अंग, जेणि=जिस (पु०) ने, दत=दान, सासण=दान-पत्र। कणंगिरि=जालौर, अेणि=इससे। तणं=तनय, घण=बहुत, थाट=ठाट। जगि=जगह, आपमला=स्वच्छंद, पूजं=आदर करता है।

दूहा—जीवत म्रित हुइ साहिजहाँ दिल्लीवै सुरताण ।
राति दीह अन्दर रहै नह मडै दीवाण ॥६॥

धुन्ध हुवै सारी धरा सहर दिली पडि सोर ।
मुहिम हुँता त्याँ मडियौ ज्याँ साहिजादाँ जोर ॥७॥

गुज्जर धरा मुराद ग्रहि बिजडौ तोलि दुबाह ।
माथै छत्र मँडाडियौ हुइ बैठौ पतिसाह ॥८॥

धर पूरब सुज्जो धणी दखिणी खरौ दुगाम ।
साहिजहाँ दारासुकर त्याँ सिर कोपे ताम ॥९॥

हिंदू ताम हकारिया सिंघ जसौ जैसिंघ ।
किया विदा कूरम कमँध अे बेवै अरडिग ॥१०॥

दिया वधारा देस दे हैंवर द्रब्ब हसत्ति ।
पतिसाही थाँ उप्पराँ यूँ कहियौ असपत्ति ॥११॥

सुज्जा दिसि जैसिंघ सझि दुज्जौ माँन दुबाह ।
पोतो साथै परठियौ पूरब धर पतिसाह ॥१२॥

साहिजादाँ बिहुँ साँमुहौ अेक जसौ अणभग ।
माँडण असपति माँडियौ जोध कळोधर जग ॥१३॥

६ माहजाह (च), सुरिताण (ख) (घ) (ङ) (ज), अदिर (ग) (छ), इदर (घ) (च), नवि (घ) ।

७ छद (ग), धध (घ) (च), दुन्दु (छ), पड्यो (क), पडे (घ), सोय [त्याँ] (क), हाँ (ग) यु (च), सुझोर (क) ।

८ मडाविथो (क) (ग), मडाडिनै (छ) ।

९ दाराश्रुकर (ग), साहिजादा दारासाह कोप्यो त्यामिताम (घ), साहिजादो (छ), नाम [ताम] (ङ) ।

१० जाम (ख) (ग) (छ), जेम (घ), सिह जसोजेसिह (क), सिह जिलो जेसिह(ग), कोध (ङ), विदारा (घ), एवै (ख), वेई (ङ), अरिमड (ख), अरिडग (ग), अरडाम (घ) ।

११ हैमर (च), ऊपरै (छ), इयु (ग) ।

१२ सूजै (क) (ग), सूजा (ख) (ज), सझे (छ), दुजडो (क) (छ) (ज), दिस [धर] (च) ।

१३ वे [बिहुँ] (ख), मडण (क), मडियो (क) ।

दिल्ली का सुल्तान शाहजहाँ जीवित अवस्था मे ही मृत के तुल्य हो गया था। वह दिन रात अन्दर ही रहता था और राज-सभा नही करता था ॥६॥

सारी पृथ्वी पर धुन्ध छा गयी। दिल्ली शहर मे शोर पड़ गया। जहाँ जिस शाहजादे का जोर था वही उसने मोर्चा बाँध लिया ॥७॥

खड्ग को तौल कर और वीरो को सम्हाल कर मुराद ने गुजरात की भूमि को हडप लिया और वह मस्तक पर छत्र मडित कर बादशाह बन बैठा ॥८॥

पूर्व की भूमि का स्वामी शुजा बन गया और दक्षिण का खरा और दुर्गम (औरगजेब)। तब उनके सिर पर शाहजहाँ और दारा-शिकोह कुपित हुए ॥९॥

तब उन्होने हिन्दू नरेश जसवन्तसिह और जयसिह को बुलाया और उन्हे (युद्धार्थ) विदा किया। वे दोनो—राठौड़ और कछ-वाहा—शत्रुओ का दमन करने मे समर्थ थे ॥१०॥

बादशाह ने उनसे कहा—"मैने समग्र देश के घोडे, द्रव्य और हस्ती तुम्हे सौप दिये है और बादशाही भी तुम्हारे ही ऊपर आश्रित है" ॥११॥

बादशाह ने पूर्व मे शुजा की तरफ एक तो सज्जित जयसिह को भेजा और दूसरा उसके साथ अपना पोता वीर सुलेमान ॥१२॥

परन्तु दोनो शाहजादो (मुराद और औरगज़ेब) के सम्मुख युद्ध करने बादशाह ने केवल जोधा के वशज अजेय जसवतसिह को भेजा॥१३॥

६ दिल्लीवै=दिल्लीपति, दीह=दिन, मण्डै दीवाण=दरबार करता है।

७ धुंध=अधकार, मुहिम=मोर्चा, हमला, त्याँ=वहाँ, ज्याँ=जहाँ।

८ विजडो=तलवार, तोलि=तौल कर, दुवाह=दुधारी (तलवार)।

९ दुगाम=दुर्गम, सुकर=शिकोह, सुगम।

१० ताम=तब, हकारिया=बुलवाये, बेवै=दोनो, अरडिग=शत्रुजयी।

११ वधारा=समग्र, हैवर=घोडे, असपत्ति=बादशाह।

१२ दुज्जो=दूसरा, मॉन=सुलेमान शिकोह, दुवाह=दुर्धर्ष, परठियो=भेजा।

१३ बिहुँ=दोनो, अणभग=अजेय, मॉडियौ=मडित किया, कलोधर=कुलोद्धारक।

दळ वादळ तावीन दे हिंदू मुस्सळमाण ।
चगथै जसौ चलावियौ जुध मंडण जमराण ॥१४॥

छंद भुजगी—जसौ हालियौ आगरा हुत ज्यारां ।
लियां साहिरा उम्बरां स्रब्ब लारां । [१]
कमधां वडां कूरिमां साथि कीधां ।
लजाथभ सीसोदियां सगि लीधां । [२]
हाडा गौड जादव्व झाला हठाला ।
वळे वस छत्रीस साथै वडाला । [३]
गाडी नाळि गोळा चलै फौज गज्ज ।
धरा व्योम आधोफरै उड्डि धज्ज । [४]
अगरावां निवावां किया थट्ट अग्गै ।
पवै गाहिजे घाट औघाट पग्गै । [५]
हलीलां हिलै सप फौजां हसत्ती ।
प्रथी सगि लग्गा केई देसपत्ती । [६]
वहती इसी पथि ओप्पै वहीर ।
नदी हेम थी ले चली जांणि नीर । [७]
कतार कठट्ठे घले जुग काळा ।
वहै वादळा जांणि भाद्रव्व वाळा । [८]
फटी आभ कै जांणि सामद्र फट्ट ।
प्रिथमी गिर थुंव किज्जै पहट्ट । [९]

१४ चकथै (क) (ङ), चगते (घ), चत्तथै (छ), माडण (ग), जिमाण (छ)।
१५ [१] चालिग्रौ [हालिग्रौ] (ङ), हूंति (घ) (ज), जारा (ग), सर्वं (ग), स्रीव (च)।
[२] सात्र [साथि] (ङ), लारि [सगि] (घ) (ज)।
[३] जादम्म (ख) (ग), चले [वळे] (छ)।
[४] गुडे [गाडी] (ङ) (छ), वोम (घ) (ज)।
[५] साथि [थट्ट] (क) (छ), पग्रे (ङ), घाट उघाट (ङ)।
[६] भिभ [सगि] (च), साम्हालगा [सगिलग्गा] (ङ)।
[७] ओपं (ग), उपइ (ग), ती [थी] (ग), ता (ङ), नाले [थी] (च)।
[८] कमारा (छ), कतारां (ज), युग (ग), वबै (छ), वाहला (घ)।
[९] को [कै] (घ) (ङ) (च), सामट्ट (ख), फट्टु (च), गिरी (ज)।

हिन्दू मुसलमानों का दल-बादल अधीनता मे देकर चगत्ता-वंशी बादशाह ने यमतुल्य जसवन्तसिह को युद्धार्थ भेजा ॥१४॥

तब जसवन्तसिह आगरे से चला। वह बादशाह के सब उमरावो को अपने साथ लिये हुए था।

बड़े कछवाहे और राठौड वीर उसके साथ थे और लज्जा के स्तभ सीसोदिये उसके पीछे थे।

इनके अतिरिक्त हाडा, गौड़, यादव, हठवाले झाला तथा छत्तीस क्षत्रिय वंशो के वीर भी उसके साथ थे।

गाड़ी, नाल (बन्दूक), गोलियां और फौजे गर्जना के साथ चल रही थी। भूमि और आकाश के मध्य ध्वजाये उड रही थी।

तोपो और नवाबो के समूह आगे-आगे थे। पैरो से पर्वत और घाटादिक कुचले जा रहे थे।

हाथियो की एकत्र सेना से पृथ्वी के साथ-साथ अनेक राजा लोग थर-थर कांप रहे थे।

इस प्रकार मार्ग मे चलती हुई वह सेना ऐसी लग रही थी मानो स्वर्ण के पर्वत—सुमेरु—से जल लेकर नदी चली हो।

काले ऊँटो की कतारे भी सन्नद्ध होकर ऐसे चली मानो भाद्रपद के बादल बहने लगे हो।

आकाश फट रहा था अथवा मानो समुद्र भी फट रहा था। पृथ्वी, तरु और पर्वत टूट कर समतल हो रहे थे।

१४ तावीन=अधीन, चगथैं=मुगल, चलावियो=भेजा।

१५ हालियौ=चला, हुत=मे, ज्यारां=जब, उम्बरां=उमराव, लारां=पीछे। कीधां=किये हुए, लजायभ=लज्जा के रक्षक (स्तभ), लीधा=लिये हुए। हठाला=हठ वाले, वळे=चले, वडाला=वडे। आघोफरैं=बीच मे। आरावा=तोपे, थट्ट=समूह, पव्वै=पर्वत, पग्गै=पैरो मे। हलीलां=लहरें, सप=समूह। पथि=मार्ग मे, वहीर=भीड, थी=से। कठट्ठे=समूह, जुंग=ऊँट। जांणि=मानो। आभ=अभ्र, ध्रुव=स्तम्भ, पहट्ट=समतल, पहाड।

वहै उप्पट थट्ट राठौड़वाळा ।
नदी सोखिजै नीर निव्वाण नाळा । [१०]
वहतां तुरां पाय पायाळ वाया ।
छिलै रज्ज रैणां उडै व्योम छाया । [११]
[धरा सेस धूजै डिगै धू धडक्क ।
चढै लक चक्क डरै च्यार चक्क ।] [१२]
चलता इसा मीर तीरां चलावै ।
पँखी जीवता म्रिग्ग जाणै न पावै । [१३]
मग्थै साहिजादां विहां राव मारू ।
सझै चालियौ ग्रेम उज्जेणि सारू । [१४] ॥१५॥

दूहा—खेडेचौ दरकूच खडि आयौ गढ उज्जेण ।
पतिसाहाँ सूँ पाधरै लोह जरीका लेण ॥१६॥
बधव रतन बुलावियौ जसै रचण रिण जंग ।
साह हुकम छळि साह रै आयौ खड़े अभग ॥१७॥
गढपति मिळे उजेणि गढि राजा जसौ रतन ।
राम लखम्मण राठवड किरि दुज्जोण करन ॥१८॥
हसतिमार भेळी हुवौ काळी दळां किंवाड ।
भागां पडिगाहण भडां पिडि अणभग पहाड़ ॥१९॥

[१०] चहइ [वहै] (घ), ऊपटाथटा (क), उप्पटां थट्ट (ज) ।
[११] वहताइसा (छ), वहते (च), पाताल (ग), वाइ (घ), वायो (च), रेणी (ग) (छ), छायो (ङ) ।
[१२] (R S) के अतिरिक्त सभी मे लुप्त ।
[१३] इसी (च), डीर (ख), तीर (ज), जाव (च), जाण (ज) ।
[१४] विहु (क) (घ) (च), विन्हां (ज) ।
१६. खेडेचै (ख), खेडिचै (घ), पाधरौ (क), जरका (छ) ।
१७ रयण [रतन] (च), वल [छलि] (ख) ।
१८ लक्खमण (ज), दुरजोध (क) (ख) छ) (ज) ।
१९ हसम [हसति] (छ), मर [मार] [घ], पणि (ङ) ।

राठौडों की सेना वेला-विहीन होकर चल रही थी जिससे नदियो और नीचे नालो का जल सूख रहा था ।

बहते हुए घोडो के पैरो मे पायले बज रही थी । रज के रेणु उड कर व्योम को आच्छन्न कर रहे थे ।

[पृथ्वी और शेष (अथवा मेरु) काँप उठे । ध्रुव काँपता हुआ चलायमान हो गया । लका चक्कर चढ गयी । चारो दिशाये डर गयी ।]

मार्ग मे चलते हुए मीर ऐसे तीर चला रहे थे कि पशु-पक्षी उनसे बचकर जीवित नही जा सकते ।

यो सजकर दोनो शाहजादो पर आक्रमण करने मारवाड-नरेश उज्जैन की ओर चला ।।१५।।

वह खेडेचा (राठौड) वीर सैन्य-प्रयाण करके शाहजादो से सीधा लोहा लेने उज्जैन दुर्ग आया ।।१६।।

जसवन्तसिह ने युद्ध करने के लिए अपने दृढ बाधव रतन को बुलाया जो हुकम के साथ ही बादशाह के हेतु युद्ध करने आ खडा हुआ ।।१७।।

उज्जैन गढ मे दोनो गढपति—राजा जसवन्तसिह और रतन—ऐसे मिले मानो वे दोनो राठौड राम और लक्ष्मण हो अथवा दुर्योधन और कर्ण हो ।।१८।।

वह रतन मिला जो गजो का हंता (कहरकोह का मारने वाला) था, सैन्य के कपाट के तुल्य था और काले रग का था । वह भागने वाले योद्धाओ का रक्षक था और शत्रुओ के लिए अजेय पर्वत के तुल्य था ।।१९।।

१५ उप्पट = उमडकर, निव्वाण = नीची भूमिवाले, तुरां = घोडो के, पायाल = पदाभूषण, वाया = वजे, छिलं = भर गया, चक्क = चक्र, चक्क = दिशाएँ, सारु = की ओर ।

१६ खेडेचो = राठौड, पाधरे = सीधा, लोह जरीका = लोहा ।

१८ किरि = अथवा, दुज्जोण = दुर्योधन ।

१९ कालो = काले रग का रतनसिह, पडिगाहण = रक्षक, पिडि = युद्ध मे ।

काळै अजुवाळी कियौ आवि दळाँ अवियट्ट ।
चारण भाट चगाहटाँ गुणियण थट्ट गरट्ट ॥२०॥
पति दिल्ली जोधाँणपति धजवड ग्रहे सधीर ।
करण भीर भारथ करण वीर मिळै वर वीर ॥२१॥

दूहा बडा—बे भाई बिरदाळ औरँगसाह मुराद इम ।
हेवै पति भेळा हुवा जुध मडण जमजाळ ॥२२॥
कटकाँ हुय बिहुँ कूँच गडगड़ त्रबागळ गुडै ।
हड़बड भड हुय हैँवराँ चढिया पोरिस चूँच ॥२३॥
बहरहि हिळै बहीर पायक ओठक पडतळाँ ।
मिळिवा किर चाली महण नवसै नदि ले नीर ॥२४॥
डाकी जमडाढाळ बे वे तरकस बधिया ।
तुरकी रहवाळाँ तुरक चढिया चामरियाळ ॥२५॥
गुज्जर तणा गरूर ताइ मिळे दिखणी तणा ।
सेन उजेणी सामुहा सालुळिया दळ सूर ॥२६॥
रचि फौजाँ रौद्राळ हैँवर नर वहता हसति ।
माँडण इद्र झड माँडियौ बादळ किर वरसाळ ॥२७॥

२० उजवाली (क) (च) (छ), जगुवि [आवि] (च), अविट्ट (घ), चगाहता (च), साघट्ट [थट्ट] (ख) ।
२१ धडवड (छ), भारमारथ (ख) ।
२२ वि [बे] (घ), वे [इम] (छ), हेवर (छ) ।
२३ बिन्हू (ङ), दुइ (ग), तबालु (ख) (घ), हुहुइ (घ), पुरस (घ), परिसरा (छ) ।
२४ चले (ख), उठाक (ख), उठक (घ), पाटतला (ख), चालीया (ख) (ग) ।
२५ यम (ख) (ग), छडाला (ख), दोइदोइ (छ), चामाराल (ख) ।
२६ गरुहरा (ख), तायमा (ख), मिलि (ग), दिक्षणी (ग), साललिया (क) (ख) (ग) (घ) सलमलिया (च) ।
२७ रवि (ङ), रज (छ), नरहैमर (क), हेमरतन (ख), हँसता [वहता] (ङ), मोडण (च), भड इन्द्र (क) (ख) (ग) (घ), किरवादल (क) (छ) ।

उस श्याम वर्ण वाले रतन ने गायन करते हुए चारण, भाट और गुणीजनो के विशाल समूह सहित आकर (काला होते हुए भी) प्रकाश कर दिया ॥२०॥

दिल्लीपति (शाहजादो) और जोधाणपति ने धैर्यपूर्वक खड्ग ग्रहण की और वीरो से वीरवर ऐसे मिले मानो युद्धार्थ कर्ण और अर्जुन भिडे हो ॥२१॥

यवन सेना के स्वामी औरगजेब और मुराद दोनो भाई इकट्ठे हुए जिनका बडा विरुद है और जो यम के तुल्य युद्ध करने वाले है ॥२२॥

दोनो कटको ने कूच किया और गडागड नगाडे बजे और पौरुप के मद मे मत्त भट हडबडाहट के साथ घोडो पर चढे ॥२३॥

खुर वाले घोडो, ऊँटो और पैदल सैनिको की भीड़ बह रही थी मानो एक साथ नौ सौ नदियाँ जल लेकर समुद्र से मिलने चली हों ॥२४॥

यम की सी दष्ट्राओ वाले और दानवोपम तुर्कों के रहने वाले चामरिआल तुर्क दो-दो तर्कस बाँधकर चढाई पर चले ॥२५॥

गरूर वाले गुजरात के और दक्षिण के दानवोपम वीर मिले और दल-शूरो की वह सेना उज्जैन की तरफ आगे बढी ॥२६॥

वे रौद्र यवन हाथियो, घोडो और नरो की बहती हुई सेना रचाये हुए थे मानो वर्षाऋतु मे बादलो से इन्द्र ने झडी लगा दी हो ॥२७॥

२० अजुआली = प्रकाश, अवियट्ट = समूह, चगाहटाँ = चर्चा-रत, गरट् = विशाल, गरिष्ठ ।

२१. धजवड = खड्ग ।

२२ विरदाल = बडे विरुदवाले । हैवै पति = (हैवे > हयवइ > हयपति) = अश्वपति, राजा, जमजाल = यम समूह ।

२३ पौरिस चूंच = पौरुप मत्त ।

२४ हिलै = चलती है, पायक = पैदल, ओठक = ऊँट, पडतला = खुरोवाले घोडे, महण = महार्णव ।

२५ जमडाढाल = यमदष्ट्राओवाले, चामरियाल = चमरवाले यवन ।

२६ ताइ = आततायी, सामुहा = सम्मुख, सालुलिया = अभियान किया ।

२७. वरसाल = वर्षा ऋतु ।

बागाँ करे वणाव सिर परि धरि मूँछाँ सुकर।
जमदढ खग कसिपति जवन जगमग नग्ग जडाव ।।२८।।
आया बाहिर अेम बैसि गजाँ मेघाँडँवर ।
चगथा बे ढुळता चमर हीर जडित छत्र हेम ।।२९।।
रुळि काहुळि त्रबाळ तूरहि भेरि नफेरि त्रहि ।
आरोहे अैराकियाँ झिळिया पथ झुलाळ ।।३०।।
गजराजाँ आग्राज गाज हुवै त्रंबागळा ।
फौजाँधज नेजाँ फररि वहताँ हीँजरि वाज ।।३१।।
पडताळाँ पाताळ बहताँ तुरी बजाडियौ ।
उडी रजी छायौ अरस किय झाँखो किरणाळ ।।३२।।
धूवाँ रव दव धोम खेहारव डबर खरा ।
ऋमतै रौद्रायण कियौ व्योम विचाळै व्योम ।।३३।।
जुदा हुवै जिँद जीव म्रिग खग आमुज्झै मरै ।
मारगि वहतै माँडियौ दाणव प्रळै दईव ।।३४।।
धर सारी पडि धाक पुर तर गिर कीजै पहट ।
हैकँप उर नागेंद्र हुव चक च्यारूँ चढि चाक ।।३५।।

२८ कमग कसिपति (घ), जुत्रा (क), ज्यवन (ग), क्रिगम्रिग (घ) ।
२९ गज (ङ), चकथा (क), वहु (च), ढुलते (क), ढालता (ङ), जड (ङ) ।
३० काहुनि काहुलि (घ), तूर (क) (घ) (अ), तूहरि (ख), त्र वाल [नफेरि] (ग), आरोहे प्रसि (क) (ख) (ग) (घ) (ङ) (च) (छ), झालिया (ङ) ।
३१ त्र वाला (क), त्र बागाळो (च), फौजा नेजा धजा फरहरे वहता ईंज (घ) ।
३२ पडताले पायाल (ङ), वहने (च), तुरा (ख), तुरे (च), वजाडियै (छ), रज (घ), कियौ (ग) (घ), छासो (घ), किरमाल (छ) ।
३३ दख (ख) (घ), सेहाडबर खरपरा (ख), खहाडवर रव खरा (घ), खेहाडबर बिरखरा (छ) ।
३४ आमूझी (ग), आरुझै (छ), वहता (च), [प्रळै दईव] (घ) मे लुप्त, प्रळौ (च) (छ) ।
३५ (घ) मे पहले तीन चरण लुप्त, तुरत (ङ), हुवौ (ख) (ग) (च) (छ), च्यारे (च) ।

यवनपति कटारी और खड्ग धारण किये हुए, वागे का वनाव किये हुए, मूँछो पर हाथ धरे हुए और शिर के ऊपर जगमगाते जडाऊ नग धारण किये हुए थे ॥२८॥

यो वे दोनो मुगल शाहजादे चँवर ढुलवाते हुए और रत्नजटित हेमछत्र धारण किये हुए मेघाडवर के समान हाथियो पर वैठ कर वाहर आये ॥२९॥

काहल व त्रवाल वजवाकर और तुरही, भेरी तथा नफेरी की आवाज करवा कर सैनिक आकर्षक झूलो वाले हाथियो और ईराकी घोड़ो पर सवार हुए ॥३०॥

गजराज गर्जना करने लगे, त्रवागल गरजने लगे। सेनाएँ ध्वजा और नेजे फहराने लगी और चलते हुए घोडे हीसने लगे ॥३१॥

चलते हुए घोडो के खुर पाताल तक वजने लगे। धूल उड कर आकाश में छा गयी और उसने सूर्य को आच्छन्न कर लिया ॥३२॥

अग्नि और धुएँ के तथा रेत के वादलो से आकाश को भर कर आक्रमण करते हुए यवनो ने आकाश के वीच मे एक अन्य आकाश की सृष्टि कर दी ॥३३॥

पशु-पक्षी दम घुटने से मर गये और उनके प्राण शरीर से पृथक् हो गये। इस प्रकार दैव के समान दानवो ने मार्ग चलते हुए प्रलय मचा दी ॥३४॥

सेना के चारो दिशाओ मे चलने से समग्र पृथ्वी मे धाक पड़ गयी। पुर, तरु और पर्वत टूट कर समतल हो गये। नागेंद्र शेष के हृदय में कँपकँपी होने लगी ॥३५॥

२८ जमदढ = कटारी, यमदंष्ट्रा।

२९ अेम = यो, वैसि = वैठ कर।

३०. वलि = वजकर, झिलिया = झिलमिल प्रकाशित हुए, झुलाल = झूलो वाले।

३१ आग्राज = गर्जना, त्रंवागला = वाद्य विशेष, हीजरि = हीसते हुए।

३२. पडताल = खुडताल, रजी = रेत, अरस = आकाश, झाँखो = मद, किरणाल = सूर्य।

३३ दव = दावाग्नि। खेहारव = रेत, डवर = मेघघटा, क्रमतै = आक्रमण करते हुए, रौद्रायण = यवन, विचालै = मध्य।

३४. आमुज्झै = रुद्धश्वास होते है।

३५ हैकँप = कँपकँपी, चक = दिशाएँ, चाक = चक्र।

सेन इसा सुरिताणि चगथै चढै चलाविया ।
उल्लटिया इळ ऊपरै जलनिधि मुर चत्र जाणि ॥३६॥
गूंडळियौ रज गैण हैकँप धर डेरा हुवा ।
साहजादा दर कूच सूं आया खडे उजैण ॥३७॥

गाहा चौसर—दळ दिखणाधि उतर देठाळै ।
डेरा दुहूँ दिया देठाळै ॥
दुहुँ बाजार झँडा देठाळै ।
दामणि गजाँ धजाँ देठाळै ॥३८॥
निपट बिन्है दळ आया नैड़ा ।
नराँ सुराँ अति आया नैडा ॥
नौबति सोर धडडि धुवि नैडा ।
नाळि निहावि गाजिया नैडा ॥३९॥

दूहा—औरँगसाह मुराद इम मिळि लिक्खै फुरमाण ।
राजा राह म रोकि तूं साह लगै दे जाण ॥४०॥
राडि म करि इक तरफ रहि आगै पीछै आव ।
जोइ दिली फिरि जाइस्याँ परसि असप्पति पाव ॥४१॥
जसवंत सुणे जवाब जव आगा कहियौ अेमि ।
मो थाँ आडो मेल्हियौ कहो जाण चूं केमि ॥४२॥

कवित्त—सुणि जवाब जसराज तेडि सत्ताब महाभड़ । [१]
सूर वलू सारिखा जिसा गोवरधन अनड़ ॥ [२]

३६ ऊपरवै (क), इमी सुलताण (घ) (ङ), चकथै (क) (ख) (छ), चढि (ख) (ग), चलाडीया (च) ।

३७ गुरलियो (क) (ग), रुविलियो (ख) (ग), धू घलियो (छ), तीसरे चरण के स्थान पर, खु डालाभले सरहद्दा (घ), गु दालम ले सरहडा (च), आयो (च) ।

३८ (घ) और (ङ) प्रतियो मे छंद सं० ३८ और ३९ का क्रम उलटा है, दऊ (ग), विहुँ (घ) (ट), झडी (च) ।

३९ दुऊ (क), छोइ (ख), दो (ग), विहुँ (घ) (ङ), दुये (छ), सुरा (छ) मे लुप्त, नौव (क), धडधडवि (छ) ।

४० मिळे (ख) (घ) (ङ) (ज), लिख्यौ (क) ।

४१ आगलि (ख), आगलि पाछलि (ग), जावस्या (च), फरस (ग), परसे (ख) (च) (ज) ।

४२ आपे [आगा] (ट), मो आडो था (ग), थाँ आडीमो (छ), जाणद्या (ग), जावा धूं (घ), जावाधूं (ङ), धाजावण (च) ।

मुगल शाहजादो ने ऐसी सेना चलायी मानो सातों समुद्र पृथ्वी पर उलट पडे हो ॥३६॥

जब शाहजादो की सेना कूच कर उज्जैन मे आकर खड़ी हो गयी और डेरे करने लगी तो आकाश धूल से ढक गया और पृथ्वी काँपने लगी ॥३७॥

दक्षिणियो के दल उत्तर मे दिखायी पड़े। दोनो सेनाओ के डेरे दिखायी पड़े। दोनों के बाजार और झडे दिखायी पडे। हाथियो पर ध्वजाएँ ऐसी दिखायी पड़ी मानो बिजली हो ॥३८॥

दोनो दल बिलकुल निकट आ गये। नरो और सुरो की मृत्यु निकट आ गयी। नौबत का शोर निकट ही धडाधड होने लगा। तोपे भी निकट ही गर्जना करने लगी ॥३९॥

तब औरगजेब और मुराद ने मिल कर यो फर्मान लिखा—"हे राजन्, तुम मार्ग न रोको। हमे बादशाह के पास जाने दो ॥४०॥

"तुम युद्ध न करो। एक तरफ होकर आगे अथवा पीछे आओ। हम तो दिल्ली देख कर और बादशाह के पैर छूकर वापस चले जायेगे।" ॥४१॥

जसवन्तसिह ने जब यह समाचार सुना तो उसने आगाह करके यो कहा—"मुझे तो तुम्हारा मार्ग रोकने भेजा है फिर बतलाओ कैसे जाने दूँ।" ॥४२॥

समाचार सुनते ही जसवतसिह ने तत्काल वल्लू जैसे महाभट शूरों को और पर्वतोपम गोवर्धन जैसे वीरो को बुलाया।

३६ इल=पृथ्वी, इला, सुर त्रय=तीन और चार अर्थात् सात।

३७ गूँडलियो=आच्छन्न हुआ, दर कूच=मजिल।

३८ देठालै=दिखाई दिये।

३९ निपट=बिलकुल, नैड़ा=निकट, स्रति=मृत्यु, धडडि=धडधड ध्वनि करके, धुबि=ध्वनि करके, निहावि=प्रज्वलित होकर।

४०. फुरमाण=फर्मान, पत्र, म=मत, लगै=पास।

४१ परसि=छूकर, पाव=पैर।

४२ आगा=आगाह करके, मेल्हियो=भेजा, केमि=कैसे।

४३ तेडि=बुलाकर, सत्ताब=शीघ्र, भड=भट, सारिखा=सदृश, अनड=पर्वत।

बी॑द घडा बानैत तेडि माहेस तियारां। [३]
पीथल क्रन्न उदिल्ल जिसा मधुकर झूझारां ॥ [४]
जगराज रुघा गिरधर जिसा पूछि जसै मोटा पहाँ। [५]
उम्बरां नरां असपत्ति सूं कहौ जाव कासूं कहां ॥ [६] ॥४३॥
इम अक्खै उँवराव राज जितरौ कुण जाणै। [१]
मती वखत तप तेज राज सूरज हिंदुवाणै ॥ [२]
तुम सहि जोधाँ छात जोध सारा इम जप्पै। [३]
तुम सिरहर दुइ राह साह सोवै करि थप्पै ॥ [४]
कमधजाँ आज माहेस कौ कहियौ याँ दुज्जौ करन। [५]
जुधबध खत्री ध्रम जाणगर राजा वळि बुज्झौ रतन ॥ [६] ॥४४॥

छन्द बिअक्खरी—राजा जसवँतसिघ रचण रण।
ताम रयण तेडियौ त्रिभै तण ॥ [१]
बेठा बे आलोच वहादर।
सूं पतिसाहाँ सूत्रण समहर ॥ [२]
सूरिजमल गँग बाघ सलक्खाँ।
पाटोधर चाढण जळ पक्खाँ ॥ [३]
मुहरै अणी किया रिणमल्लाँ।
चाँपाँ कूँपाँ जैत अचल्लाँ ॥ [४]

४३ [३] घणा (घ), खडा (ङ)।
[४] कर [क्रन्न] (ङ)।
[५] रुघा गिरवर (ख), जिहां (क) (ख) (ग), जइ (घ), पूछौ (ख)।
[६] करा [कहां] (ङ)।
४४ [१] जव [इम] (क), इसो (ख), इवु (ग), श्रेयु (घ)।
[५] माहे को (घ), रो [कौ] (क) (ग), कहियो जो (ग), कहिजै जग दुलो (घ)।
[६] जाणजग (ङ), जगि (च), वले (ख) (ग) (घ) (ङ) (ज)।
४५ [१] [रण] (क) मे लुप्त, चण रणजग (घ), रचर (ङ), रयण ताम (क), रतन (ङ)।
[२] सूत्र (ख) (ग) (घ), सूताणो (ङ), समर (क) (घ) (च)।
[३] गगव (घ), गगेव (ङ)।
[४] महरा (घ), कूप (च), अटल्ला (क)।

तभी बानैतो की सैना के स्वामी माहेश को बुलाया और पीथल, कर्ण, उदयसिह तथा मधुकर जैसे योद्धाओ को बुलाया। जगराज, रघुनाथ और गिरिधर जैसे बडे उमरावो और नरो को बुला कर उनसे पूछा कि शाहजादो को क्या उत्तर दे ॥४३॥

उमराव यो बोले—"आप जितना कौन जानता है ? आप बुद्धि, भाग्य, तप और तेज मे हिन्दुओ के सूर्य है। सब जोधा यही कहते है कि आप सव जोधाओ के छत्र है। आपको ही बादशाह ने सूबा देकर दोनो धर्म वाले सैनिको—हिन्दुओ और मुसलमानो—के शिर पर स्थापित किया है। परन्तु यदि आप चाहे तो भले ही रतनसिह से सम्मति पूछ ले क्योकि इस समय वह महेशपुत्र कमधजो मे द्वितीय कर्ण के समान है और युद्ध-व्यूह तथा क्षात्र-धर्म का जानकार है।" ॥४४॥

तब राजा जसवतसिह ने युद्ध की व्यूह-रचना के लिए निर्भय राजा (रतन) को बुलाया और आलोचना (मत्रणा) मे निपुण वे दोनो वीर शाहजादो से समर करने के लिए व्यूह-व्यवस्था करने बैठे।

उन्होने सूरजमल, गाँगा, बाघा और सलखा के राज्यासन पर जलाभिषिक्त होने वाले वीरो तथा रणमल, चाँपा, कूँपा और जैता के अचल वशजो को सेना के अग्रभाग मे किया।

४३ बींद = स्वामी, घडा = सेना, तियारां = तव। झूझारां = योद्धा, जूझार। मोटा पहां = वडे प्रभु। कासूं = क्या।

४४ अक्खै = कहते हैं, राज = आप। मती = बुद्धि, वखत = भाग्य। छात = छत्र, जप्पै = कहते है। सिरहर = शिरोमणि, राह = धर्म, सोवे = सूवेदार, अत सेनापति, थप्पै = स्थापित किया। जुधवध = व्यूह, जाणगर = जानकार, वलि = चाहे तो, वुज्झौ = पूछो।

४५ ताम = तव, रयण = रतनसिंह। आलोच = मत्रणा, सूत्रण = रचने को, समहर = समर। पाटोधर = सिंहासन-धारी, पक्खां = वश, पक्ष। मुहरै = मुखाग्र, अणी = सेना।

धुरि गोदौ वीठल ऊन धूहड ।
ग्राडा साहि मडिया ग्रन्नड ।। [५]
बलू दलाउत सहितौ वेटाँ ।
हर ऊदल ग्रविनासी हेटाँ ।। [६]
जोधा हरौ रूप जेतारण ।
रिणमालाँ जोडै धरियो रण ।। [७]
ऊमा हरौ गिरवर रिण काळौ ।
पोथलिया जाँवलि ग्रौँचाळौ ।। [८]
ऊदौ जगौ किया बे ग्रागै ।
जोड करन जेता छळ जागै ।। [९]
धरिया मुँहरि ग्रणी गिरधारी ।
हेवै दळ हेडवण हजारी ।। [१०]
तिजडा हथ सूजौ केहरि तण ।
किलँवाँ घडा करण रण कणकण ।। [११]
[बधव रासौ बेळ महाबळ ।
खागाँ मुहि पाडणौ बडाँ खळ ।।] [१२]
बिरदाँ तणौ मोड सिरि बाधौ ।
मारण मरण करण रिण माधौ ।। [१३]
ग्रखाहरौ चाढण जळ ग्रक्खाँ ।
सोनगिरौ ग्रागळि सळक्खाँ ।। [१४]

४५ [५] मडियौ (ङ), (च) के ग्रतिरिक्त सभी मे [११] वाँ चरण इसके बाद ।
[६] सरसह (ख) (ग) सरिसौ (छ) ।
[७] रिणमाला रूप जोडे (ङ), धरिये (ग), इसके बाद (ख) मे [१२] वाँ चरण ।
[८] ग्रचाला (ङ) (च) ।
[९] ग्राजागै जोडै ऊन (छ) ।
[१०] धरिग्रणियाँ (ख) (ग), घर ग्रणिग्रामाह (ङ), मुहव (ग) ।
[११] करे (क) (ख) (घ), [रण] (क) मे लुप्त, यह चरण (च) के ग्रतिरिक्त सभी मे [५] के बाद ।
[१२] यह चरण (क) (ख) (ग) (घ) (ङ) (छ) (ज) मे लुप्त ।
[१३] [तणौ] (छ) मे लुप्त ।
[१४] छल [जळ] (च), निगरो (क), सोनिगिरे (ग), सोनीगरो (घ), ग्रमली (घ) ।

गोवर्धन, वीठल और कर्ण धूहड (राठौड) आदि पर्वतोपम वीरो को केन्द्र मे शाहजादो का सामना करने के लिए रखा ।

अविनाशी ऊदल के वशज दलाउत वल्लू और उसके पुत्रो तथा जैतारण के जोधावतो और रणमल के वशजो (कूँपावतो एव चाँपावतो) की जोडी एकत्र स्थित हुई ।

करमसी के वशज विकट योद्धा गिरवर और विशाल पहुँचे वाले पीथल की जोडी वनी और ऊदा तथा जग्गा दोनो की जोडी युद्ध करने के लिए रणक्षेत्र मे आगे की गयी ।

सेना के मुखाग्र मे हय-सेना को हाँक देने वाले हजारी गिरधारी और केहरी-तनय सूजा को हाथ मे तलवार लेकर यवन-समूह को खड-खड करने के लिए रखा ।

[वही उसका बाधव महाबली रायसिंह रखा गया जो खड्ग से वडे-वडे दुष्टो को भूमि पर गिराने वाला था ।]

विरुदो का मुकुट सिर पर बाँधने वाला और युद्ध मे मारण-मरण करने वाला माधो भी वहाँ रखा गया ।

जल का अक्षय अभिषेक करने वाले सोनगरे अखेराज का यह वशज सलख वंगियो के अग्रभाग मे था ।

४५. धुरि=केन्द्र मे, धूहड=धूहट का वशज, राठौट । हेटाँ=साथ । जोडँ=साथ । जाँवलि=युग्मबद्ध, प्रौचालो=वडे पहुँचे वाला । ढ्ल=युद्ध । हेडवण=हाँकदेनेवाले, विनाशक, हजारी=एक हजारी मनसव वाले । तिजडा=खड्ग, किलँवाँ=यवनो की । रानो=रायसिह, वेल=वेला, खागाँ=खड्ग से, मुहि=मही पर, पाडणो=गिरानेवाला । मोड=मुकुट । अवखाँ=अक्षय ।

[केसवदास तणौ गज केहरि ।
आयौ मान झालियाँ असमरि ।।] [१५]
भाटी मुरताणीत भुजाळौ ।
छिलतै मछरि रुघौ छत्राळौ ।। [१६]
[ऊहड मेघ झालियाँ असमर ।
आधारै डिगतौ भुजि अवर ।।] [१७]
वीजा या साथे दळ सब्बळ ।
भाई वध भतीज भुजागळ ।। [१८]
महि लोहडौ खुरसाण मँडोवर ।
अडियौ वडा सरस ग्रहि असमर ।। [१९]
डेरा पूठि चँदोल दिवारे ।
सझियौ गोल विचै सिरदारे ।। [२०]
त्याँ माहे जसराज गजणतण ।
जोधाहरौ माँण दुज्जोयण ।। [२१]
सूजावत गोढै मधकर सझि ।
कमधज राव तणाँ जतनाँ कजि ।। [२२]
वे भाई ग्रहि खग्ग वहस्से ।
इम अवर लग्गा ऊसस्से ।। [२३]
रण रामायण जिसौ रचावाँ ।
लडे मराँ चँद नाम लिखावाँ ।। [२४]

[१५] केवल (ग) में ।
[१७] केवल (ग) में ।
[१८] उया (न) (ग), ज्यू (घ), लियाँ (छ), वत्तीम [भतीज] ।
[१९] अस्मर (क), मरग्रह अल्लड (ड) ।
[२०] दियार्ग, कमी उम्मान विमी सरदारी (घ) ।
[२१] गर्जसिंह तणा (ग), गग तणै (ट), दुज्जोयण (क), दुरजोवण (ख), मतिवत दुजोधण (न), दुरजोधन (ज) ।
[२३] वेम (न), त्र (न) (ग) (न) (न) (ज) ।
[२४] रचावण (क), लिखावण (ड) ।

[केशवदास का पुत्र (माधोसिह) तलवार लेकर गर्व-सहित ऐसा आया मानो हाथी पर सिह झपटा हो ।]

वडी भुजाओ वाला सुरताण-पुत्र भाटी सरदार और युद्धोत्साह से परिपूर्ण रुघा भाटी भी वही थे ।

[वे उद्भट तलवार-रूपी मेघ को पकड कर गिरते हुए आकाश को भुजाओ के सहारे रोक लेते थे ।]

इन दोनो के साथ सवल दल और विशाल भुजाओ वाले भाई, भतीजे, बाँधव आदि भी थे ।

बीच मे मडोवर का छोटा खान था जो युद्ध मे उत्साहपूर्वक खड्ग लेकर अड़ा हुआ था ।

पीछे चंदोल की दीवार के साथ डेरे लगाये और बीच मे सरदारो ने गोल बनाया ।

उसमें गजसिह का पुत्र जोधावत जसवतसिह था जो मान में दुर्योधन के तुल्य था ।

सूजावत महेशदास कमधजराज (जसवतसिह) के कार्य के लिए उसके पास ही सज कर तैयार था ।

(जसवतसिह वोला) "वे दोनो भाई (शाहजादे) खड्ग लेकर ललकारने लगे है और उत्साह के साथ आकाश को छूने लगे है ।

अत हम भी रामायण जैसा युद्ध करेगे और चन्द्रमा रहे तब तक के लिए अमरो मे नाम लिखा देगे ।"

४५. खुरसाण=शासक, खान, असमरि=खड्ग । पूठि=पीछे, चँदोल=सेना का पृष्ठ भाग, गोल=सेना का मध्य भाग । गजणतण=गजसिह-तनय । गोढै=निकट, जतनाँ कजि=यत्नार्थ । ग्रहि=लेकर, वहस्से=परस्पर ललकारना, ऊनस्से=उत्साहित हुए ।

जसवँत अेम बोलियौ ज्याराँ ।
तण माहेस अरज की त्याराँ ।। [२५]
जोधाँ धणी घणा दिन जीवौ ।
दळ सिणगार बस घर दीवौ ।। [२६]
दे सोबौ पतिसाह मूझ दळ ।
सवळी लाज मरण छळ सव्वळ ।। [२७]
मरण तणौ सोबौ दे मोनूँ ।
टीलौ राज धरा छळ तोनूँ ।। [२८]
सारी धर भोगवि गढ साजा ।
रिण आवगो मूझ दे राजा ।। [२९]
रिण मो रहियाँ राज रहेसी ।
कमँधाँ कोइ न बुरो कहेसी ।। [३०]
ऋन मरतै दुज्जौन गयौ ऋमि ।
त्रीकम काळजवन आगै तिमि ।। [३१]
राजा किसन दाव करि रहियौ ।
दाणव तिकौ पछे फिरि दहियौ ।। [३२]
हार जीप वाताँ हरि हाथे ।
बिहुँ पतिसाह सरिस हूँ बाथे ।। [३३]
साहतणा गजूँ दळ सारे ।
धड म्हारौ भजूँ खग धारे ।। [३४]

४५ [२५] जिहारा, तिहारा (ख) ।
[२६] चौ [घर] (ख) (ग) (छ) (ज), रौ (घ) (ड) ।
[२७] मूझल (ख), मनु (घ), मोनु (च) ।
[२८] मोनै (छ), तोनै (छ), टीला (घ), टीकौ (ड), वल (ड) ।
[२९] भोगवे (ड), मनुदहे दीधो रहे अो राजा [मूझ दे राजा] (घ) ।
[३०] कमधो (छ), कोइ न कहेसी बुरो (क), बुरो कोई न कहेसी (छ) ।
[३१] दुरजोध (क) (ग), दुजायेण (ड), भोकम (घ), आगल (ड), भीम (घ) ।
[३२] द्राव (च), पछैतिकौ (क), करिफिरि (ड) ।
[३३] पतिसाहा (क), पुरिसाह (च), सरिस हुसी (घ), सुहुस्यू (ड) ।
[३४] तणौ (क), गजा (घ) (छ), सारा (ड), हारौ (च), भाजूम्हारौ (ड), खग-
धारे (घ), खगधारा (ड), कापधारा (च) ।

यह सुन महेश-पुत्र रतन ने निवेदन किया :—

"हे जीवों के स्वामी ! आप बहुत दिन जीवित रहें। आप सेना के शृंगार और वंश के दीपक हैं।

"शाही दल का सूबा और प्रबल युद्ध में मरने की सम्पूर्ण लज्जा आप मुझे सौंप दें।

"युद्ध में मृत्यु का सूबा मुझे देकर आप राज्य की भूमि में चले जायें तथा समग्र भूमि और सुसज्जित गढ़ भोगें। हे राजा ! इस रण का आयोग मुझे दे दें।

"यदि मैं युद्ध में रह जाऊँगा तो हमारा राज्य रह जायेगा। मेरे रहने पर कमधजों को कोई बुरा न कहेगा।

कर्ण के मरते ही दुर्योधन भाग गया था और वैसे ही काल यवन के आगे श्रीकृष्ण।

"राजा कृष्ण भी दाव करके वापस मुड़ गये थे और इस प्रकार दानव को जलवा दिया था। (अर्थात् भाग जाने की नीति निंद्य नहीं है)।

हार जीत तो भगवान् के हाथ है पर युद्ध में तो मैं दोनों बादशाहों से बराबरी ही करता रहूँगा।

'मैं शाहजादों के सारे दल का गंजन कर दूँगा और खड्ग-धारा से अपने धड़ का खण्ड-खण्ड भी कर लूँगा।

४५ घणा=बहुत। नवलो=नवल। दीलो=शोभित हो। आवगो=आयोग, भार। गयौ भजि=भाग गया; श्रीक्रन=कृष्ण, त्रिविक्रम। दहियौ=जलाया। सरिस=सदृश, बराबरी। गडूं=नष्ट करूँ।

औरँगसाह दिसौ आखौ इम।
जुध करिस्याँ कैरव पाडव जिम ॥ [३५]
आहवि वाहि वहाडि असिम्मर।
महाराज ले जाज्यौ मधुकर ॥ [३६]
मतौ दिढाइ मिले र‍ॅव मारू।
सीख रतन कीधी स्त्रगि सारू ॥ [३७]
ताम जुहार कियौ खग तोले।
बीजे भवि मिलिस्याँ हसि बोले ॥ [३८]
जीवै तिके भलाँ घरि जावौ।
आवै स्त्रगि मो साथे आवौ ॥ [३९]
कालै मरण मनोरथ कीधा।
लाज मरण भारथ भुजि लीधा ॥ [४०]
आप तणै डेरे फिरि आयौ।
जोध जडागि मलैगिरि जायौ ॥ [४१]
करि अँगपान सनान महाक्रित।
बड तीरथ मझि विप्र दिया वित ॥ [४२]
सपत धात चौरँग लिखमी सह।
बगसे असि रैणा सुरही बह ॥ [४३]
देवाँ दरसि फरसि जाइ द्वारे।
पूजा करि डेरे पाधारे ॥ [४४]

४५ [३५] दाखौ (ड)।
[३६] आहिवहाडि (घ), आहिव (ड), महाराजा (क)।
[३७] द्रिढाव (ड)।
[३९] सरगसाथे मो (क), आवि स्त्रगा मो साथे (ख), स्त्रगसारू सो मो साथे (ग)।
[४०] लाजवडा जसआवघ (ड), लाजवडो (घ)।
[४१] जिडग मिल्यागर (ड), गामतेगिर (छ)।
[४२] पात (च), वलि [बड] (छ), दिया विप्रा (क), विप्रादिया (च), लियावित (छ)।
[४३] चौरग लिखमी (ग), रेतणा [रैणा] (घ), सुरसी (छ)।
[४४] दुरसइम दुवारे (ख), धारे (घ)।

"ग्रत ग्रौरगजेब के पास यह कहलवा दीजिए कि कौरव-पाडवो के तुल्य युद्ध करेगे।

"हे महाराज ! ग्राप युद्ध मे खड्ग चलाने ग्रौर चलवाने वाले मधुकर को साथ ले जाइए।"

तब मत निश्चित करके मारू राव जसवतसिह ने रतन को स्वर्ग के लिए (लड कर मरने के लिए) बिदा दे दी।

तब रतन ने खड्ग तोल कर जुहार किया ग्रौर हँस कर कहा कि ग्रगले जन्म मे मिलेगे।

फिर सैनिको से कहा कि जिन्हे जीवित रहना हो ग्रपने घर चले जाये ग्रौर जिन्हे स्वर्ग जाना हो वे मेरे साथ ग्राये।

तब रतन ने दूसरे दिन मरने का मनोरथ किया ग्रौर युद्ध मे मरने की लज्जा ग्रपनी भुजाग्रो पर धारण की।

फिर ग्रपने डेरे ग्राया। वह रतन जोधो के वश का दीपक ग्रौर महेश का पुत्र था।

उसने स्नान ग्रौर पवित्र कृत्य करके बडे तीर्थ मे हाथ मे जल लेकर विप्रो को धन दान दिया।

सप्त धातु ग्रौर चतुरग लक्ष्मी के साथ घोडे, हाथी ग्रौर बहुत-सी सुरभियाँ बख्शीश मे दी।

देवो का दर्शन, देवद्वार का स्पर्श ग्रौर पूजन करके वह डेरे लौटा।

४५ दिसौ=की ग्रोर। ग्राहवि=युद्ध मे, वाहि वहाडि=चलाने चलवाने वाला। मतौ=मत, दिढाइ=दृढ करना। ताम=तब, जुहार=नमस्कार, भवि=जन्म मे। कालै=कल। जोध जडागि=जोधो के वशजो मे दीपक तुल्य, मलैगिरि=महेशदास। सपत धात=सप्त धातु, चौरंग=चार रग के पदार्थ, वगसे=दिये, बखशे, ग्रसि=ग्रश्व, रेणा=ग्रारण्यक हाथी, सुरही=गाये, वह=बहुत से। पाधारे=ग्राये।

होम कराडि भणांडि विप्रां हद ।
जपि आवाहन सुर ईसट जद ।। [४५]
करि भु जाई चाढि कडाला ।
विधि विधि सहि भोजन्न वडाला ।। [४६]
पांति रची चौंसर प्रौंचाळे ।
कवि रजपूत पोखिया काळै ।। [४७] ।।४५।।

दोहा—जुजिठल वाळा ज्याग जिम अन घ्रित छिलै अपार ।।
दिल धाई आसीस दै कवि जपै जैकार ।।४६।।

गाहा—गाजै द्वारि गयन्दो वाजै नीसाण जैतसिर वाजा ।
सारिख इन्द समदो म्हाराजा राज काइम्मो ।।४७।।

आसीस वचनिका—कायम कमध । व्रिद धजावध ।।
मौजां समद । आचार यद ।। [१]
दुरजोण माण । अरजणह वाण ।।
भुजवळी भीम । सूराति सीम ।। [२]
खट भाख जाण । तपतेज भाण ।।
विप्र गऊ पाळ । लीला भुवाळ ।। [३]
वीराधिवीर । हेळां हमीर ।।
मधकर सुतन । करतव्वि क्रन ।। [४] ।।४८।।

वचनिका — वासठि हजार फौजां रा भांजणहार । [१] छ खण्ड खुरसाण रा विधूंसणहार । [२] मैमत हाथियां रा मारणहार ।

४५ [४५] अस्ट [ईसट] (छ) ।
[४६] दीघदीघ (घ), सहस (ग) ।
[४७] चौंमा चौमर (च), प्रचालड (ग), पु छाले (घ), पु चाले (च) ।

४६ जुजिट्ठल (ग) (छ), युघठल (घ), ज्युधिष्टर (ङ), जित (च), जेम (ङ) (च), वोल्या (क), जीमङ (घ), जीमैं (च) ।

४७ गाजौ (च), द्वारौ (च), वाजौ (ग) (च), काइम (ग), यह गाहा (ङ) मे लुप्त है ।

४८ [२] दुर्याधन (ङ), अजन (ङ), अरिजन (च), भुजगली (घ), सुरताण (छ) ।
[३] विप्रागुवाल (क), विप्रगोपाल (घ) (ङ) ।
[४] वीराति (क), करन (ग) ।

४९ [२] (च) मे लुप्त ।

वहाँ तत्र उसने होम करवाया और अनेकानेक ब्राह्मणो से पाठ करवा कर इष्ट देवो का जप और आह्वान करवाया।

फिर कढाइयाँ चढवा कर अनेक विशिष्ट पकवान तैयार करवाये और कवियो को चारो ओर पक्ति मे बैठा कर भोजन करवाया। इस प्रकार उस विशाल पहुँचे वाले काले राजपूत ने कवियो को तृप्त किया ॥४५॥

युधिष्ठिर के यज्ञ के समान वहाँ अपार अन्न और घृत भरा पडा था। उससे हृदय मे तुष्ट होकर कवि लोग आशीश देकर यो जयजयकार बोल रहे थे ॥४६॥

आपके द्वार पर गजराज गर्जना करे। विजयश्री के वाजे और नगाडे बजे। और महाराजा का राज्य इन्द्र और समुद्र के समान कायम रहे ॥४७॥

वह कमधज चिरजीवो हो जिसका विरुद ध्वजाओ के तुल्य ऊँचा है, जिसके आनन्द की लहरे समुद्र की सी है और जिसका आचरण इन्द्र का सा है। मान दुर्योधन का सा, वाण अर्जुन का सा, भुजाओ का वल भीम का सा है और जो शूरवीरता की सीमा है। षड् भाषाओ का ज्ञाता है, तप-तेज मे सूर्य जैसा है, गो-विप्रो का पालक है, और लीलाकारी भूप है। वीराधिवीर है, हमीर जैसा तरगी है, ऐसा मधुकर-पुत्र कर्ण के से कर्तव्यो वाला है ॥४८॥

वासठ हजार फौजो का भजन करने वाला, छह खण्ड और खुरासान के यवनो का विध्वस करने वाला, मदमत्त हाथियो को

४५ कराडि=करवाकर, भणाडि=पाठ करवा कर, ईसट=इष्ट। भु जाई=भोजन करवा कर, कडाला=कढाइयाँ, वडाला=वडे। चौसर=चतुर्दिक। पोखिया=तुष्ट किये।

४६ जुजिठल=युधिष्ठिर, छिलै=भरपूर हुआ, ध्राई=तुष्ट होकर।

४७ जैतसिर=जयश्री, सारिख=सदृश।

४८ व्रिद=विरुद, यद=इन्द्र। सूराति=शूरता। भुवाल=भूपाल। हेलाँ=तरग, गौरव।

[३] पातिसाहाँ रा विभाडणहार। [४] पातिसाहाँ रा पडिगाहण। [५] गजराजाँ राजान के गजवाग। [६] अरिसाल। [७] विजाई माल। [८] लखदीयण। [९] जसलीयण। [१०] राजान कै राजा। [११] तपै महाराजा रयण। [१२] तिणि वेळा कपूर वीडा भाइयाँ उँबरावाँ कवीसुराँ कूँ दिया। [१३] दीवाण किया। [१४] सभा रूप कैसा। [१५] अैसा जैसा छत्तीस वस वणाव करि बैठा राजेसुर। [१६] साहिव खाँन भगवान अमर सारिखा। [१७] अमर गागावत गिरधर सारिखा। [१८] बारहठ जसराज जैसा कवेसर। [१९] तिजारा की वाडी फूल फगर। [२०] जळ कमळ हस का वणाव। [२१] जाणै मानसरोवर सौरभ की लहरि आवै। [२२] जवाधिजळहर गुणीजण गाया। [२३] रग राग सुणाया। [२४] राजा महेसदास का जाया। [२५] इन्द्र सा निजरि आया। [२६] ॥४९॥

चाद्रायणौ—अैसा वस .छतीस दरग्गह उम्बरा।
सामँद चन्द दडिन्दक आरिख इन्दरा।
जोधाँरा विच जोध बिराजै ज्यारका।
परिहाँ खागीवंध कमध मधावत मार का ॥५०॥

४९ [५] पतगाहण (ड)। [६] गजराजा के गजवाग (क) (ग), गज-राजाराजान के गज-राज (घ), गजराज की गजवाग (च), गजवागाँ के गजवाग (छ)। [८] विभाई (ड)। [१२] प्रतिपै (क), रैणसाह (क) (च), रयणसाह (ग) (ड), रणसाह (घ)। [१३] भाया (क) (ग), भाया नै (ड), भाइ (च), भायानु (छ), कवीसुरानु (ड), कवेसुरीनु (च), कवेसुराकु (छ)। [१५] छभा (च), स (छ), कैसी (ड)। [१६] [जैसा] (क) (ख) (ग) (घ) (ड) (ज) मे लुप्त। [१७-१८] साहिवखान भगवान अमर (क) (घ), साहिवखान अमर वोलिआ वहादर (ख) (ज), साहिवाखान भगवान अमर वोलिआ वहादर (ग), साहिवखान भगवान सारिखा अमर गागावत सारिखा गिरधर (घ) (च), भगवान सरीखा अमर सरीखा गिरधरदास गागावत सरीखा (ड)। [१९] बारहठ जसराज सरीखा (ड), जसराज सरजेहा कवेसर (घ)। [२५] महेसजाया (ख), महेसदासजाया (ग), महेसरा जाया (घ), महेसदास जाय (च)। [२६] सोजाणे (ग)।

५० दडिन्दह (क), दण्ड आरखे (ग), जरका (ग), [परिहाँ] (क) मे लुप्त।

माग्ने वाला, (शत्रु) बादशाहो का दलन करने वाला, बादशाहो का शरणदाता, गजराजो और राजाओ को बाँधने वाला, शत्रुओ को शालने वाला, विजय की माला वाला, लाखो का देने वाला, यश का लेने वाला, राजाओ का राजा, महाराजा रतन सप्रताप विद्यमान रहे। उसने उस समय कपूर-युक्त पान के बीडे अपने बंधुओ, उमरावो और कवीश्वरो को दिये और दरबार किया। उस दरबार का रूप कैसा था ? ऐसा कि छत्तीस वशो के क्षत्रियो से सज्जित होकर वह राजेश्वर बैठा। उसके पास साहिबखान, भगवान और अमर जैसे बहादुर। अमर गाँगावत गिरधर जैसे भी। बारहठ जसराज जैसे कवीश्वर भी। ऐसा लग रहा था मानो पोस्त की बाडी मे फूल बिखरे है। अथवा जल,कमल और हस एक साथ शोभित है। अथवा मानो मानसरोवर मे सुगन्ध की लहर आ रही है। अथवा मानो जवाधि का बादल है। ऐसा गुणिजनो ने प्रशस्ति गायन किया। और रंगराग भी सुनाये। उस समय राजा महेशदास का पुत्र रतन इन्द्र जैसा दृष्टिगोचर हुआ ॥४९॥

छत्तीस वशो के उमराव दरबार मे ऐसे लगते थे मानो इन्द्र के यहाँ समुद्र, चन्द्र और सूर्य हो। जोधो के बीच मे शत्रुहंता मधुकर-पुत्र (रतन) के कमध (राठौड) जोधा (योद्धा) ऐसे विराजमान थे, मानो कामदेव के सहायक वसत आदि खड्ग बाँध हुए हो। ॥५०॥

४९ विभाडणहर = दलन करने वाला। पडिगाहण = शरणदाता। गजबाग = हाथियो का मुँह बाँधने वाला। दीवाण = सभा, दरबार। कवेसर = कवीश्वर। तिजारा = पोस्त, फूल फगर = प्रफुल्लित। सौरभ = सुगन्ध। जवाधि = जवारा, जलहर = बादल।

५० दरग्गाह = दरगाह, दरबार। दडिन्दक = सूर्य, आरिज = सदृश। ज्यारूा = जैसा। खागी-बध = खडग धारी।

वचनिका — तिण वेळा दातार भूझार राजा रतन। [१] मूँछाँ करि घाति बोलै। [२] तरवार तोलै। [३] आगै लका कुरखेत महाभारथ हुवा। [४] देव दाणव लडि मुवा। [५] च्यारि जुग कथा रही। [६] वेदव्यास वालमीक कही। [७] औ तीसरी महाभारत आगम कहताँ उजेणि खेत [८] अगनि सोर गाजसी। [९] पवन बाजसी। [१०] गजबध छत्रबध गजराज गुडसी। [११] हिंदू असुरायण लडसी। [१२] तिका तो बात आय साकाबध मिरै चढी। [१३] दुइ राह पातिसाहाँ री फौजाँ अडी। [१४] दिली रा भर भारथ भुजे दिया। [१५] कमधज मुदै किया। [१६] वेद सासत्र बताया। [१७] सु अवसाण आया। [१८] उजेणि खेत। [१९] धारा तीरथ। [२०] धणी रो काम। [२१] खित्री रो धरम साचवीजै। [२२] लोहाँ रा बोह सेलाँ रा धमका लीजै न दीजै। [२३] खाँडा रो खटाखडि झटाझडि डडाहडि खेलीजै। [२४] पातिसाँहा री गजघडा झड़ा ओझडाँ मारि ठेलीजै। [२५] पातिसाहाँ रे छत्र घाव कीजै। [२६] पुरजा पुरजा हुई पडीजै। [२७] तौ वैकुंठ चढीजै। [२८] क्यूँ बारहठ जसराज। [२९] हाँ महाराज। [३०] महाराज रा मनोरथ श्री महाराज पूरै। [३१] अखियात ऊबरै। [३२] महाराज रा मुँहडा आगै लडाँ। [३३] टूक टूक होय पडाँ। [३४] अतरा माहै साचौरा मछरीक। [३५] गाहिड रा गाड़ा। [३६] फौजाँ रा लाडा। [३७] काल्ही रा कळस। [३८] सती रा नाळेर।

५१ [१] वार [वेला] (च)। [२] मु घाधी (च), मु भा (च), घालि (क) (छ)। [३] के स्थान पर (छ) मे कहाजु, (ग) मे 'कहयौऊ' तथा [३] भी। [८] सुऔ (ग), आगे [आगम] (क), आयो आगम (घ)। [९] जागसी (ख) (घ), आगम सोरभ गजसी (च)। [११] पडसी [गुडसी] (ख), छत्रवध गजवध गजराज गुडसी (च)। [१३] साका वधभी आय (क), तिकावात अहि साकाबधवाह आवू (ख), वात साका वधीवात (घ)। [२१] रा (च)। [२२] रा (ग) (च), साचदीजै (ख) (ग), [२३] [दीजै] (ख) मे लुप्त, लीजै दीजइ (घ)। [२४] डडेहडि (च) [२५] गज घडाभाजा-ऊझडा (घ), घडाभीडा औझडा (ड), [झडा] (च) मे लुप्त। [२९] क्यूँ कहो (ग), वारट (छ)। [३२] ऊगरै (क)। [३३] मुँह (च)। [३५] इतरै माहे साचौरौ (छ)। [३६] गाहिड री गाडी (छ)। [३७] कुँआरी घडा रा गाडा (च), कुँआरी रो

उस समय दातार और योद्धा राजा रतन ने मूँछो पर हाथ रख कर और तलवार तोल कर कहा, "पहले लका मे और कुरुक्षेत्र मे महायुद्ध हुए थे और देव-दानव भी लड कर मरे थे। उन की कथाएँ चार युगो तक रही और उन का वर्णन वेदव्यास तथा वाल्मीकि ने किया। और अब तीसरा महाभारत उज्जैन क्षेत्र मे होने वाला है। तोपो मे बारूद गर्जना करेगी। वायु तीव्रता से चलेगी। हाथियो और छत्रो वाले वीर तथा गजराज युद्ध मे गिरे गे। हिन्दू और यवन लडेगे। यह तो शाका-बध वार्त्ता शिर पर आ गयी है। दोनो धर्मों की बादशाही फौजे अड गयी है। दिल्ली का भार और सग्राम कमधजो की भुजाओं को सौपा गया है। वेद-शास्त्रो ने जो अवसर बताया है वह आ गया है। उज्जैन क्षेत्र मे खड्ग-धारा-रूपी तीर्थ मे स्वामी के काम आना क्षत्रिय का धर्म है, यह सत्य सिद्ध करना है। तलवारो के प्रहार और सेलो के धमाके लेना और देना है। खाँडो की खटाखट-झटाझट से दण्डारास खेलना है। बादशाहो की गज-घटा की झड़ी को तलवारो के सीधे प्रहार से मार कर ठेल देना है। बादशाहो के छत्र पर घाव करना है। टुकडे-टुकडे हो कर गिर पडना है। तब वैकुठ चढना है। क्यो बारहठ जसराज ?" (उत्तर) "हाँ महाराज। आप के मनोरथ भगवान् पूरे करे। हमारी केवल कथा शेष रहे। हम लोग आप के सम्मुख लडे। टुकडे-टुकडे हो कर गिर पडे।" इतने मे युद्धोत्साही साँचोरे वीर, अभिमान के समूह, फौजो के स्वामी, काली के कलश, सती के नारियल,

५१ घालि = रख कर। मुवा = मरे। सोर = शोरा, बारूद। गुडसी = गिरेगे। तिका = वह। पाँतिसाहाँ = बादशाही, शाहजादो—औरगजेब और मुराद। सुर्दे = सुपुर्द। साचवीजे = सच्चा सिद्ध करना है। वोह् = प्रहार। झडा = झडी, ओझडाँ = सीधा वार। अखियात = कहानी (मात्र), ऊबरे = शेष रहे। मछरीक = युद्धोत्साही। गाहिड = अभिमान। लाडा = प्रिय स्वामी। काल्ही = काली।

[३६] सादूळरा सादूळ। [४०] भगवान अमर बोलिया वहादर। [४१] [अै तौ कहै] गोळाँ सर बाणाँ री मारि लोपि हाथियाँ रा कुंभाथळाँ खग छरा वजाड़ाँ। [४२] गज ढाल पाडाँ। [४३] पातिसाहाँ रा खासाँ झडाँ जाडाँ थडाँ आडाँ खडाँ जायस्याँ। [४४] रुक पियाला पीयस्याँ पायस्याँ। [४५] चाचरि बिहँडस्याँ विहँडायस्याँ। [४६] रिणखेत रै विखै रगियै वाणासि मतवाळा ज्यूँ घूमताँ थकाँ हाथियाँ सूँ टल्ला खायस्याँ। [४७] महारुद्र नै सिर पेस कराँ। [४८] अपछरा वराँ। [४६] देवता स्यावास कहिसी। [५०] च्यार जुग बात रहिसी। [५१] इतरा माहै बोलियौ गिरधर गाँगावत। [५२] रावताँ पति रावत। [५३] पातिसाहाँ रा नर हैंवर कुंजर घडा पछाडाँ। [५४] चद जसनामौ चाडाँ। [५५] इतरा माहै बोलियौ साहिवौ कुंभाणी। [५६] मुरधरा रौ अणी पाणी। [५७] [औ तौ कहै] माहरै तो भगवानदास वाघौत कहता। [५८] ॥५१॥

गाहा—अवसाण मरण खग धारा सामि कामि भजियै देहा।
सोचित चित नित नित्त पाइज्जै पुन्न रेहा ॥५२॥

वचनिका — अस औ तौ वडौ अवसाण आयौ। [१] ऊँडै द्रहि किलकिला ज्यूँ फूलधारा विचै उडि पडाँ। [२] पातिसाहाँ री फौजाँ सूँ लडाँ। [३] महाभारथ करि मराँ। [४] वगडी जोधाण ऊजळा कराँ। [५] इतरा माहै वोलियौ रासौ कुँवर। [६] दूसरौ मधुकर।

५१ लाडो (छ)। [४२] वाण गोलियाँ सरारी (छ), (ग) प्रति मे [४२] के 'खग .' के बाद मे [४६] तक के स्थान पर यह पाठ है— खग छला रा वजाडिस्या। विहडाइस्या। महारुद्रनू सिर पेसी करा। अपछराँ वराँ।' [४४] [झडाँ] (ग) मे लुप्त। [४५] रुक पाटल्या पीवस्याँ (क), रुक प्यालो पीवननि प्याइस्या (ग), रुक पिआला पीव पाइस्या (च)। [४७] (क) मे लुप्त। [४८] करस्या। [४६] वरस्याँ। [५१] [च्यार जुग] (च) (ज) मे लुप्त। [५२] इतरै वात करता (क), (च) मे [५२] से [५५] तक लुप्त। [५५] चदनामो (क)। [५७] को [रो] (क) (छ)। [५८] कहतौ (ग), कहै (च)।

५२ रेहाई (ग) (ज)।

५३ [१] उ अ (क), सुओ (ग) (ज), सो तो (घ)। [२] द्रह ज्युं (क)। [६] इतरै वात (क), इतरै मैं वात (ग)।

शार्दूल के सिह-जैसे पुत्र बहादुर अमर और भगवान बोले—[वे तो कहते हैं] "गोलो, बाणो; शरो की मार की उपेक्षा करके हाथियो के कुंभस्थलो पर खड्गधारा बजायेगे। हाथियो की ढाल गिरायेगे। शाहजादो के प्रमुख झडो की ओर विकट समूह को चीर कर जायेगे और खड-खड होगे। खड्ग के प्याले पीयेगे और पिलायेगे। शिर काटेगे और कटायेगे। रणक्षेत्र मे बाणो और असियो के रग मे रँगे हुए मतवाले-से घूमते हुए हाथियो से भिडत करेगे। महारुद्र को शिर भेट करेगे। अप्सराओ को वरेगे। देवता शाबाश कहेगे। चार युग तक हमारी बात (कहानी) प्रसिद्ध रहेगी।" इतने मे रावतपति रावत गिरधर गाँगावत बोला "बादशाह के नरो, कुंजरो, हयवरो के समूहो को पछाडेगे और यावच्चन्द्र यशनामे मे उल्लिखित रहेगे।" इतने मे साहिबखाँ कुंभाणी बोला, जो मुरुधरा की सेना की आब है। [वह तो कहता है] हमारे तो भगवानदास बाघौत यो कहा करता था ॥५१॥

"मरने का अवसर आने पर स्वामिकार्य के हेतु खड्गधारा से शरीर का भजन करवा लेना चाहिए और नित्यप्रति इसी विषय का चिन्तन करते हुए इसे ही प्रमाणित रूप से पुण्य-रेखा मानना चाहिए ॥५२॥"

"इस लिए यह बडा अवसर आ गया है। गहरे दह मे किलकिला पक्षी के समान हम भी फूलो की धारा जैसे युद्ध मे उड पडे। शाहजादो की सेनाओ से लडे। महाभारत कर के मरे। (जोधपुर के अन्तर्गत) बगडी स्थान के राठौडो का नाम उज्ज्वल करे।" इतने मे कुँवर रायसिह बोला, जो दूसरे मधुकर के ही तुल्य था।

५१ जाडाँ = गहरे विकट, थडाँ = समूह, रुक = तलवार। चाचरि = खोपडी, विहंडस्याँ = काटेंगे। विखै = प्रसग, मे। अणी पाणी = सेना की आब।

५२ पाइज्जै = पाइए, समझिए, रेहा = रेखा।

५३ ऊँडै = गहरे, किलकिला = पक्षी विशेष।

[७] [औ तौ कहे] जळाबोळ रिण समद माहे ग्रसि जिहाज धरां । [८] किलवां घडां मारि पारि करां । [६] मरां तौ अपछरां वरां । [१०] नहीं तौ जीवित सिभ हुइ ऊबरां । [११] बारहठ कहै बाप हो बाप । [१२] बाप रै जोडै अतुळी बळ । [१३] भलो ग्राडियो बाळ धमळ । [१४] महाराज विमाह रै ग्रागम मगळ धवळ खभाइची कीजै । [१५] पिण औ महाभारथ री ग्रागम । [१६] अेक बार सूरां पूरां रा ग्रवसाणसिद्ध खित्रियां रा वडा राग माहे वडा दूहा गवाडी । [१७] ज्यूँ सूरां पूरां रा चाचरां रा केस चणणाइ नै ऊभा हुवै । [१८] पोरिस चढै । [१६] सींग ब्रह्मण्ड ग्रडै । [२०] कायरां रा धडा पडै । [२१] विहाणै ग्रात लोक तै स्रग लोक जायस्यां । [२२] सूरां पूरां खित्रियां री बात सुणो । [२३] ग्रापणी ही केइ अेक सुणसी । [२४] वाह वाह बारहठजी भली कही । [२५] मन री लही । [२६] हुकम किया । [२७] जाँगडियै वडा राग माहे दूहा दिया । [२८] परिजाऊ दूहा । [२६] वेगडै साँड धवळ रा दूहा । [३०] अेकळगिड बाराह रा दूहा । [३१] मुञ्ज मारवणी रा दूहा । [३२] राव रिणमल रा दूहा । [३३] राव ग्रमर रा दूहा । [३४] कल्याणमल रायमलोत रा दूहा । [३५] करण रामौत रा दूहा । [३६] तेजसी डूँगरसीयौत रा दूहा । [३७] जैमल पत्ता रा दूहा । [३८] जैता कूँपा रा दूहा । [३६] प्रिथीराज जैतावत रा दूहा । [४०] गाँगा डूँगरोत रा दूहा । [४१] ग्रखैराज सोनिगरा रा दूहा । [४२] नगै भारमलोत रा दूहा । [४३] ग्रमरै धरमावत रा दूहा । [४४] ईसर जीवावत रा दूहा । [४५] सोभा साचौरा वीकमसी रा दूहा । [४६] ग्रवर ही छत्तीस वस ग्रवसाणसिद्ध खित्रियां रा दूहा गाया ग्रर सुणाया । [४७] ॥५३॥

५३ [१२] बारटक काहियौ (घ), बाप बाप (क), बाप (ग) (च), बाप रो बाप (च) । [१४] धवल (घ) । [१५] विवाहरू (घ), खभाइती (क) । [१६] (क) मे लुप्त । [१७] ग्रेक ग्रेक सो ग्रवसाण (च), वडा वडा (च) । [१८] चरचरा (क), चणचणाइन (ग) । [१६] पोर (क) । [२१] थी [तै] (ज) । [२२] [लोक] (च) मे लुप्त । [२५-२६] बारहठजी नु मनरी जही भली कही (ग), मनरी लही कही । [२७] हुकक (च), कियो (क) । [२८] जागडियै नै (क) (छ) । [२६] परजीऊ (ग) । [३१] वारा रा (घ) (छ) । [३२] गजनमारवण (च) । [३५] कल्याणदास (क) (ग) (छ), कल्याण (च) । [३६] रामवाण (च) । [४१-४२] (च) मे लुप्त । [४५] (क) (छ) मे लुप्त । [४६] साँचोरा नै (छ) [४७] गाया सुणाया (च) ।

[वह तो कहता है] "जल से परिपूर्ण रण-समुद्र मे तलवार रूपी जहाज डाल दे। यवन-सैन्य को मार कर पार करे। यदि मारे जाये तो अप्सराओं का वरण करे। नही तो जीवित शभु (क्षत-विक्षत) होकर निकले।" तब बारहठ बोला "बाप रे बाप ! पिता के तुल्य अतुल बलशाली स्वामि-पुत्र अच्छा उत्साहित हुआ। हे महाराजा ! विवाह का सा धवल मगल हो रहा है अत खम्माच राग का गान तो करवाइए ही। परन्तु यह महाभारत का आगम भी है अत एक बार अपूर्व शूर-वीर अवसान-सिद्ध क्षत्रियो के बडे दूहो का बड़े रागो मे गान करवाइए, जिससे अपूर्व शूर वीरो के मस्तक आवेश मे आकर ऊँचे हो जाये, पौरुष चढ़े, और सीग (शिखा) ब्रह्माण्ड मे जा लगे। कायरो के धड गिर जाये। कल तो मृत्यु लोक से स्वर्ग लोक जायेगे ही इस लिए अब अपूर्व शूर-वीर क्षत्रियो की बाते सुने। क्योकि बहुत से हमारी भी सुनेगे।" (महाराज ने कहा) "वाह-वाह बारहठ जी ! आपने मन के अनुकूल बहुत अच्छी बात कही।" (तब महाराज ने) हुक्म दिया। तो जांगडियो ने बडे राग मे दूहे कहे जो वीरोत्साह-जनक थे। बेगड़े सांड धवल के, एकलगिड़ वाराह के, मुञ्ज मारवणी के, राव रिणमल के, राव अमर के, कल्याणमल रायमलौत के, करण रामौत के, तेजसी डूंगरसिहौत के, जयमल पत्ता के, जैता कूंपा के, पृथ्वीराज जैतावत के, गाँगा डूंगरौत के, अखैराज सोनिगरा के, नगा भारमलौत के, अमर धरमावत के, ईसर जीवावत के, शोभा सांचोरा वीकमसी के तथा अन्य छत्तीस वशो के अवसान-सिद्ध क्षत्रियो के दूहे गाये और सुनाये ॥५३॥

५३ जलावोल = जलपूर्ण। आडियो = उत्साहित हुआ, धमल = स्वामी। विमाह = विवाह, खभाइची = खम्माच-गायन। चणणाड = आवेशपूर्ण होकर। विहाणै = प्रात काल, कल। परिजाऊ = विरदायक, जोश चढाने वाले।

दूहा—मारू भड चढिया मछरि करवा भारथ कत्थ ।
राग वडाळा वज्जियाँ सको सचाळा सत्थ ।।५४।।
जसवँत औरँग साह जब वेद कतेब वचाडि ।
बे छत्रपत्ति बहस्सिया रचि बीये दिन राडि ।।५५।।
सिलहाँ खानाँ ऊघडै बह भड कछै दुबाह ।
कटकाँ बिहुँ हूँकळ कळळ हुवै सनाह सनाह ।।५६।।
दळ सिणगार विरोळ दळ दावानळ दताळ ।
दिया जसै औरँग दुवा छोडौ गज छछाळ ।।५७।।

॥ अथ हाथियाँ रा वखाण ॥

छद भुजंगी—उरं औद्रके सास अभ्यास आणे ।
वडा जूह पूँतारिया पीलवाणे ।। [१]
गँडा मारि वेसारिया नीठि गज्ज ।
रुग्रामाल फेरै करै झाडि रज्ज ।। [२]
तियाँ चोपडै तेल सिन्दूर तन्न ।
वयडा वणावै घणूँ स्याम व्रन्न ।। [३]
नाडी भींडियाँ अग लग्गा निहग ।
जटा जूट सनाह जे कोड जगं ।। [४]
कसे पाखराँ चामराँ जूह काळा ।
वणे जाणि पाहाड हेमग वाळा ।। [५]
धजाँ फाबि नेजाँ गजाँ सीस ढल्ल ।
मत्थै उड्डिया जाणि गुड्डी महल्लं ।। [६]

५४ मचरी (ग), कछ (क) (छ), सहुकोवाल्या (ग), वडाला [सचाळा] (च), सच्छ (क) ।
५५ वेसिया (ग), रवि (क) ।
५६ वहभड वह वृड (ग), कये (क), हुग्रैसग्रा (ग) ।
५७ हुग्रा [दुवा] (च) ।
५८ [१] उरग (क) (ग), आरग (घ) ।
[२] वेसारिण्या (क), गज्जा (ग), रज्जा (ग) ।
[३] वयाड (ग) ।
[५] काल (घ), वाल (घ) ।
[६] ढल्ला (ग), महल्ला (ग) ।

तब मारवाड़ के भटो को महाभारत के कृत्य करने के लिए उत्साह चढा और बडे राग के बजने पर समस्त दल चल पडे ।।५४।।

तब जसवन्तसिह और औरगजेब ने क्रमश वेद और किताब (कुरान) का पाठ करवाया और दूसरे दिन युद्ध के लिए दोनो छत्र-पतियो ने चुनौती दे दी ।।५५।।

सिलहखाने खोल दिये गये और भट तलवार कस कर चले। दोनो सेनाओ के सन्नाह-सन्नद्ध होने से कल-कल निनाद हुआ ।।५६।।

जसवतसिह और औरगजेव दोनो ने दल के शृगार, दलो को रौदने वाले और विशाल दाँतो वाले दावानल तुल्य हाथी युद्धार्थ छोड दिये ।।५७।।

गज-वर्णन

फीलवानो ने कांपते हुए हृदय से श्वास को रोक कर हाथियो को पुचकारा।

फिर अकुश मार कर तथा रूमाल फेर कर उनके कपोलो पर से धूल झाडते हुए बड़ी कठिनाई से उन्हे बैठाया ।

फिर उनके शरीर पर सिन्दूर और तेल चुपड कर उन्हे घन-श्याम वर्ण बना दिया ।

रस्सियाँ कसे हुए, कवचो से अत्यधिक सजे हुए और युद्ध-प्रिय वे हाथी आकाश को छू रहे थे ।

पाखर कसे हुए चमर सहित हाथियो के काले यूथ ऐसे लगते थे मानो स्वर्ण के पहाड बने हो ।

हाथियो के शीश पर नेजे, ध्वजाएँ और ढाले ऐसी फब रही थी मानो महल के मस्तक पर पतगे उड रही हो ।

५४ सको = सब, सचाळा = चल पडे ।

५५ वचाडि = पढवा कर, बीये = दूसरे ।

५६ सिलहाँ खानाँ = कवचागार, कच्छै = कसना, दुवाह = दुर्वह खड्ग ।

५७ विरोळ = रौदने वाले, दुवा = आज्ञा, छ्छाळ = हाथी ।

५८ ओद्रकै = धडकता है, पूंतारिया = पुचकारे, पीलवाणे = महावत । गँडा = अकुश, वेसारिया = बैठाये, नीठि = कठिनाई से । वयडा = हाथी । नाडी = रस्सी, भीडियाँ = कसी हुई, निहग = आकाश, कोड = कामना । फाबि = सजी, गुड्डी = पतग ।

पटे ऊपटे मद्द धारा पटाळ ।
खळक्कै गिरा मेर ते नीर खाळ ॥ [७]
प्रळै काळ छछाळ छूटा पटाळ ।
क्रमै डारणा कारणा भूत काळ ॥ [८]
लुडै छाकिया काळ ज्यूं डाण लग्गे ।
पखे पार ताणै जिके लोह पग्गे ॥ [९]
सभ्भै झाड़ि उप्पाडि अैसा सनड्ढ ।
गढाँ पाड़ि वेछाड़ि ओछाडि गड्ढ ॥ [१०]
कुलं अट्ठ चल्लै गिर गज्ज काळा ।
मँडै इन्द्र जाणै घटा मेघमाळा ॥ [११]
फवै वग्ग पती अगा दंत फौज्ज ।
गजाँ वाज वीजाँ खिँवै सीस गज्ज ॥ [१२]
कपोल गज चोल सिन्दूर केसं ।
ओपै इन्द्र थानंख जैसा अरेस ॥ [१३]
तियाँ माँहि ऊभी वणै रेख तास ।
पवै उप्परै जाणि फूले पलासं ॥ [१४]
दळाँ रोळ दन्ताळ अैसा दुगम्म ।
जम चालिया सामुहा जाणि जम्म ॥ [१५]
रजी ऊमडै व्योम नूं रोस रत्ता ।
धुवाँ धार चारक्खियाँ धत्तवत्ता ॥ [१६]

५८ [७] पटाला (क), मेरवीजाणि (क), मरथी नीर (ग) ।
[८] क्रमी दासहा कारहा (घ), काला (ग) ।
[९] झुभै [लुडै] (छ), डाल (क), तगा (ग), लूग (घ), लाहपग (छ),पगा (ग) ।
[१०] मभ्भे (ग), डैसा (क), डैसी (छ), ऊछाडिवेछाडि (ग) ।
[११] कुनो (छ), ज [गज्ज] (ग), ज्ञूह (छ), मिले इन्द्रचाले (ग) ।
[१२] पखी (ग), पज्ञा (छ), फौजा (क) ।
[१३] नम (च), अरस (च) ।
[१४] नवै (ग), फूनी (क) (ग) ।
[१५] मेम (ग) ।
[१६] रजीऊपटी (क), राजीव मडे (ग), रजीडमरट (घ), गोमान रोम (ग), व्येद्रुम (ठ), नारे (घ) ।
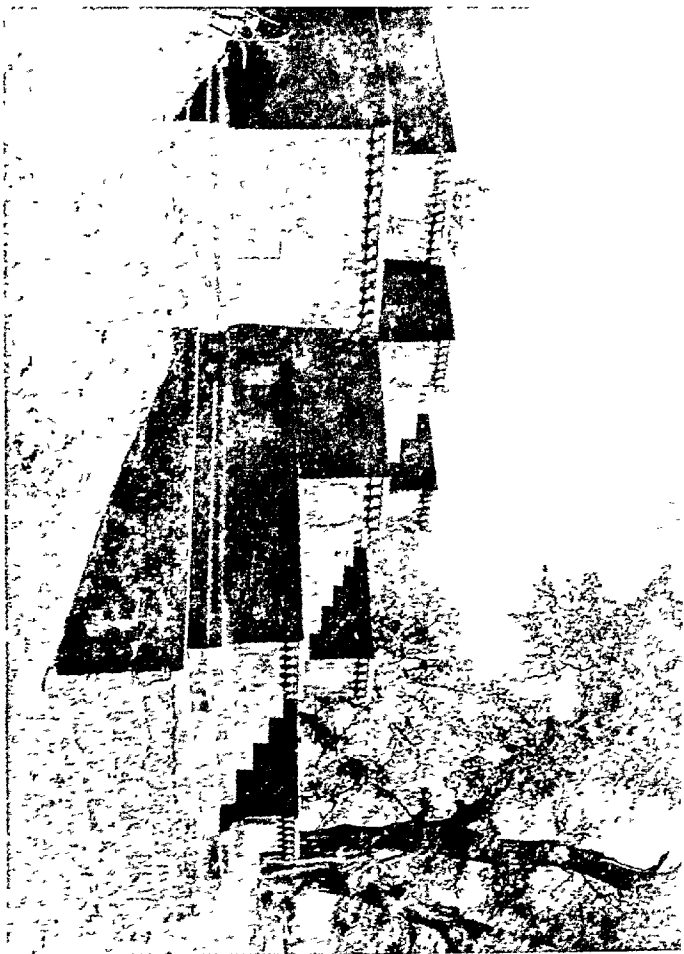
रतनसिंह की रानियों का स्मारक – नीनोर (कोठडी) के तालाब के किनारे

हाथियो की मदधारा उन के कपोलों से ऐसी उमड रही थी मानो मेरु गिरि से जल के नाले खलल-खलल करते हुए बह रहे हो।

ये मद झरते हुए हाथी ऐसे विचरण कर रहे थे मानो प्रलय-काल के दारुण कारण-भूत साक्षात् काल भगवान हो।

मद की धारा लगे हुए वे हाथी मत्त हो कर तलवार के रस मे पागे हुए अपार छके हुए काल के समान झूम रहे थे।

वे वृक्षो को उपाड कर सन्नद्ध होते हुए ऐसे लग रहे थे मानो गढो को उपाड कर और उठा कर गड्ढे मे डाल रहे हो।

काले हाथी ऐसे चले मानो पर्वतो के आठो कुल चले हो अथवा मानो इन्द्र ने मेघमाला सजायी हो।

आगे गज-सैन्य के दन्त ऐसे फब रहे थे मानो बक-पंक्ति हो। उन के शीशो पर गर्जना कर के प्रहार करते हुए घोडे ऐसे लग रहे थे मानो बिजली चमक रही हो।

हाथियो के कपोलो पर लाल सिन्दूर ऐसा शोभित हो रहा था मानो इन्द्र-धनुष हो।

उसके बीच मे रेखा ऐसी बनी थी मानो पर्वत पर पलाश फूला हो।

ऐसे दुर्गम दांतो वाले हाथी दलो को रौदते हुए यो चले मानो यम के सम्मुख यम ही चले हो।

रोष के कारण वे आकाश मे धुआँधार रेत उडा रहे थे और उनके महावत 'धत्तधत्ता' कह कर उन्हे हाँक रहे थे।

५८ पटाल = कपोल, खलक्कै = बहते है। डारणा = दारुण। लुडै = झूमना, छाकिया = पूर्ण तृप्त, मत्त, पखे = पगे हुए। सनड्ढ = सन्नद्ध। अगा = आगे, वीजां = बिजली, खिंवै = चमकती है। चोल = लाल। तियाँ = उन। दुगम्म = दुर्गम। रोसरत्ता = रोषाविष्ट, चारक्खियां = महावत।

रजी धोम सूँ वीँटिया गज्ज राजै ।
वडे अन्नडे जाणि रीँछी विराजै ॥ [१७]
भयाणक भैभीत सोभत. भार ।
क्रमै जाणि आधी निसा अधकार ॥ [१८]
इसा गज्ज घटाळ घटा अपार ।
त्रिण्हे लोक कौतिक्क देखत त्यार ॥ [१९]
दुवै फौज फव्वै गिर गज्ज डाणै ।
उभै जाणि आडावळा खेत आणै ॥ [२०]

॥ अथ घोड़ाँ रा वखाण ॥

अैराकी वडा खैंगरू गात अेहा ।
बणावै कवी कत्थ श्रीहत्थ वेहा ॥ [२१]
नळी जत्र मै जासु वाखाण नक्ख ।
उलट्टा कटोरा वणे चत्र अक्ख ॥ [२२]
उर ढाल सारीख चौडा अलल्ला ।
भिडज्जाँ बाहु जघ बे पक्ख भल्ला ॥ [२३]
पुडच्छी जियाँ तोछ पै कध पूरा ।
सँग्राम विखै हाम पूरन्त सूरा ॥ [२४]
जळ अजळं मुक्ख पीवत जव्व ।
उभै जोडि राजीव नासा उअव्व ॥ [२५]
सग्ळिग्राम चक्खैत अक्खै सरोस ।
गिणै कान वे सारिखा सीहगोसं ॥ [२६]

५८ [१७] सै ग्रावीटिग्रा (क), वीटिराजराजै (ग), वाटिया (छ), जोणि (घ), वीछो (ग)।
[१८] वैभीत (च), सैभीत (छ), क्रमी (क) ।
[२२] नखा (ग), ठलट्टा (क), अखा (ग) ।
[२३] भैला (छ) ।
[२५] जलाँ अजली (क) (ग) (ज), जलो अजली (छ) ।
[२६] मीहकोम ।

रज के धूम से वेष्टित हाथी ऐसे शोभित हो रहे थे मानो बड़े पर्वत पर रीछ विराजमान हो।

अथवा मानो भयानक आधी रात मे भयभीत अन्धकार भाग रहा हो।

गजघट और अन्य अपार घटे ऐसे बज रहे थे कि तीनो लोक उन का कौतुक देखने लगे।

दोनो फौजो के मदमत्त पर्वत तुल्य हाथी ऐसे फब रहे थे मानो दोनो सेनाये रणक्षेत्र मे आरावली पर्वत को ले आयी हो।

वाजि-वर्णन

विशाल-काय ऐराकी घोडे थे जिन्हे विधाता ने अपने श्री-हस्त से बनाया था। ऐसा कविजन वर्णन करते है।

उनके नख ऐसे थे मानो बन्दूक के यन्त्रो से युक्त उलटे कटोरे हो।

उन घोडो के विशाल वक्ष ढाल सरीखे थे और उनकी दोनो ओर की (आगे तथा पीछे की) बाहु और जँघाये सुन्दर थी।

उनके पूरे कन्धे और पृष्ठ भाग युद्ध के समय शूरो को सन्तुष्ट करने वाले और उनकी इच्छाओ को पूर्ण करने वाले थे।

वे जब जल की अजलि मुख से पीते थे तो उनकी दोनो नासिकाओ की जोडी अद्भुत लगती थी।

उनके सरोप नेत्र शालिग्राम से लगते थे और दोनो कान स्याहगोश के से गिने जा सकते थे।

५८ वीटिया = वेष्टित, अन्नड = पर्वत पर। डाणे = दान, मद, आडावला = आरावली पर्वत। खेंगरु = घोडे, वेहा = विधाता। वाखाण = बखाने जाते है। अलल्ला = घोडे, भिडज्जां = घोडे। पुडच्छी = पीठ। अजल = अजलि, राजीव = राजि, उग्रब्ब = अद्भुत। चक्खंत = आँखे, सीहगोस = पशु विशेष।

विडंगाँ वणी द्रूमची केस वाळी ।
भडाँ भूप राजी हुवै रूप भाळी ।। [२७]
जॅगम्म पसम्म मुखंमल्ल जेही ।
दिपै जाणि आरीस सारीस देही ।। [२८]
विणा रेह तेजाळ बका विडग ।
कबाण गुण डाणि झल्लै कुरग ।। [२९]
झिलै राग वागाँ मुठी वाउ झल्लै ।
चतुर्वाह रा रत्थ ज्यूँ पत्थ चल्लै ।। [३०]
धणी उप्परै लूण वारत धज्ज ।
गिरावै जिके आठुवाँ पाणि गज्ज ।। [३१]
अप्पा औद्रकै अप्प छाया अपार ।
धसै धोम साम्हा जिके फूल धार ।। [३२]
सुणी हाक साम्हाँ गजाँ दत सेलै ।
खगाँ झाट थाटाँ विचै डाणि खेलै ।। [३३]
करावै हुवाँ टूक पै घाव कत्ती ।
छिके अन्न पाडै गजाँ चाढि छत्ती ।। [३४]

।। अथ सूराँ पूराँ सिरदाराँ रा वखाण ।।

तुरी त्यारि कीया कसे जीण तग ।
वणावे सिरी पाखराँ सार वग ।। [३५]
सझे वस छत्तीस हिंदू समत्थ ।
करेवा महासूर भारत्थ कत्थ ।। [३६]

५८ [२७] वणे (ग), घुमता [द्रूमची] (च) ।
[२८] जास आरास (च) ।
[२९] रहे (क) ।
[३०] यह चरण (छ) मे लुप्त, [पत्थ] (ग) मे लुप्त ।
[३१] उवारति (ग), आख्वाँ (छ) ।
[३३] थाटै (क) ।
[३४] काकियाँ छिपाडै (ग) ।
[३५] डहे [कसे] (च) ।
[३६] समच्छ (ग), कच्छ (ग) ।

घोड़ो की केश वाली द्रुमची ऐसी बनी थी कि उसके रूप को देखकर राजा लोग तथा भट लोग प्रसन्न हो जाते थे।

उस की मखमल और ऊन ऐसी जगमगाती थी मानो दीपक प्रकाशित हो।

(रेखाये बने हुए) अनुपम तेजस्वी और बाँके घोड़े ऐसे लगते थे मानो धनुष की डोरी से पकड़े हुए हरिण हो।

उनकी रागवागों को मुट्ठी में पकड़े हुए वीर ऐसे लगते थे मानो श्रीकृष्ण के रथ मे अर्जुन हो।

घोडो के स्वामी अपने घोडो पर ध्वजाये लिये हुए चमक बार रहे थे और गर्जना करते हुए अपने घोडो के अग्र भाग पर डाल रहे थे।

घोड़े अपने आप ही अपनी ही छाया को देख कर विचलित हो रहे थे और फूल-धारा के समान धुएँ के सम्मुख युद्ध-भूमि में घँस रहे थे।

वे हाक सुन कर गजदन्तो, सेलो, खड्गो आदि के समूह के बीच घुस कर दाँव खेल रहे थे।

टुकड़े हो-हो कर अनेक घाव करवा रहे थे और मत्त से हो कर हाथियो की छाती पर चढ कर उसे चीर-फाड़ कर उन की अँतड़ियाँ निकाल रहे थे।

वीर-वर्णन

घोडों को तैयार किये हुए, जीन और तग कसे हुए, लोहे और राँगे के पाखर सजाये हुए, पुन. महाभारत की सी कथा करने के लिए छत्तीस वशो के हिन्दू क्षत्रिय सजे हुए थे।

५८ विडग = घोडा, भाली = देखकर। जँगम्म = जगमगाती है, पसम्म = ऊन, मुखमल्ल = मखमल। विग्गा = बिना, तेजाल = तेजस्वी झल्लै = पकडे। वाउ = वायु। आहुवाँ = घोडे का अग्रभाग। कत्ती = कितने ही, अनेक, छत्ती = वक्ष। जीण = जीन, तग = जीन कसने का पट्टा, पाखरां = झूल, सार = लोहा, वग = राँगा। कन्न = क्या।

ध्रुवाँ धारणा चित्त अैसा सधीर ।
वडाळा बहै व्रिद्द वीराधिवीर ।। [३७]
पडै अग्गि माँ उड्डि जेहा पतग ।
अाफाळै अणी उप्परा धारि अग ।। [३८]
जाते काळ नूँ चाळ सूँ झाळि जुट्टै ।
तरूवार ज्याँ तेज रा ताप तुट्टै ।। [३९]
मरेवा करै कोड भारत्थि मन्न ।
त्रिणे मेल्हिया प्रज्जळै झाळि तन्न ।। [४०]
पडताँ दियै अठभ थभा प्रचड ।
खळाँ मारि खगे करै खड खड ।। [४१]
मरता न धारै महाजुद्ध माया ।
करै काच सीसी जिसी टूक काया ।। [४२]
सदाई लगै खाग नै त्याग सूरा ।
पखै जे प्रिथीनाथ भूपाळ पूरा ।। [४३]
पर त्री न भेटै गऊ विप्र पाळै ।
चलै गत्ति वेदो खित्री ध्रम्म चाळै ।। [४४]
इन्द्री पच जीपै महा सूर अेहा ।
जगज्जेठ जोधा हणूमान जेहा ।। [४५]
न भाखै अली जीह नाकार नाणै ।
जुडेवा खित्री ध्रम्म आचार जाणै ।। [४६]

५८ [३७] ध्रुए (क), ध्रुवा (ग), ध्रू (छ), धारणी (ग) ।
[३८] जेही [जेठा] (च), आगडे (छ), आफलै (छ) ।
[३९] सझालि (क), ताव (क), तारापि (ग) ।
[४०] (क) (ग) (छ) मे लुप्त, प्राजलै (च) ।
[४१] (क) (च) मे लुप्त ।
[४२] जिही (क) (च) (छ) ।
[४४] ध्रम [विप्र] (क), वलै (छ) ।
[४५] पीव [पच] (च) ।

उन को ध्रुव धारणा थी और उन के चित्त मे अति धैर्य था। वे वीराधि वीरो के बडे विरुद वहन करते थे।

वे अग्नि मे पतग के समान सेना के ऊपर गिर पडते थे और अगो मे जोश धारण किये हुए थे।

वे जाते हुए काल के सम्मुख चल कर उसे पकड लेते थे और लडने को जुट जाते थे। तलवारे उन के तेज के प्रताप से टूट जाती थी।

वे युद्ध मे मरने की कामना करते थे। वे अपने शरीर को प्रज्वलित अग्नि की ज्वालाओ मे डाल देते थे।

वे प्रचड आकाश को गिरने से रोके हुए थे। दुष्टो को खड्गो से मार कर खड-खड कर रहे थे।

महायुद्ध मे लड कर मरते हुए वे माया धारण नही करते थे और शरीर को काच की शीशी के समान टुकडे-टुकडे कर देते थे।

वे सदा खड्ग से प्यार करते थे और त्याग मे शूर थे। ऐसे अपूर्व वीर पृथ्वीनाथ भूपाल के पक्ष मे थे।

वे पर-स्त्री-गमन नही करते थे। गो-विप्रो के पालक थे। वेद-मार्ग पर चलते थे और क्षात्र-धर्म मानते थे।

वे ऐसे महाशूर थे कि पाँचो इन्द्रियो को भी जीत लेते थे। वे हनुमान जैसे ससार के बडे योद्धाओ मे थे।

वे असत्य जीभ पर भी नही लाते थे और 'न' करना तो जानते ही नही थे। क्षत्रिय-धर्म का आचरण करना अर्थात् भिडना ही जानते थे।

५८ आफालै = आवेश मे आते। जुट्टै = भिडते। कोड = कामना, मेल्हिया = डाले, प्रज्जलै = प्रज्वलित अग्नि। पखै = पक्ष मे। पर त्री = परस्त्री। जीपै = जीतते है, जगज्जेठ = ससार मे बडे। नाणै = नही लाते।

समत्था इसा ऊँडळा आभ साहै ।
गजाँ दंत तोडै रिमाँ थाट गाहै ।। [४७]
पचारे ग्रहे वाघ रैणा पछाडै ।
भिडताँ गजाँ भीम जेही भमाड़ै ।। [४८]
न भागै जिके जुद्ध भागाँ न मारै ।
सरीराँ हुवाँ खड पिंडाण सारै ।। [४९]

॥ अथ मुगलाँ रा वखाण ॥

वळट्ठ दुग्रट्ठ हठाळ बंगाळ ।
चकत्था इसा चालिया काळ चाळ ।। [५०]
भयाणक चीवा जिके रोम भूरा ।
पखे पार बीवा हिलै थट्ट पूरा ।। [५१]
प्रळ वा मुखी रुक्ख चक्खी परक्खी ।
भुजाँ जम्म जेहा वळी सव्व भक्खी ।। [५२]
मरोडै गजाँ कध तोड़ै मरट्ट ।
रहच्चै जिसा सिघ मुक्की रवट्ट ।। [५३]
कसीसै गुणं त्रीस टकी कवाण ।
वळी भीम वत्थं कळी पत्थ वाणं ।। [५४]
छरा दुच्छरा मेच्छ ले मद्द छक्क ।
हजाराँ मुहाँ बाधि ह्वै वीर हक्क ।। [५५]
गिरं कध अधा ह्रिदै अग्गियाण ।
मरै मारि जाणै जिके अब्भिमाण ।। [५६]

५८ [४८] जेहा (ग) ।
[४९] भावे (च), भाजै (छ) ।
[५०] दुचट्ठा (ग) ।
[५१] जका (क), लका (छ) ।
[५२] मुख मुख चख (च), मुखी मुख (छ) ।
[५३] त्रोडै (च), रहच्चो (च) ।
[५४] कोमीस (ग) ।
[५५] मुखं वाघ हुवै (ग), मुहे वाघ ह्वै (च) ।
[५६] गिड अदा (च), रिदै (क) (ग), रधै (च), जिकू (क) ।

ऐसे आकाश को उलट देने वाले गहरे समर्थ वीर शोभित थे जो गज-दन्तो को तोड देते थे और शत्रु-समूह का मर्दन कर रहे थे।

उत्तेजित होने पर घोडो की वाग पकड कर राजाओ को पछाड देते थे तथा भिडते हुए हाथियो को भीम के समान घुमा देते थे।

वे स्वयं भागते नही थे और युद्ध से भागते हुओ को मारते नही थे। उनके समग्र शरीर खड-खड हो रहे थे।

मुगल-वर्णन

वलिष्ठ, दुष्ट और हठीले वंगाल जाति के चगताई यवन ऐसे चले मानो काल चला हो।

वे यवन भयानक और चित्र-विचित्र भूरे वालो वाले थे और उनके पक्ष के पूरे-के-पूरे समूह हिल रहे थे।

उनके मुख लम्वे थे और नेत्र देखते ही खा जाने वाले थे। भुजाएँ यम की सी थी और वे सर्वभक्षी थे।

वे यवन मत्त गजो को मरोड़ देने वाले और उनके कन्धे तोड़ देने वाले थे। सिहो को वे मुक्के से मार डालते थे।

वे तीस टकार वाले धनुप की डोरी को कसते थे और वाण चलाने मे कलियुग के अर्जुन और भुजवल मे भीम थे।

वे मदमत्त म्लेच्छ एक-धारी और दुधारी तलवारे लिये हुए थे और हजारो मुखो से वीर हाक कर रहे थे।

उनके कन्धे और हृदय अज्ञान और अधकार से आच्छन्न होकर ऐसे गिर रहे थे मानो विजित होकर अभिमान मर रहा हो।

५८ ऊँडला = गहरे, रिमाँ = शत्रु। पचारे = उत्तेजित होने पर, भमाडै = घुमाते है। पिडाएण = शरीर के अग। वलट्ठ = वलिष्ठ, दुअट्ठ = दुष्ट, वँगाल = यवन विशेप, चीवा = चित्र-विचित्र, वीवा = यवन। चक्खी = चक्षु वाले, परक्खी = भक्षक। रहच्चै = मारते। गुण = प्रत्यचा।

उँधे पाघड़े काळ रूपी असल्ली ।
बोले पारसी अेरसी गल्ल बल्ली ॥ [५७]
करै पच निव्वाज वाचै कुराण ।
कुळा ध्रम्म रत्ता कसता कबाण । [५८]
खुराकाँ त्रबाकाँ तग्त माल खावै ।
भली चीज प्रिथी जिकी मन भावै ॥ [५९]
जरी बाफ नीलक जामा जुडावै ।
वपे अन अंनेक धाराँ बणावै ॥ [६०]
प्रिथी रा लियै भोग अैसा प्रचड ।
खगाँ मारि डडे जिके नव्व खड ॥ [६१]
हजारी सदी पच सद्दी वि सद्दी ।
जगज्जेठ जोधा मिळे नामजद्दी । [६२]
पर भोम धुसे जिके आप प्राण ।
वडा जुद्ध रा वध जाणै विनाण ॥ [६३]
हणै मारि पाडै पँखी वोम हूँता ।
साँहे चाळि सूँ जागवै काळ सूता ॥ [६४]
जळै आपरै रोस अैसा जुअन ।
त्रिणा मात्र जाणै धणी कामि तन ॥ [६५]
सबद्दाँ जिके वेध धानख साधी ।
बळट्ठ हणै बगडी बाळ बाँधी ॥ [६६]

५८ [५८] कुरा (छ), कसीसै (च), कसती (छ) ।
[५९] तबाक (ग), जिक्यू (च) ।
[६०] जरब्बाफ (क) (छ) ।
[६१] नत्र (च) ।
[६२] से [६५] तक (ग) प्रति मे नही है पर हाशिये पर बाद मे लिखा हुआ पाठ है जिसके पाठातर यहाँ [ ] मे दिये गये है ।
[६२] दसपच सद्दी (च), [त्रिसद्दी (ग)] ।
[६३] परब्भूम (क), जोधरी (क) ।
[६४] पीडै (क), [वाणपाडै (ग)], साही (क) ।
[६६] जकूँ (छ), खानख (ग), कब्वडी [बगडी] (क) ।

वे उलटी पगडियाँ बाँधे हुए थे और असली कालरूप थे। वे गलबल करते हुए-से पारसी बोल रहे थे।

वे पाँच नमाज और कुरान पढते थे। धनुष खीचते हुए कुल-धर्म मे रत रहा करते थे।

पृथ्वी मे जो भी मनभायी अच्छी चीज मिलती उसी को वे भोजन-भट्टो की तरह अपनी खुराक बनाते थे।

वे शरीर पर जरी, बाफ, नीलक आदि के जामे पहनते थे जिनमे अनेक धानी रग की धारियाँ होती थी।

पृथ्वी भर के भोग उनके पास थे और वे ऐसे प्रचण्ड थे कि उन्होने नवो खण्डो को तलवार की मार से दण्डित कर दिया था।

वे नामधारी ससार के बडे योद्धा हजारी, सदी, पच सदी और दो सदी अधिकार पाये हुए थे।

वे अपने प्राणो को त्याग कर भी शत्रु की भूमि मे धँस जाते थे, और बडे-बड़े युद्धो के बधो और व्यूहो को जानते थे।

वे आकाश से भी पक्षियो को मार कर गिरा देते थे और जब सम्मुख चलते थे तो मानो सोया हुआ काल जग जाता था।

वे ऐसे जवान थे कि अपने ही जोश की ऊष्णता से जले जा रहे थे। स्वामी के कार्यार्थ शरीर त्यागना मात्र जानते थे।

वे शब्द-वेधी धनुप की साधना जानते थे, और वे बलिष्ठ वीर बाल से बँधी वॅगडी का भी निशाना मार सकते थे।

५८ पाघडै=पगडियाँ, गल्ल-बल्ली=गलगल ध्वनि मे बातचीत। रत्ता=अनुरक्त। ग्रवाका=भोजन-भट्ट, तात=ऊष्ण। जरी, बाफ, नीलक=वस्त्र विशेप, वपे=शरीर, अन=धान। डडे=दडित करते है। नामजद्दी=नामधारी। विनाण=व्यूह विधान। साँहे=सम्मुख। जुअन=युवा। वगडी=चूडी, छल्ला।

कसे हाथळाँ टोप मोजा झगल्ल ।
जमद्दाढ वामै जिकै खग्ग ढल्ल ॥ [६७]
गुपत्ती कती संगि गद्दा गुरज्ज ।
कसै आवध त्रीस छै जुज्झ कज्ज ॥ [६८]
भुथाण जुवाण कवाण सभल्ल ।
मिळै मीरजादा इसा जुज्झ मल्ल ॥ [६९]
विन्हे फौज फौजाँ धणी चत्रवाह ।
सझै सार आवद्ध लीधाँ सनाह ॥ [७०]
विन्हे साह राजा विन्हे नेत वांधै ।
वणी फौज देखे घणी सोह वाधै ॥ [७१]
जैं जै कार जीहा हरे राम जप्पै ।
असव्वार हूवा मुछाँ पाणि अप्पे ॥ [७२]
दियाँ हाथ दाढी दिढ गाढ दक्खै ।
इलल्ला इलल्ला इलल्लाह अक्खै ॥ [७३]
उजेणी महासूर है थाट आणे ।
जुडेवा चढे देव दाणव्व जाणे ॥ [७४]
चकत्थाँ कमधाँ रचे वीर चाळा ।
वणे जाणि भारत्थ पारत्थ वाळा ॥ [७५] ॥५८॥

दूहा—कैरव जिम आया कमँध पाँडव जिम पतिसाह ।
याँ हरि नाम उचारियौ वाँ रहिमान अलाह ॥५९॥
अकवर हर जुजिठळ अजन कमँध दुजोण करन ।
औरगसाह मुराद वे राजा जसौ रतन ॥६०॥

५८ [६८] छत्रिमे (क), भुझ छत्रिस (ग), कवसे छत्रिसे (छ) ।
[६९] कवाण जुवाण (ग) (छ) ।
[७१] साहजाद (क) ।
[७२] जीजीकार (ग), हरी (ग) (छ) ।
[७३] दाढा चाढा गज्ज (क), चढे गढ (ग) (छ), अलाह अलाह अलाह (ग), इललाह इललाह (च)
[७४] उजेणी (क), भारच्छ पारच्छ (क) ।
५९ पीडव (क), राम (क) (छ), उवा (क) (ग) (छ) ।
६० जुधिठल (क), युजिष्टल (ग), दुरजोध (ग), दुजोधण (छ), उवै (ग), रिधि (छ) ।

वे दस्ताने, टोप, मोजे और अस्थि-कवच कसे हुए थे और चलाने के लिए जमदाढ, खड्ग तथा ढाल लिए हुए थे।

गुप्नी, कर्तरी, साँग, गदा, गुरज आदि छत्तीस आयुधो को वे युद्धार्थ कसे हुए थे।

तरकस, कवाण तथा भालो वाले ऐसे युद्धमल्ल जवान मीरजादे भिड गये।

दोनो फौजो के चतुर स्वामी तलवारो और आयुधो को लेकर सन्नाह से सज्जित हुए।

दोनो ओर शाहजादो के और राजा के दोनो झडे वँधे हुए थे। सज्जित चतुरगिणी सेनाये वहुत अधिक शोभित दिखायी पड रही थी।

सवार अपनी मूँछो पर हाथ रख कर जीभ से जय-जय-कार वोल रहे थे।

दाढी पर दृढता से हाथ रखे दिखायी देने वाले वे वीर इलल्ला इलल्लाह वोल रहे थे।

उज्जैन मे महाशूरो और घोडो के समूह ऐसे आये मानो देव दानव युद्धार्थ चढे हो।

मुगलो और राठौडो ने वीर चर्चा (युद्ध) रची मानो अर्जुन वाला महाभारत ही हो ॥५८॥

कौरवो के समान कमधज आये और पाडवो के समान शाहजादे। इन्होने 'हरि' नाम का उच्चारण किया और उन्होने 'रहमान' और 'अल्लाह' का ॥५९॥

अकवर के वशज—औरगजेव और मुराद—युधिष्ठिर और अर्जुन जैसे थे तो कमधज—जसवन्तसिह और रतनसिह—दुर्योधन तथा कर्ण जैसे ॥६०॥

६० झगल्ल = अस्थि-कवच, वामैं = चलाते। त्रीस छँ = छत्तीस। चत्रवाह = चतुरगिणी। नेत = झडा, सोह = शोभा। दक्खैं = दिखते हैं, अक्खैं = कहते है। है थाट = हय-सेना, जुडेवा = भिडने।

कवित्त—हिंदुवाण तुरकाण करण घमसाण कडक्खै । [१]
सझि कबाण गुण बाण दळाँ प्रारंभ वळ दक्खै । [२]
भड भिडज्ज गज धज्ज घडा चतुरग कसस्सै । [३]
सिधुव सद्द रवद्द नद्द नीसाण निहस्सै । [४]
चत्रवाह साह दोय राह चढि सझि फौजां दोवै समथ । [५]
विचि झड थड मडे वडा करिवा भारथ अेम कथ । [६] ।।६१।।
साख साख मिळि भाख लाख लाखीक लसक्कर । [१]
च्यारि चक्क नव खण्ड हिलै फौजां गज डबर ।। [२]
कसमस्सै कौरम्म सेस नागेन्द्र सळस्सळि । [३]
सात समँद गिरि आठ ताम धर मेर टळट्टळि ।। [४]
करि कोप दळाँ प्रारँभ कहर धेधिगर आगै धरै । [५]
मॉडियौ मुगल्लै मारुवै रिण औरँग जसराज रै ।। [६] ।।६२।।

वचनिका—इणि भाँति रा घोडा असवार आगि व्रजागि माहै ऊडि पडै । [१] सिर पडियै लडै । [२] हाथियाँ रै दाँत चढै । [३] हिंदू मुसळमाण । [४] नर समद खुरसाण । [५] च्यारि चक्क नव खड प्रिथी रा जगजेठ जोधार जमदूत राजेन्द्र जोगेन्द्र रूप करि उजेणि खेत नर हैवर वेधिगर चौदत हुवा । [६] चतुरग फौजाँ बौंहरग वानाँ किणि भाँति सूँ विराजमान दीसै । [७] जाणे अढार भार वनसपति झूलि फूलि रही । [८] दीठाँ ही ज वनि आवै । पिणि न जाय कही । [६] हो भाई भाई अेकणि रित रा कासूँ । [१०] अेकणि दिहाडै छह रित नवरस निजर आवै । [११] कहि दिखावै किणि

६१ [१] करण (ग) ।
[२] घवाण (च), दक्खी (ग) (छ) ।
[३] भीड युद्ध रोचल कसस्से (ग) ।
[६] कच्छ (ग) ।

६२ [२] हल्ल (ग), हिलि (छ) ।
[५] करिया दला (च), धधेकर (ग) ।

६३ [१] ऊमडि (ग) । [३] हाथी रै (ग) (च) (छ), (च) मे [२] [३] का क्रम विपरीत । [६] धेवकार (ग) । [८] झिलि (ग) । [१०] री (ग) । [११] दिन मैं (ग), दिन (च), रति (क), नदरि (क), नदिर (छ) ।

हिन्दू और तुर्क घमासान युद्ध करने के लिए दांत पीसने लगे। कवाण, प्रत्यचा और वाणो से सज कर सेना के बल-प्रदर्शन का प्रारम्भ करने लगे। भटो, घोड़ो, गजो और ध्वजो की चतुरगिणी सेना कसमसाने लगी। यवनो के नगाडो से सैंधवी रागिनी मे शब्द और नाद होने लगा। दोनो धर्मो के चतुर राजा और शाहजादे–दोनो ही—समर्थ चतुरगिणी सेनाएँ सजाने लगे। उनके बीच मे झण्डो के बड़े समूह शोभित हुए। ये सब महाभारत की सी कथा करना चाहते थे ॥६१॥

लाखो अमूल्य घोडो वाले भिन्न-भिन्न शाखा के वीरो की सेना एकत्र भासित हुई। चारो दिशाएँ और नवो खण्ड फौजो और गजो की घटा से काँपने लगे। कूर्म कसमसाने लगा। नागराज शेष थरथराने लगा। सातो समुद्र और आठ पर्वत-कुल तथा मेरु सभी धरा पर टूट कर गिरने लगे। सेनाओ ने क्रुद्ध होकर कहर आरम्भ कर दिया जिसमे हाथियो की सेनाओ को आगे रखा। इस प्रकार मुगल औरंगजेब और मारवाड के जसवन्तसिह ने युद्ध छेडा ॥६२॥

इस प्रकार के घुडसवार वज्राग्नि और अग्नि मे उड-उड कर गिरते है। शिर गिरने पर्यन्त लडते है। हाथियो के दाँतो पर चढ़ जाते है। नर-समुद्र खुरासान तक के हिन्दू और मुसलमान, चारो दिशाओ और नवो खण्डो के पृथ्वी भर के महान योद्धा लोग यमदूतो के समान राजेन्द्र और योगीन्द्र रूप धारण करके आये है और उज्जैन क्षेत्र मे नरो, गजो और अश्वो का रूप धारण कर भिड गये है। चतुरगिणी फौजे अनेक रग के बानो से सजी कैसी विराजमान दीखती है। मानो अष्टादश वन की वनस्पतियाँ वसन्त ऋतु पाकर फूल गयी हो। केवल देखने से ही बात समझ मे आ सकती है। कही नही जा सकती। अरे भाई एक ऋतु ही कैसे है। एक ही दिन मे नव रस और षड्

६१. कडवक्खँ=दांत पीसते हैं। मद्द=शब्द। करिवा=करने को।

६२ भाख=कहते है, लाखीक=लक्ष मूल्यधारी, लसक्कर=सैनिक। टल्टट्टलि=टूटना। कहर=महाकोप, घेंघिगर=हाथी।

६३ व्रजागि=वज्राग्नि। चौदत=चार दाँतो वाले। दीठाँ=देखने। पिणि=पर। दिहाडै=दिन।

भाँति। [१२] आरावाँ आतस झाळ। [१३] ऊन्हाळा प्रळै काळ। [१४] सर कायर सूका। [१५] सूर धीर निवाणे जळ ढूका। [१६] कहि दिखाई उगति। [१७] आ तो ग्रीखम रित। [१८] मद धाराँ वरसताँ थकाँ गज डवर नीसाण गाजै। [१९] वीजळी आँकुस विराजै। [२०] ग्रिध चात्रिग वीर घट दादुर बोलै। [२१] मुगल लाल ममोळा सा दिखावै। [२२] वरिखा रित वरणी। [२३] सरद रित कहणी। [२४] रिण समद माहै सूर कमळ विकसि विराजमान हुवा। [२५] चदा जेही चदवदनी अपछरा सोळह कळा सुधा नेह सपूरण उदित हुई। [२६] कैसी। [२७] आसोज की पूनिम सरद रित जैसी। [२८] ऊजळी फौजाँ ऊपराँ ऊजळाँ भालाँ रा डम्बर भळळाट करि जगा जोति जागी। [२९] जाणै वरफ रा टूक हेमाचळ पहाड माथै विराजमान हुवा। [३०] हेमत रित लागी। [३१] सिसिर रित जागी। [३२] रूक रहिळ वागी। [३३] कायराँ नूँ ठड लागी। [३४] हाथ पग धूजै धडधड। [३५] उर दत हाड गोडा खडखड। [३६] इणि भाँति सूँ वचनिका कही। [३७] छ रित सही। [३८] नव रस कहि दिखाइ सरस। [३९] वीरे वीर रस किया। [४०] रौद्रे रौद्र रस किया। [४१] अपछरा सिगार रस किया। [४२] नारदे हास रस किया। [४३] कायरे भैरस वीभछ रस किया। [४४] सूरे सान्त रस अद्भुत रस किया। [४५] दूणियाँ करुणा रस किया। [४६] वैकुठ सूँ लिखमी सहित आप विसन गुरड चढि आया। [४७] कैलास सूँ सिघवाहिणी चडी सहित ईसर

६३ [१२] केरण (ग)। [१४] ऊन्हाली (छ)। [१७] तोइ उकति (ग)। [१८] औतौ (च), यातौ (छ), रति (क)। [२०] वीजलीयाकस (च)। [२२] (क) मे [मा] लुप्त, लाल से (च), लासा (छ)। [२६] सुधा सनेह (क), सिगार सूधानिहस (च), [उदित] (ग) मे लुप्त, हुई छइ (ग)। (२८) जैसी आमोई (ग), री [की] (च)। [२९] (क) मे [ऊजळाँ] लुप्त, जगी ज्योति लागी (छ), जाकी (ग)। [३०] विराज हुवा (ग)। [३४] थढ (क)। [३५] घडड (क), घड (च), घडहड (ग)। [३७] इण विध तौ छह रित (च)। [३९] तौ करि दिखाड (च)। [४१] (छ) मे [४१-४६] लुप्त। [४४] भैरस किया (च)। [४५] सूरिजास्वात अदवुद रस (च)। [४७] विष्णु (क) (ग)।

ऋतु द्रष्टव्य है। कैसे ? सो कह कर बताते है। तोपो की अग्नि-ज्वालाएँ मानो प्रलय-काल की ग्रीष्म ऋतु है। कायर-रूपी सरोवर सूख गये है। गम्भीर धैर्यवान् शूर रूपी निम्न भूमियो मे ही जल (आब) एकत्र हो गया है। इस प्रकार उक्ति कह कर दिखा दी है। यह तो हुई ग्रीष्म ऋतु। मद-धारा बरसाते हुए गज समूह रूपी मेघ नगाडे रूपी गर्जन कर रहे है। अकुश रूपी बिजली विराजमान है। वीर घण्टे गीध, चातक और मेढको की आवाज है। मुगल लाल इन्द्रवधुओ जैसे दिखायी पडते है। यह वर्षा ऋतु का वर्णन किया गया है। अब शरद ऋतु का करना है। रण रूपी समुद्र मे शूर रूपी कमल विकसित होकर विराजमान हुए। चन्द्र जैसी चन्द्रवदनी अप्सराये सोलह कलाओ सहित और स्नेह से पूर्ण उदित हुई। कैसी ? शरद मे आश्विन की पूर्णिमा जैसी। फौजो के ऊपर उज्ज्वल भालो के समूह की चमचमाती उज्ज्वल ज्योति जगी। मानो बर्फ के टुकडे हिम के पहाड पर विराजमान हुए। हेमन्त ऋतु प्रारम्भ हुई। शिशिर ऋतु जागृत हुई। तलवार रूपी शीतल समीर बहने लगी। कायरो को ठड लगने लगी। उनके हाथ-पैर धडधड धूजने लगे। हृदय, दाँत, हड्डियाँ और पैर खडाखड काँपने लगे। इस प्रकार छह ऋतु की वचनिका कही, वह तो सही है। सरस नव रस भी कह दिखाते है। वीरभद्र ने वीर रस किया। रुद्र ने रौद्र रस किया। अप्सराओ ने शृङ्गार रस किया। नारद ने हास्य रस किया। कायरो ने भय रस और वीभत्स रस किये। सुरो ने शान्त और और अद्भुत रस किये। पीडितो ने करुणा रस किया। वैकुण्ठ से लक्ष्मी सहित स्वय विष्णु गरुड पर चढ कर आये। कैलाश से सिह-वाहिनी चण्डी सहित ईश्वर वृषभ पर चढ कर आये।

६३ आतम = अग्नि। उन्हाळा = ऊष्ण काल, ग्रीष्म। निवाणे = नीची भूमि, ढूका = पहुँचा। चात्रिग = चातक। ममोळा = वीर बहूटी। रुक = तलवार, रहिळ = शीतल वायु। गोडा = पैर। दूणियाँ = पीडितो ने।

त्रिखभ चढि आया। [४८] इन्द्रलोक सूँ तेत्तीस कोडि देवता सहित इन्द्राणी अपछराँ रैं झूलरैं इन्द्र ऐरापति चढि आया। [४९] नव नाथ चौरासी सिद्ध अनेक पखी पळचर ग्रिद्ध। [५०] चौसठि जोगणी बावन वीर वैताळणि गध्रप जिक्ख किन्नर सहित रिख नारद आया। [५१] वीरे डाक वाया। [५२] विमाणे व्योम छाया। [५३] साकणी डाकणी मिळि मगळ गाया। [५४] नौबति नीसाण रिणतूर वागा। [५५] देवासुर देखवा लागा। [५६] ॥६३॥

दूहौ — सझि आरावाँ समसमा समा समा सझि सूर।
समा समा दळ सालुळै अहै अँवाळा तूर ॥६४॥

दूहा वडा — वह गोळा सर वाण आम्हो साम्हाँ ऊछळै।
ऊडन्ते ऊडाडियौ आराबे असमाण ॥६५॥
नर सुर दानव नाग थर हर सुर भुवणे थिया।
विढताँ लागौ वरसवा गोळा सर गैणाग ॥६६॥
जागि प्रळै रिण जग ऊडै सर साम्हाँ अगनि।
गडा सवाया गणणिया नाखत जाणि निहंग ॥६७॥
चमराळा हय चूर वेगाळा तेजी वडा।
पडताँ धर भेळा पडै सर गोळा नर सूर ॥६८॥
खु दालिम करि खोध वसुधा उप्परि वाजिया।
लागि गडा सिर लोटिया जाणि कबूतर जोध ॥६९॥

६३ [४९] इन्द्राणी अपछरा साथे श्री इन्द्र (ग)। [५१] वीर जाख किन्नरी गुण गधव सहित (क) (ग)। [५२] वजाया (क) (ग) (छ)। [५६] देखवै (छ)।
६४ सालुली (क) (छ), अवालू (क) (ग) (छ)।
६५ सामुव (च), ऊडेते (च)।
६६ मानव [दानव] (क) (ग) (छ), सुर तीने भुवन (क), सुरभूपण किया (ग), सुर-त्रीणे (छ)।
६७ गोला [साम्हा] (ग), नागिअमाल (च)।
६८ वेगागल (च)।
६९ गलै [गडा] (छ)।

इन्द्र-लोक से तेतीस कोटि देवताओं सहित और इन्द्राणी तथा अप्सराओं की मडली सहित इन्द्र ऐरावत पर चढ कर आये। नव नाथ, चौरासी सिद्ध, अनेक मांसाहारी गिद्धादि पक्षी, चौसठ योगिनियाँ, बावन वीर, यक्ष, किन्नर गण, गन्धर्व आदि सहित ऋषि नारद आये। वीर हाक मारने लगे। विमानों मे और आकाश मे छा गये। शाकिनियो और डाकिनियो ने मिल कर मगल गायन किया। नौबत, निशान, रणतूर बजे। देवासुर देखने लगे ॥६३॥

शूर वीर बन्दूको से आमने-सामने सम्यक्तया सजे और ऋबाल तथा तुरही बजाते हुए दल आमने-सामने भिड़ गये ॥६४॥

गोले, शर और बाण चलने और आमने-सामने उछलने लगे। उडती हुई गोलियो ने आकाश को उडा दिया। ॥६५॥

युद्ध प्रारम्भ होने पर आकाश गोले और बाण बरसाने लगा। तब नर, सुर, दानव और नाग तीनो लोको मे थरथराने लगे ॥६६॥

रणभूमि मे प्रलयाग्नि जल उठी और अग्नि बाण आमने-सामने उडने लगे। आकाश मे नक्षत्र-माला से सवा गुने गोले गनगनाने लगे ॥६७॥

वेगवान् चमरो वाले यवन चूर-चूर होकर अत्यन्त तेजी से शरो, गोलो और नर-शूरो के साथ ही पृथ्वी पर गिर रहे थे ॥६८॥

यवन क्रुद्ध होकर पृथ्वी पर युद्धरत थे, जिससे गोले लगे हुए जोधा राठोडो के शिर कबूतर की तरह भूमि पर लोटने लगे थे ॥६९॥

६३ झूलरे=समूह। डाक वाया=हुकार की ध्वनि की। वागा=बजे।
६४ समनमा=सम्यक् तया, गमा समा=आमने-सामने, ऋहै=ध्वनि की।
६५ ऊडाडियौ=उडा दिया।
६६ पुर=तीन, थिया=हुए, विढता=लडते समय, गैणाग=गगनागन।
६७ सवाया=सवा गुने, निहग=आकाश।
६८ चमराळा=चमर वाले यवन, वेगाळा=वेग वाले, भेळा=एकत्र।
६९ खु दालिम=यवन, खोध=क्रोध, गडा=गोले।

लडै पडै अणपार अडै चडै साम्हा अणी ।
कमँधे काबलिये कियौ आहिव घोर अँधार ॥७०॥
झीक अणी खग झाट सिर उर माथै सूरिमा ।
वहती की'दळ वाहतां वैकुंठ वाळी वाट ॥७१॥
नरवर सूर निगेम भारथ मझि रीती भरी ।
आवै जावै अपछरा जगि अरहट घडि जेम ॥७२॥
औरँग जसौ अगाहि जूटा सूरिज राहु जिम ।
गहण अँधारौ गै गहण मेछ कियौ रिण माहि ॥७३॥

वचनिका — इणि भाँति सूं तीन पौहर दळ जूटा । [१] खैग नर हाथी खूटा । [२] चौथा पौहर लागा । [३] जूझाऊ वागा । [४] औरँगसाह पातसाह रा तपतेज अपर बळ । [५] दइव रा अवतार [६] जिण आगै जमराणौ विमुहा खडै । [७] तिण सूं तीन पौहर हाथूके महाराजा जसराज ही लडै । [८] तिणि वेळा उजेणि वीर खेत रा झूझार राव राठौड जोधा रिणमल वोलिया । [९] ठाकुरौ सतरज रौ ख्याल मडियौ । [१०] राजा राखौ । [११] राजा राखियै बाजी रहै । [१२] आपै तौ अणी वाँटि हरवल किया तठै बधेज कियौ ही ज छै । [१४] साहजहाँ जीवतौ ही मूवौ । [१५] औरँगसाह पातिसाह हूवौ । [१६] सामि सूं सग्राम करणा । [१७] मारणा नै मरणा । [१८] ओछी वाढौ । [१९] जसराज काढौ । [२०] वागाँ झालि जसराज वळिया । [२१] भारथ रा भर भार रतनागिर भळिया । [२२] ॥७४॥

७० अपार (क), कावलियौ (ग), कमधा कावलिया (छ) ।
७१ झोक (च), माझलि [माथै] (च), कादल (क), वाद (क) ।
७२ जाइ (च) ।
७३ म्लेच्छ (क) (ग) (च) (छ), दियौ (छ) ।
७४ [१] पहर (छ) । [६] जोरावर दइव (ग) । [७] जिण [जम] (छ), राणहै (च) । [९] रावत (क), राठौड झूझार (छ) । (१०) ज ठाकुरे (च), ठाकुरे (क) (ग) (छ), माड्यौ (क) । [१४] बाचे (ग) । [१५] साहजहान (छ) । [१७] करणौ (च) । [१८] मारणौ नै मरणौ (च) । [१९] छोटी (ग) । [२२] [भार] (छ) मे लुप्त, मिलिया (क), भेलिया (ग) ।

जब कमधज और यवन ने घोर अन्धकार वाला युद्ध किया तो अपार सैनिक लडे, मर कर गिर पडे, युद्ध मे अड़े और विपरीत सेना पर चढाई करने लगे ॥७०॥

खड्ग की नोक के प्रहार और घाव जब शूरो के उर, शिर और ललाट पर पडते थे तो मानो वे सेनाओ को वैकुण्ठ वाले मार्ग पर हाँक देते थे ॥७१॥

अप्सराये अरहट की घडी की तरह इस पृथ्वी पर रणभूमि मे रीती आती थी और निष्पाप नरवरो से भर कर चली जाती थी ॥७२॥

औरगजेब और जसवन्तसिह सूर्य और राहु के समान अगाध युद्ध मे भिड गये और हाथियो को पकड लेने वाले उस म्लेच्छ ने युद्ध भूमि मे ग्रहण का सा अँधेरा कर दिया ॥७३॥

इस प्रकार तीन पहर तक दल भिडते रहे। खड्ग, नर और हाथी समाप्त हो गये। चौथा प्रहर लगा। जुझाऊ बाजे बजे। औरगजेब बादशाह का तप, तेज और बल अपार है। वह देव का अवतार है। यमराज भी जिसके सम्मुख पीठ मोड लेता है। उससे तीन प्रहर पर्यन्त युद्ध करने का बल महाराज जसवतसिह की ही भुजाओ मे था। उस समय (चौथे प्रहर) वीर क्षेत्र उज्जैन के जुझार राव राठौड जोधा रिणमल के वशज बोले, "ठाकुरो! शतरंज का खेल चल रहा है। राजा की रक्षा करो। राजा की रक्षा से ही बाजी रहेगी। हमने तो सेना को विभक्त करके हरौल बना कर वहाँ व्यूह रचना कर रखी है। पर शाहजहाँ जीवित ही मृत के समान है। औरगजेब बादशाह हो ही गया समझो। अत अब युद्ध करना स्वामी से लडना है। मारना और मरना है। अत अब ओछापन स्वीकार करो। जसवंतसिह को निकालो।" तब घोडे की बाग पकड कर जसवतसिह चला गया और रतनसिह ने युद्ध का भार सँभाला ॥७४॥

७० अरणपार=अपार, कावलिये=कावुली मुगल।
७१ झीक=खड्ग, वाट=मार्ग।
७२ निगेम=निष्पाप, निश्छल।
७३ अगाहि=अगाध, गै गहण=हाथियो को पकडने वाला।
७४ जूझाऊ=युद्ध के वाजे। विमुहा=विमुख। हरवल=सेना का अग्रभाग, हरौल। ओछी=हीनता, वाढौ=स्वीकार करो। वलिया=चले गये। भलिया=प्राप्त किये।

दूहौ — कियौ उजेणी कमधजे धन जीवत म्रित धाडि ।
जुड़ि मुरडे वळियौ जसी रहे रतन मझि राडि ।।७५।।

वचनिका — तिणि वेळा नौबत नीसाण तोग झडा सामि ध्रम सोबा हिन्दुस्तान री सरम भुजे आई । [१] तिणि वेळा रा आइयी काळा पहाड सोभा वरणी न जाई । [२] महाभारथ रै विखै क्रन कहीजै । [३] किना लका प्रवि कु भेण कहीजै । [४] ऊजळा बारह आदीत मुख कमळ ऊगा । [५] मनोरथ पूगा । [६] म्रिति लाज रा मौड बाधा । [७] अवसाण लाधा । [८] ।।७६।।

कवित्त — करि प्रणाम रवि ताम ध्यान ग्यानह मन धारे । [१]
धसण धोम विचि धार वसण वैकु ठ विचारे ।। [२]
तजे मोह चढि सोह लोह वोहां जुध लिज्जण । [३]
ताणि मूँछ ऊससे जाणि पाडव्व अरज्जण ।। [४]
उलहसँ रोम पौरस्स अति ग्रहे पछाडण गैवराँ । [५]
रूठौ सरीर उप्परि रतन तूठौ सीस पळच्चराँ । [६]।।७७।।

दूहा वडा — मसतकि बाँधे मौड धारे भुज हिन्दू धरम ।
मेछ घडा दिसि मल्हपियौ रतनागिर राठौड ।।७८।।
जोधा रिणमल जान सीसोद्या हाडा सको ।
अजमेरा झाला अभँग राव राजा राजान ।।७९।।

७५ जिसौ (ग) ।
७६ [१] वार [वेला] (च), तोक (क), सोहा (ग) । [२] री (क) । [४] कै (ग), पति (क) (ग) (छ) (ज) । [५] आदीत ऊगा (क) ।
७७ [१] हियै हरि धारी (क) (छ), धारी (ख) (ग) (घ) ।
[२] विचारी (ख) (ग) (घ) ।
[४] मूछ (ग), अरजनह (च) ।
[५] पछाडे (च), गौवरा (क) ।
७८ घटा (ग) ।
७९ जाण (छ), सीसोदिया (ग) ।

वह कमधज धन्य है जिसने जीवित रहते हुए और मर कर भी उज्जैन में युद्ध किया। युद्ध में भिड़ कर जसवंतसिंह तो वापस लौट गया पर रतनसिंह वहीं युद्ध में ही रहा ॥७४॥

उस समय नौबत, नगाड़े, तोप, झंडे स्वामिभक्ति सूचक सूजा और भारत की लज्जा सभी रतन की भुजाओं पर आश्रित हो गये। अद्भुत बाने पहाड़ रतन की उस समय की शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। वह मानो महाभारत में कर्ण हो अथवा कहिए लंका पर्व का कुम्भकर्ण हो। उसका मुख-मण्डल ऐसा प्रकाशित हुआ मानो बारह सूर्य उदित हुए हों। उसके मनोरथ पूर्ण हुए। उसने मृत्यु को लज्जा का मुकुट बाँधा। उसे शुभ अवसर प्राप्त हुआ ॥७६॥

तब उसने सूर्य को प्रणाम करके, मन में ज्ञान और ध्यान को धारण करके बैकुण्ठ में बसने के विचार से युद्ध के कुएँ में प्रवेश किया। उसने मोह छोड़ दिया और युद्ध में अत्यधिक लोहा बजाने की उसे इच्छा उत्पन्न हुई। वह मूँछें तान कर उत्साहित हुआ मानो पाण्डु-पुत्र अर्जुन हो। उसके रोम शौर्य से अत्यन्त उल्लसित हो उठे और उसने छेड़ने के लिए गजराजों को पकड़ लिया। इस प्रकार जब रतन अपने शरीर पर रुष्ट हो गया है तो सांस-भरी जीव अब नृपों से सन्तुष्ट हो जावें (अर्थात् अब वह बहुत वीरों को मारेगा) ॥७७॥

मस्तक पर मुकुट बांध कर और भुजाओं पर हिन्दू धर्म को धारण करके राठौड़ रतनसिंह म्लेच्छ सेना की ओर झपटा ॥७८॥

सीसोदिया, हाड़ा, चौहान (अजमेरा), झाला आदि सभी अजेय राव राजा आदि इस जैसा विष्णुलोक के वासी बने ॥७९॥

७४. दुरडे=वाद्य; घाड़ि=युद्ध में।
७६. तोप=एक खास प्रकार का बाजा। ऊचि=उंचे में; हुमिर=हुम्मीर। बाधा=बांधा, लाभा=मिला।
७७ बय्हु=बैकुण्ठ। तुठै=तुष्ट हों अच्छरां=अप्सरायें सभी।
७८ मस्तिर=मस्तक।

बेली सहि बिरदैत जेठी गोवरधन जिसा ।
करनाजळ अणवर कन्है वड जानी वानैत ॥८०॥
बेटो जाँवळि बाप रासौ रैणायर तणौ ।
गज केहरि रिण गाजियौ तोडेवा खळ ताप ॥८१॥
अमरौ भूप अगाह वीठलियाँ जाँवळि वळे ।
वधिया साचौरा विढण मुहरि धणी रिण माहि ॥८२॥
खिति पुडि साहिबखान हणवंत जिम जैता हरी ।
उणि वेळा लागौ अरसि वस वधारण वान ॥८३॥
करण मरण पह काज राँण रमण रिण रूक रस ।
ब्रह्मँडि लागौ वैणउत जिम ईसर जसराज ॥८४॥
दुल्लह रयण दुभ्काल सूरा पूरा जान सहि ।
हैवै घड दुलहणि हुई धज तोरण गज ढाल ॥८५॥
छिळतै मछरि छडाळ वाहे तोरण वाँदतौ ।
गौ काळौ कुभाथळाँ काळ गजाँ सिर काळ ॥८६॥
अेकणि चोट अताग बूडो सूँ अवर बहसि ।
बेधै साबळ वाहतौ नर हैंवर धर नाग ॥८७॥
जूटा सह को जोध नर मारू जिम नाहराँ ।
वहताँ सिर वाहै वधे खग हाथळाँ सखोध ॥८८॥

८० बोली (क), बोल्या (ग), सोह वैरदैत (ग) ।
८१ जामति (क) (छ), जामिलि (ग), केसरि (च), खताप (क) ।
८२ जैमल (क) ।
८३ खुड (क), वध [वस] (छ) ।
८४ पौह (च), रामारहण (ग) ।
८५ रमण (क), खग [गज] (छ) ।
८६ छत्राल (ग) ।
८७. बूडी हूँ (क), बूडा हूँ (ग), छूडी हूँ (छ), कुंजर (च), धनाग (ग) ।
८८ जूटौ (क), ज्य [जिम] (क), ज्यूँ (ग), नाहरी (छ), वाधै वधै (छ) ।

वड़े विरुद वाले गोवर्धन जैसे उसके साथी और कर्ण जैसे अनन्य वीर बाणधारी उसके साथ वड़े वराती वने ॥८०॥

रतनसिह का पुत्र रायसिह भी अपने पिता के साथ हुआ और वह दुष्टो का ताप शमन करने के लिए इस तरह गर्जन करने लगा मानो हाथी के साथ युद्ध मे सिंह गर्जन कर रहा हो ॥८१॥

अगाध साँचौरा वीर अमरदास और वीठल साथ-साथ लडने के लिए स्वामी के सम्मुख युद्ध-भूमि में वढ़े ॥८२॥

जैतावत साहिव खाँ उस समय युद्ध-भूमि मे ऐसा लगा मानो वश का नाम वड़ा करने वाला हनुमान हो ॥८३॥

कवि जसराज वेणीदासोत प्रभु के लिए मर जाने को युद्ध मे तलवार का रसपान करने के लिए रमण करने लगा और शकर के समान वचन वोलता हुआ ब्रह्माण्ड मे जा लगा ॥८४॥

अजेय रतन दूल्हा वना और सारे शूर वीर वराती वने। घोड़ो की घटा दुलहिन वनी और गज-ढालो तथा ध्वजाओ का तोरण वना ॥८५॥

उत्साह से भरा हुआ, भाले से तोरण मारता हुआ काला रतन-सिह काले हाथियो के कुम्भस्थल पर काल के समान झपटा ॥८६॥

भाले की नोक से अम्वारी पर हमला कर के एक ही अथाह चोट मे वह नर, घोड़े और हाथी तीनो को भाले से वेध रहा था ॥८७॥

मारवाड़ के सभी योद्धा लोग भिड पडे मानो सिह भिड़ गये हों। वे सक्रोध जव अपने भुजदण्डो से तलवार चलाते थे तो (शत्रुओ के) शिर कट कर गिर पड़ते थे ॥८८॥

८०. वेली = साथी, अणवर = अनन्य।
८१. जाँवळि = साथ।
८२. ववियां = आगे वढे, मुहरि = सम्मुख।
८३. खिति = पृथ्वी।
८५. दुझाल = अजेय।
८६. छडाळ = भाला, वांदतो = मारता।
८७. अताग = अथाह, वूडी = नोक, साबळ = भाला।
८८. नाहरां = सिंह, सक्रोध = सक्रोध।

गावै जोगणि गीत ऊडै सर साम्हाँ अखत ।
वेद भणै नारद ब्रह्म पुंखै अछर प्रवीत ॥८९॥
घण वाजित घण घाव घमघम अछराँ घूघरा ।
वागा वीरा रस तणा नाराजियाँ निहाव ॥९०॥
ढालाँ सिरि धाराळ वागा वरियामाँ तणा ।
गळती निस गाजै गजर घण घाये घडियाळ ॥९१॥
वाजै इसै विनाणि खग ढालाँ सिर खाट खडि ।
रमै महा रिण रूक रस जोध डँडाहडि जाणि ॥९२॥
खहणि करे रिण खीज वाहै करि हाकाँ विहद ।
गडदाना गाजै गुरज वाजै भुरजाँ वीज ॥९३॥
[जगजेठी जमराँण बेजड हथ वापा हरौ ।
गह पुर तर लागै गयौ साराँ धार सुजाण ॥ (१)
रहचै मैंगळ रौद राखै जगनामौ रिधू ।
सूजौ सूरजमाल रौ स्रग पुहतौ सीसौद ॥ (२)
जुड़ भाँजण खळ जोर हाडा पँच पडव हुवा ।
मोहण अनै भुभारमल कानौ मुकन किसोर ॥ (३)
सामँत सूर सहोद मधकर का आखाड मल ।
जुड ऊपडै किसोर जुध जोध मिले चत्र जोध ॥ (४)

८९ रार गोला अखनि (च), सिरसा [साम्हाँ] (घ), अपछर (छ) ।
९० नारीजिया (ग), नाराजिहा (च) ।
९१ तणी (क), वरियामी तणा (च), [वागाँ वरियामाँ तणाँ] (छ) मे लुप्त, गणाता (छ) ।
९२ इसी (क), डडेहड (च) ।
९३ खोहर (क), करि (च), भुरजै (च) ।
(१-६) केवल (R) और (S) मे ।
(३) जोध (S) ।

योगिनियाँ मगल-गीत गा रही थी, शिर-रूपी अक्षत सम्मुख उड़ रहे थे, नारद और ब्रह्मदेव पाठ कर रहे थे। पवित्र अप्सराएँ वरो का स्वागत कर रही थी ॥८६॥

अनेक वाजे घनघन कर रहे थे। अप्सराएँ घुँघरू घमका रही थी। नाराचो की चोट की आवाज वीर रस के बाजे-जैसी हो रही थी ॥६०॥

श्रेष्ठ वीरो के शिरो और ढालो पर जब धार वाले शस्त्र लगते थे तो उनसे ऐसी आवाज होती थी मानो रात्रि बीतते समय घडियाल पर गजर के डके लग रहे हो ॥६१॥

शीशो और ढालो पर खड्गे ऐसे खटाखट बज रही थी मानो योद्धा लोग महायुद्ध मे तलवारो से 'डाँडिया रास' खेल रहे हो ॥६२॥

वीर सक्रोध युद्ध कर रहे थे और हाक मार कर शस्त्र चला रहे थे। बुरजो पर ओले वाले बादलो की गर्जना हो रही थी और बिजलियाँ कडक रही थी ॥६३॥

[यमराज के बड़े भाई जैसा बापा का वशज शाहपुरा का (गुहिलोत) सुजानसिंह हाथ मे तलवार ले कर तलवारो की धारा मे तैरने लग गया। (१)

वह सूरजमल का पुत्र सीसोदिया सूजा (सुजानसिंह) यवनो की गज सेना को मार कर ससार मे नाम अमर करके स्वर्ग पहुँचा।(२)

पाँचो पाण्डवो के समान पाँच हाडा वीर—मोहन, झूझारमल, काना, मुकुन्द और किशोर—भिड़ कर दुष्ट योद्धाओ के भजक बने। (३)

इन शूर सामन्तो मे सबसे छोटा और मधकर का पुत्र किशोर अखाडे का मल्ल था। वह चार योद्धाओ से युद्ध मे भिड पडा। (४)

८६. अखत=अक्षत, पु खे=स्वागत करते हैं, प्रवीत=पवित्र।
६०. वाजित=वाद्ययन्त्र, नाराजियाँ=नाराच, निहाव=प्रहार।
६१ वरियाम=श्रेष्ठ।
६२ डँडाहडि=दडा रास।
६३ खहणि=युद्ध, गडदाना=ओले बरसाने वाले बादल, गुरज=बुरज।
(२) पुहतो=पहुँचा।
(४) सहोद=सहोदर, चत्र=चार।

प्रसणाँ घडा पछाड नर हर कै वाहे त्रिजड ।
दे सत उजवाळी दळे झालै झालावाड ।। (५)
रहचे खल रिम राह सुत वीठल अवसाण सिध ।
अणभँग खग पुहतौ अजण गौड करै गज गाह ।। (६)]
करनाजळ रिण काळ जैत कळोधर जैत जिम ।
सारौ पहलौ सूज उत पडियौ लडि प्रौंचाळ ।।६४।।
पाडै पिसुण अपार ऊभौ अक्खाडै अनड ।
गोवरधन साथे गहण धामाँजागर धार ।।६५।।
पळ खूटा पतिसाह कर आवध वाहै किलॅब ।
मारि हथे मरि मारियौ रिण गोदौ रिम राह ।।६६।।
झूलाळाँ खग झाडि बेटाँ बिहुँ सहितौ बलू ।
खिति पडियौ मोटौ खित्री आधौ दळ ऊडाडि ।।६७।।
ढाहेवा गज ढाल जसवॅत छळि मातै जुडणि ।
पाटोधर पडि ऊपडै समहरि रायाँसाल ।।६८।।
भवसि घडा बळि भाळि वाँमणि जिम वीठल वधै ।
उतवँग जाग्ड ब्रह्मँड अडै पग सातमै पयाळि ।।६९।।

(५) घणा (S), नंजड (R) ।
(६) पोहतौ (R) (S) ।
६४ ज्युं (क) (छ), ज्यइ (ग), प्रूँचाल (ग) (छ), पु ञ्चाल (च) ।
६५ पडे (ग), परि [साथे] (च), धोमाजागर (क) (छ) ।
६६ किलग (च) ।
६७ पूरौ [मोटो] च ।
६८ ठातै [मातै] (घ), (च) मे यह दोहा लुप्त ।
६९ छल [बळि] (छ), ज्यु (क) (च) (ज) ।

नरहर का पुत्र झालावाड का दला (दयालदास) झाला तलवारे चला कर शत्रु सेना को पछाडने लगा और उन्हे मृत्यु का दान देने लगा। (५)

अवसानसिद्ध और अजेय वीठल का पुत्र अर्जुन गौड दुष्ट शत्रुओ को मार कर और हाथियो को कुचल कर स्वर्ग पहुँचा। (६)]

रण मे काल के समान करण जैतावत अपने वश का वर्धक था और जयन्त-जैसा लग रहा था। पर सबसे पहले युद्ध मे लड कर विशाल पोहचे वाला सूजावत गिरा ॥६४॥

अखाडे मे खड़ा हुआ अजेय गोवर्धन युद्ध मे तलवार उठा कर उससे मस्तक पर प्रहार करता हुआ अपार शत्रुओ को गिरा रहा था ॥६५॥

शाहजादो की सेना के यवन हाथो से शस्त्र चलाते-चलाते हिम्मत हार गये। शत्रुओ के लिए राहु के समान और शत्रु के विनाशक हाथो वाला गोवर्धन रण मे अनेको को मार कर मर गया ॥६६॥

बडा क्षत्रिय वल्लू अपने दो पुत्रो सहित झूल वाले हाथियो पर खड्ग प्रहार करता हुआ और आधे दल को विनष्ट करता हुआ भूमि पर गिर पडा ॥६७॥

जसवतसिह के लिए हाथियो की ढालो को नष्ट करने के लिए युद्ध मे लडता हुआ राजकुमार रायसिह गिर और उठ रहा था ॥६८॥

शत्रु-घटा-रूपी बलि राजा को देख कर वीठल वामन के समान बढा। उसका मस्तक ब्रह्माण्ड से जा लगा और पैर सातवे पाताल मे ॥६९॥

(५) प्रसणाँ = शत्रु।

(६) गज गाह = गज-मर्दन।

६४ साराँ = सबसे।

६५ धामाँजागर = युद्ध।

६६. पळ = साहस, खूटा = समाप्त हुए।

६७ ऊडाडि = उडा कर।

६८ माते = मदमत्त।

६९ भवसि = शत्रु, भालि = समझ कर, उतवग = उत्तमाग, शीश, पयालि = पाताल।

वह मुगलाँ विरदैत खागे खाँडरतौ खळाँ ।
खासाँ खुंदालिम तणा वाने गौ वानैत ॥१००॥
घण अहिरण घण घाव साम्है चाचरि सात्रवाँ ।
वाहै साहै वीठलौ खाँडौ खाँडेराव ॥१०१॥
जिम रावण भूँझार कमधज रामायण करै ।
पाळ तणौ वाहाँ प्रलँब पडियौ विरद पगार ॥१०२॥
आहवि भ्रित दिनि ईम पाल हरै जाँमळि पिता ।
भिडतै गजाँ भमाडिया भीम तणी परि भीम ॥१०३॥
गोकळ जगौ गरीठ करि विहुँ वाजू केस उत ।
माल हरै जुध मंडियौ रूके आकारीठ ॥१०४॥
वाळै मधौ बँगाळ खेळा दळ खाँडा खहणि ।
धीर हरौ रिण धडहडै जिम होळी खग झाळ ॥१०५॥
आहवि मधौ अगाहि पडियाळग वागै प्रवँग ।
जाणि खँडीवन जाळिवा झटकी कटकाँ झाहि ॥१०६॥
वीरति खाग बजाय वन अरितर बाळे वडा ।
गौ मधुकर कणियागरौ सूरिज जोति समाय ॥१०७॥

१०० खला [तणा] (क) (छ), गोवानै (ग) (छ), गौवीना (च) ।
१०१ जिम [घण] (च), सूरमा [सात्रवाँ] (च) ।
१०२ रामण (च), घमधज (ग), खडियो विरद खगार (क) ।
१०३ माल [पाल] (क), विभाडियौ (छ) ।
१०४ [हरै] (छ) मे लुप्त, आकारूठ (च) ।
१०५ वोधलै (क), हणि (ग) ।
१०६ धोम [मधौ] (ग), पवनि (च), खडावन (च) ।
१०७ अरितन वलि (च) ।

खड्ग चला कर वह वाणैत वीठल दुष्ट मुगलो को खण्ड-खण्ड कर रहा था और उन यवनो के बाने और झण्डे छीन रहा था ॥१००॥

वह खड्गपति वीठल शत्रुओ के भाल-पट्ट पर खाँडे का प्रहार ऐसे कर रहा था मानो घन का अहिरण पर प्रहार हो रहा हो ॥१०१॥

प्रलम्ब की सी लम्बी भुजाओ वाला गोपाल का पुत्र वीठल कमधज रामायण के युद्ध के रावण के समान लड रहा था और अपना विरुद फैला कर वह खेत रहा ॥१०२॥

अपने पिता के साथ ही गोपाल के पौत्र भीम ने मृत्यु के दिन रणक्षेत्र मे भिड कर हाथियो को ऐसे घुमाया जैसे महाभारत मे भीम ने घुमाया था ॥१०३॥

माल(-देव) के वशज केसोदासोत (माधोसिह) ने बडे (योद्धा) गोकल और जगा को दोनो ओर रख कर तलवार से घोर युद्ध किया ॥१०४॥

(रण-)धीर का वशज माधोदास (सोनगरा) यवन-सेना को खण्डित कर उसकी होली खाँडे से जला रहा था। उसके खड्ग की लपटे धडहड निकल रही थी ॥१०५॥

वह माधोदास जब घोडो पर खड्ग चलाता था तो ऐसा लगता था मानो खाडव वन को जलाने वाली अग्नि भटक कर वहाँ आ गयी थी ॥१०६॥

उस सोनगरा माधोदास ने अत्यन्त वीरता से तलवार बजा कर शत्रु रूपी वृक्षो वाले बडे-बडे वनो को जला दिया और वह स्वय सूर्य की ज्योति मे समा गया ॥१०७॥

१०० खाँडरतो = खड खड करता, खासाँ = विशेष झण्डे।
१०२ पाळ = गोपाल, पगार = फैला कर।
१०४ गरीठ = गरिष्ठ, बडा, बाजू = ओर, आकारीठ = भीषण (युद्ध)।
१०५. खेळा = खड।
१०६. पडियाळग = खड्ग, प्रवँग = घोडा, जाळिवा = जलाने को, भाहि = अग्नि।
१०७ वाळे = जला कर।

विढतै क्रियौ विसेख जिम पीथल जैतै जिहीँ ।
पड़तै ऊदिल पाडिया आठ असुर गज अेक ॥१०८॥
वडा वडा गज वाज किलँवाँ दळ तडळ करे ।
खाना खिणि खानाँ खिळै जुडि पड़ियौ जगराज ॥१०९॥
चुँगलाळाँ करि चौड गिरधारी गाहे गजाँ ।
चढियौ खग वाराँ चढे रंभ रथाँ राठौड़ ॥११०॥
खळाँ करे वि वि खड कमवज चँदनामौ करे ।
मरण मनोरथ पूरि मनि पीथल पड़ै प्रचड ॥१११॥
[मारे मुगल मीर सुभटाँ सिर दीन्ही सभा ।
वली मेडतियाँ सकज्ज वरे अपछरा वीर ॥ (१)
भाँजतो अणवीह मोहन जगतावत मछर ।
वाघ कळोधर वाजियौ समहर जाँणे सीह ॥ (२)]
तोड़े खगि तुरकाण रिण पड़ि ऊपडियौ रुघो ।
भाटी भला भमाडिया जेसळगिर जोवाण ॥११२॥
[पाडंतौ पँडवेस अचलावत अवसाण सिध ।
जुडियौ जणजण जूजुवौ मुडियौ नहीँ महेस ॥ (१)
चालि गयौ चटकेह किलँवाँ ऊपरि कोप करि ।
पडियौ रिण पूँचाळ जिम केहरियाँ कटकेह ॥ (२)
वाँवस्त वस वियागि जसवँत नै सहसौ जरू ।
फौजाँ साँम्हाँ फहळिया ऊन्हाळै जिम आगि ॥ (३)

१०८ जे [जिम] (ग), जैता (क), पाडी असुर सुर (क), असुर सुर (छ) ।
१०९ द (क), खानी (क), खानो खनि खानी खलै (च) ।
११० चोट (छ) ।
१११ वे खंड (ग) (च) (ज) ।
(१) और (२) क्रमश केवल (U) और (R) (S) मे ।
(२) अर भाजतो अवीह (R) (S), जाराक (R) ।
११२ पडियो पडियो (क), भवाडिया (ग) (च) (छ) ।
(१-६) तक केवल (ग) (F) (J) (P) मे, (B) मे ये (७५) के बाद है ।
(१) पाडतै (F) ।
(२) चटक (B) ।
(३) फहफिया (P) ।

पीथल और ऊदल जैतावत ने विशेष युद्ध किया और गिरते-गिरते आठ यवनो और एक हाथी को मार गिराया ।।१०८।।

बडे-बडे गजो, घोड़ो और यवनो के दलो को खण्ड-खण्ड करता हुआ, खानो को मार कर खानजादो से लडता हुआ जगराज गिर पडा ।।१०९।।

गिरधारी राठौड यवनो को नष्ट करके और गजो को कुचल कर के खड्ग-धारा पर चढा और मर कर वह राठौड रम्भा के रथ मे जा चढा (अर्थात् उसे स्वर्ग मे रम्भा प्राप्त हुई) ।।११०।।

प्रचड राठौड पीथल शत्रुओ के दो-दो खड करके चन्दनामा लिखा कर अपने मरने का मनोरथ पूर्ण कर के गिर पडा ।।१११।।

[मारे हुए मुगल वीरो के शिरो पर उस वीर मेडतिया सरदार ने अपनी शय्या बनायी और अप्सराओ ने साभिलाष उसको वरा । (१)

बाघ का वशज अजेय जगतावत मोहन शत्रुओ का भजन करता हुआ युद्ध-भूमि मे सिह के समान झपटा । (२)]

रुघा भाटी तुर्को पर तलवारे तोडता हुआ गिर और उठ रहा था । उस जयसलमेरी ने जोधो को चकित कर दिया ।।११२।।

[पाडवेश के समान अवसानसिद्ध महेशदास अचलावत शत्रुओ को गिराता हुआ और शत्रुदल के जन-जन से भिडता हुआ जूझ गया पर मुडा नही । (१)

केहरी क्रुद्ध होकर झट से युद्ध मे यवन-सेना पर झपटा मानो सिह हाथियो की सेना पर झपटा हो । (२)

जसवत और सहसा अग्नि के समान फौजो के सम्मुख ऐसे चले मानो ग्रीष्मकालीन अग्नि बाँसो को ध्वस्त करने चली हो । (३)

१०९. तडळ = शरीर के कटे अग, खिगि = मार कर, खिळै = खड-खड करता हुआ ।
११० चुंगलाळा = यवन, चौड = विनाश ।
१११ बि बि = दो दो ।
(१) सकज्ज = साभिलाष ।
(२) अणबीह = अजेय ।
(१) जूझुवौ = जूझ गया ।
(३) धांधस्त = ध्वस, वस = बांस, धियागि = दाहक अग्नि, जरू = वल वाला, फहलियां = चले ।

दुसमण सिर दोटाह देता भला दिखाडिया ।
पाल हरै कीधा प्रगट केरू जिम कोटाह ।। (४)
ढाहे जिण गज ढाल किलँबाँ दळ तडळ करे ।
भारथ भला भमाडिया मूळौ रायामाल ।। (५)
अरि माथै औनाड़ देतौ खग झाटाँ दुरित ।
दळ भाँगै मँडियौ दळौ प्रोहित जाँणि पहाड ।। (६)]
जुधि जाणे जमराण मतवाळा ज्यूँ मल्हपियौ ।
भगवानौ भालै भिडण चालै गौ चहुवाण ।।११३।।
घण घाअे घमचाळि चूनाळा थिय चालणी ।
आप तणा तण अरिहराँ छडिया उवर छडाळि ।।११४।।
हुवा सकौ हैरान नर सुर कर देखे निब्रहि ।
रतनागिरि आगै रवद भिडि पाड़ै भगवान ।।११५।।
विचित्राँ दिया विछाय भालै हणि भगवानियै ।
जाणि कि वाग विधूँसिया राँण तणा कपिराय ।।११६।।
हार्थां पूरे हाँम पाडि खळाँ सगतीपुरौ ।
भगवानौ भारथ करे वैकुँठ गौ वरियाम ।।११७।।
आयौ अमली माँण असुराँ सूँ भारथि अमर ।
करतौ घाव कटारियाँ चटाँ लटाँ चहुवाण ।।११८।।
अणियाळौ अणबीह पच हजारी पाडतौ ।
अजुवाळै भारथि अमर सोभा वीकमसीह ।।११९।।

(४) देतै भलै दिखा पिया (B), दिखा लियौ (F), कीधी (F) (J), नच (F), सिर (J) (P), कँडूसिर (ग) ।
(५) जिरि (F), किणवा (P), सिर [दल] (J), भली (ग), भवाडिया (F) ।
(६) भागौ (F) ।
११३ गो वाले (क), गोचालै (ग) ।
११४ चूनाली थाये (छ), भला [उवर] (क) (ग) (छ) ।
११५ निहसि (ग) ।
११६ विचि (क), विछाह (ग), हिणि (ड), विघूसियौ (ग) ।
११७ हथिपुर विहाय (ग), मौ [गौ] (ग), पगौ (च) ।
११८ अचली (च), कँवारियां (ग), लटी (च) ।
११९ उजिवालै (च), अणियाल (छ), पाडिया (क) (छ) ।

दुश्मनों के शिरो पर प्रहार करता हुआ गोपालदास का पौत्र (भीम) ऐसा दिखाई दिया मानो कौरवो के शिर पर प्रहार करता हुआ भीम हो। (४)

मूला रायमलोत ने गज-ढालो को नष्ट कर दिया और यवन सेना को खड-खड कर दिया। उसने युद्ध मे शत्रुओ को खूब भ्रमित किया। (५)

दला पुरोहित शत्रुओ के मस्तको पर खड्ग के तीव्र प्रहार कर शत्रु-दल का भजन करता हुआ पहाड जैसा सुशोभित हुआ। (६)]

भगवान चौहान युद्ध मे मत्त यमराज के सदृश झपटा और भाला लेकर लड़ने चला ॥११३॥

उसने अपने शत्रुओ के समूहो को भालो से छेद कर अनेक घाव कर डाले जिससे वे वीर सैनिक चलनी हो गये ॥११४॥

रतन के आगे जब भगवान यवनो को मार कर गिराने लगा तो उसके इस कृत्य को देख कर सब हैरान हो गये ॥११५॥

उस भगवान ने भाले से मार कर शत्रु यवनो को ऐसे बिछा दिया मानो हनुमान ने रावण के बाग का विध्वंस किया हो ॥११६॥

शक्तिपुर (शाकभरी) के चौहान भगवान ने पूरे साहस-पूर्वक अपने हाथो से दुष्टो को मार गिराया और युद्ध करके वह देव-प्रिय वीर वैकुण्ठ गया ॥११७॥

मत्त चौहान अमरदास आमने-सामने युद्ध करता हुआ आ रहा था और असुरो पर कटारियो के घाव कर रहा था ॥११८॥

उस निर्भीक अमरदास ने कटार की धार से पंच हजारी सूबे-दारो को गिराते हुए शोभा (हेमालोत) वीकमसीह के वश को उज्ज्वल किया ॥११९॥

(४) दोटाह = प्रहार, कोटाह = भीम।

(६) ओनाड = तीव्र, दुरित = पाप।

११४. घाअ = घाव, घमचाळि = समावध प्रहार, चूनाला = सैनिक, छडिया = छोडे।

११६ विचित्राँ = शत्रु (यवन), राँण = रावण।

११७. हाँम = साहस।

११८ अमली = नशा करने वाला, मत्त, चटाँ लटाँ = बाथोबाथ लडता हुआ।

जुध करि परियाँ जेम सादावत अवसाण सिध ।
कर वाहे गाहे किलँब अमर गयौ स्रगि अेम ।।१२०।।
[सर सावळा सकाज विचत घडा विच वीरवर।
वध वध नांखै वीठलौ वीज तणी पर वाज ।। (१)
जोध करै रिण जग वीठड गज भाजै विचत ।
पाडै पाँचा हर पिसुण आखाडै अणभग ।। (२)]
अेकणि हणे अनेक किसनावत मातै कळहि ।
मरण तणै दिन मार कै वोठल कियौ विसेक ।।१२१।।
अरिहर अवियाटाँह खग झाटाँ भाँजण खत्री ।
गौ भारथि गाँगा हरौ गिरधर गज थाटाँह ।।१२२।।
अणियाँ चडि अरडिग रतनावत भाँजे रवद ।
पाटोधर पडि ऊपडे समहरि रायासिंग ।।१२३।।
[जोध जोधाँ छळ जाग साँवळ कौ अवसाँण सिध ।
लागौ तिण वेळा लडण गिरधारी गैणाग ।। (१)]
मल्हपि गयौ कुळ मौड जाडै दळ लाडा जिही ।
सार तणै भर साहिबौ रौद्राँ सिर राठौड़ ।।१२४।।
पाखर सहित पवग सिधुर नर ढालाँ सहित ।
भिडतै साहिब भाँजिया जैत हरै करि जग ।।१२५।।
निय वँस चाढे नूर करे महाजुध कूँभ उत ।
वगडी धणी विराजियौ सूर सभा विच्चि सूर ।।१२६।।

१२० पडियौ (क) (छ), अेणि (छ) ।
(१) केवल (R) (S) मे, (D) मे उसके स्थान पर—
सरि सावळाँ सकाज पाचायत अण भागे पडे ।
विव विध ओरां वाज विचत दलां विच वीठलौ ।।
(२) केवल (D) मे ।
१२१ माणातणौ (ग), कियै (छ) ।
१२२ अडिया (क) (छ) ।
(१) केवल (R) (S) मे ।
१२४ लाडी (ग), सीरा (च) ।
१२५ सहति (च), भिडता साहिब (क), भिडत साहि (ग) ।
१२६ नीर [नूर] (क), सूरा (क) (ग) ।

जिस प्रकार उसके अवसानसिद्ध पूर्वज सदा युद्ध कर के मरे थे वैसे ही यवनो पर खड्ग चलाता हुआ और उन्हे कुचलता हुआ अमरदास भी स्वर्गवासी हुआ ॥१२०॥

[वीरवर वीठल ने आगे बढ-बढ कर शत्रु-दल मे शर और भाले चलाते हुए अपना बिजली-जैसा घोडा डाल दिया। (१)

वह पाँचाहर वीठल युद्धभूमि मे लडता हुआ यवनो के हाथियो का भजन कर रहा था और शत्रुओ को अखाडे मे गिरा रहा था। (२)]

युद्ध मे मत्त (साँचौरा) किसनावत वीठल ने अकेले ही अनेको को मार कर मरने के दिन विशेष शौर्य प्रदर्शन किया ॥१२१॥

गाँगावत क्षत्रिय गिरधर शत्रुओ के समूह पर और गज-यूथ पर खड्ग प्रहार कर उन्हे युद्धस्थल मे मारने गया ॥१२२॥

शत्रुहन्ता रतनावत राजकुमार रायसिंह भाले की नोक पर चढ़ने वाले यवनो का विनाश करता हुआ युद्ध-क्षेत्र मे गिरने और उठने लगा ॥१२३॥

[अवसानसिद्ध साँवल का गिरधारी जोधो के लिए युद्ध करता हुआ लडने के समय उल्का के समान लग रहा था। (१)]

कुल का मुकुट राठौड वीर साहिब खाँ यवनो के घने समूह के स्वामियो के शिर पर तलवार का प्रहार करने झपटा ॥१२४॥

उस जैतावत साहिब खाँ ने युद्ध मे पाखर सहित घोडो को, ढालो सहित नरो को और हाथियो को भिडते ही मार डाला ॥१२५॥

वह बगडो का स्वामी कुम्भा का पुत्र (साहिब खाँ) महायुद्ध कर के अपने वंश को प्रकाशित करने लगा और शूरो की सभा मे सूर्य के समान तेजस्वी हो कर विराजमान हुआ ॥१२६॥

१२० परियाँ = गिरे।
(१) नाखै = डालता है, वाज = घोडा।
(२) विचत = शत्रु, पिसुण = शत्रु।
१२१ कलहि = युद्ध मे, विसेक = विशेष।
१२२ अवियाटाँह = समूह।
(१) गैणाग = उल्का, गगनाग्नि।
१२४ जाडै = गहरे, लाडा = स्वामी, भर = भट, साहिबौ = स्वामी।
१२६ निय = निज, नूर = ज्योति।

चारण ग्रहि चौधार सत्र मारण अवसाण सिध।
वागौ डारुण वैण उत सिरदारे सिरदार ॥१२७॥
हणि सावळि करि हाँसि जवनाँ उप्पाड़ै जसौ।
चढिया भारथ चौहटै वादी जाणि कि वाँसि ॥१२८॥
चवधारै करि चूर विच्चित उपाडै वैण उत।
गळ पळ भरि हँसवर गयण हुवा त्रिपत ग्रिध हूर ॥१२९॥
वाहि वडा गज वाज रोहड छळि राजा रतन।
जीवत म्रित वाजी जूडे जीपि गयौ जसराज ॥१३०॥
दळ डोहे दरियाव हैवै वहि हदमाल रौ।
जोडे रिणमालाँ जगौ रहियौ खिडियाँ राव ॥१३१॥
भाँजतौ गज भार सारै आफळतौ समरि।
पडियौ रिणि खिडियौ प्रचँड पाडे प्रिसुण अपार ॥१३२॥
[उज्जेणी अस हास अरि पड मादे ऊपडै।
वणियौ चाचर विहँडियौ विखमी चामर वास ॥ (१)]
कळहै सुत कलियाण भीमाजळ पाडे भडाँ।
पडि भुइँ कमँधाँ पाखती रहियौ मिस्रण राण ॥१३३॥
[सत खग धाराँ सेव परम तणी पर पूजियौ।
सकर को रामेसवर देह हुवौ लड़ देव ॥ (१)]
खिति बि बि खड खळाँह कमँधराज करतौ किळँब।
विजडा हथ वळिराव री द्वारी गयौ दळाँह ॥१३४॥

१२७ वागा (ग), सिरदारा (क) (छ)।
१२८ हणसी (क), जसै (छ)।
१२९ गलिल [गळ पळ] (छ)।
१३० वहे (च), जडा [वडा] (क), वलि [छळि] (क) (छ)।
१३१ सिडिवौ (क), रावा (ग)।
१३२ चडियो [पडियो] (क)।
(१) केवल (D) मे।
१३३ (च) मे लुप्त।
(१) केवल (D) मे।
१३४ कमधज (क), दुइडा [विजडा] (क)।

सरदारो का सरदार अवसानसिद्ध वेणीदासोत चारण (जसराज) शत्रुओ को मारने के लिए चौधारी तलवार लेकर उस दारुण शस्त्र को वजाने लगा ॥१२७॥

उसने युद्ध के उत्साह सहित यवनो पर भाला मारा और उसे वापिस उखाड लिया मानो युद्धरूपी खेल के मैदान मे वाजीगर ने वाँस पर चढ कर (खेल पूरा होने पर) उसे उखाड लिया हो ॥१२८॥

जब उस वेणीदासोत जसराज ने चौधार से शत्रुओ को चूर कर डाला तो गिद्ध मास से मुख भर कर तृप्त हो गये और हस-गामिनी हूरे वीरो का वरण करके सतुष्ट हुई ॥१२६॥

अनेक गजो और अश्वो पर वार करके रोहडा चारण जसराज और राजा रतन मे जीवन और मृत्यु की वाजी लगी जिसमे जसराज जीत गया (अर्थात् वह पहले मरा) ॥१३०॥

रिणमालो के साथ ही हदमाल का पुत्र खिडिया जगा यवन-दल रूपी समुद्र मे वह कर डूब गया और वही रह गया ॥१३१॥

वह खिडिया जगा अपार और प्रचड शत्रुओ को मार कर गिराता हुआ, गज सेना का भजन करता हुआ और तलवार वजाता हुआ रणभूमि मे गिर पडा ॥१३२॥

[वह उज्जैन की खड्गधारा मे शत्रुओ को गिराता और उठाता हुआ यवनो के शिरो का कर्त्तन करता हुआ सुशोभित था। (१)]

कल्याण का पुत्र मिश्रण भीम भी युद्धभूमि मे वीरो को गिराता हुआ स्वय भी कमधजो के पास ही खेत रहा ॥१३३॥

[सैकडो खड्ग धाराओ का सेवन कर शकर का रामेश्वर परम पद को प्राप्त हुआ और लड कर सदेह देवता बना। (१)]

वल्लूराव (चाँपावत) का पुत्र राठौड द्वारकानाथ दुष्ट यवनो को दो-दो खड करके पृथ्वी पर गिराता हुआ हाथ मे तलवार लेकर सेनाओ पर टूट पडा ॥१३४॥

१२८ हाँसि = उत्साह, चौहटे = मैदान।
१३१ डोहे = गहरा, दरियाव = समुद्र।
(१) असि हास = असि की चमक, मादे = मत्त, विखमी = विषम।
१३३ पाखती = पार्श्व मे, रहियौ = खेत रहा।

मेछाळाँ सिर मार देतौ पौंह आगळि दळाँ ।
केलपुरौ भारथि किसन जाडै गौ जिणियार ॥१३५॥
हणतौ मैंगळ हाथि करतौ मुखि हाकाँ कहर ।
कुंभकरण सिर केवियाँ भाटी गौ भाराथि ॥१३६॥
[भाँजतौ गज भार असुराँ हेडवतौ अभँग ।
वीकौ समहर वाजियौ नरहरदास निडार ॥ (१)
सीसोदिया सुजाँण भागौ नह भाखर हरौ ।
लडियौ आडे लोहडे रण रावत रढ राँण । (२)
खाँगो मडल सूर रतनौ कमधज रूपसी ।
विढताँ मुर बधव वणे खाँडरताँ खल खूर ॥ (३)
ईसर कुंभौ अेम साँचौरा वधव सगा ।
भारथ जूटा भाँज उत जोड़ै नाहर जेम ॥ (४)]
अरि भाँजण असि हास राजा छळि राजड तणौ ।
जुधि जूटौ जैसा हरौ दुजडाँ वेणीदास ॥१३७॥
[अरि हण हैमर अेम धज नेजाँ खग ढाहतौ ।
वीर तणी रिण वाजियौ नाहर नाहर जेम ॥ (१)
कमँध करण चित काँम हैवै वह ऊदा हरो ।
रतन तणै छळ टूक हथ हद वागौ हर राँम ॥ (२)
सोनगरौ सिस माथ आसौ नै सुन्दर अभँग ।
विढता सूर वखाँणिया सग्रहता सत सीस ॥ (३)
धड धड वाहे धार खेत उजेणी खग्ग हथ ।
वेणौ दूदावत वढै पड उप्पडै पँवार ॥ (४)

१३५ म्लेच्छाला (क), पह (क) (च), आगै (ज), (ग) मे इसके वाद (१३८) ।
१३६ (ग) मे लुप्त, गौ भाटी (च) ।
(१-४) तक केवल (R) और (S) मे ।
१३७ हरौ [तणौ] (क) (छ), जेता हरौ (च), दुजडै (ग) (च) ।
(१-५) केवल (S) (D) मे ।

सुप्रसिद्ध केलपुरा किशन आगे की सेना के म्लेच्छो के शिर पर प्रहार करता हुआ घने सैन्य-समूह मे घुस गया ॥१३५॥

मद-मत्त हाथियो को मारता हुआ और मुख से भयकर हाक करता हुआ भाटी कुम्भकर्ण युद्ध मे शत्रुओ के शिर पर टूट पडा ॥१३६॥

[गज-सैन्य का भजन करता हुआ और यवनो को नष्ट करता हुआ निडर नरहरदास बीका लडाई मे लोहा बजा रहा था। (१)

भास्कर (सूर्य)-वशी सुजान सीसोदिया भागा नही। वह रावण जैसा वीर योद्धा रण-भूमि मे लोहा बजाता हुआ लडता रहा। (२)

राठौड़ मँडला के शूरवीर पुत्र सांगा, रतनसी और रूपसी—तीनो भाई—दुष्टो का दलन करते हुए लड रहे थे। (३)

ईश्वरदासोत कुम्भा तथा झाँझावत साँचोरा सगे भाई—दयालदास और नरसिहदास—युद्ध मे ऐसे भिडे मानो सिहो की जोडी भिड़ गयी हो। (४)]

जेसा (चाँपावत) का वशज राजाओ का राजा वेणीदास सोत्साह शत्रु-नाशक तलवारे लेकर अनेक तलवारो से युद्ध मे भिड गया ॥१३७॥

[शत्रुहन्ता वीर-पुत्र नाहर शत्रुओ के घोडो, ध्वजो, नेजो और खड्गो को ढहाता हुआ सिह के समान युद्ध मे लडा। (१)

ऊदावत हरराम राठौड रतन के लिए विचित्र युद्ध करता हुआ हाथो के खण्ड-खण्ड होने पर खेत रहा। (२)

सोनगरा-शिरोमणि आशा और सुन्दर युद्ध मे लडते हुए ऐसे प्रतीत होते थे मानो सैकडो शीशो का सग्रह कर रहे हो। (३)

दूदावत वेणीदास पँवार हाथ मे खड्ग लेकर धडाधड चला रहा था और उज्जैन क्षेत्र मे लडते हुए गिर और उठ रहा था। (४)

१३५ मेछाळां = म्लेच्छो के, पोह = प्रभु, जिणियार = प्रसिद्ध।

(१) निडार = निर्भय।

(३) मुर = तीन, खूर = क्रूर।

(२) हैवै = हयपति, वागौ = बजा।

कूरम मांन कठीर समहर सामलदास उत ।
वडवडते वड़वड़ियौ सूराँ सूर सधीर ॥ (५)]
रूपावत रिम राह मुँहतौ सांवळ मार कौ ।
विढतौ देखै वीरवर सुपह अनै पतिसाह ॥१३८॥
[विध करतौ हथ वाह हेमावत सिर हाथियाँ ।
सीह तणी पर राजसी सह लागौ गोसाह ॥ (१)]
पचायण दळ पूर पैठौ ईसर कौ प्रगट ।
हैवै थट हाकोटियाँ अणी चढावै ऊर ॥१३९॥
धाराँ मारि धड़ाँह देतौ गौ पैलाँ दळाँ ।
चौरँग वेळा चांद उत भाऊ कमँध भडाँह ॥१४०॥
घग्व करतौ घमसाणि सामि सुछळि अवसाण सिध ।
रामौ भिडि पाडै रवद नेजाळाँ निरवाणि ॥१४१॥
लोहि वधारण लाज चुँगलाळाँ दळ चूरता ।
भाटी रिण जूटा भला सुन्दर अजौ सुकाज ॥१४२॥
सह वीजाँ सिरदार साथे पह पौंहला सरगि ।
वेणी दूदावत विढणि पडि उप्पडै पँवार ॥१४३॥
मांगळिया मनमोट दळपति नै खांनौ दुवै ।
विहँडै खग धाराँ विचित कळहि दुवाहाँ कोट ॥१४४॥

(१) केवल (D) मे ।
१३९ पघट (क), प्रघट (च), हिव थागहा (क), हिवैंघटाँ (ग), वढावै (ग) ।
१४०. धारे (क), चारेग वेला (छ), उव (क) ।
१४१ मुँहि [करतौ] (च), नेजाळा निरवाण (क), नैंजानाल निवाण (ग) ।
१४२ तूटा (च) ।
१४३ पहता (क) (छ), विढे [विढणि] (क), पह [पटि] (क) (छ) ।
१४४. दुवौ (ग) (च) ।

सामलदासोत कछवाहा मानसिह शूरो से शूरता और धैर्य के साथ भिड रहा था। (५)]

शत्रुओ के लिए राहु के समान मु'हता साँवल रूपावत मार कर रहा था। उसे लडते हुए उसका स्वामी (रतन) तथा शाहजादे देख रहे थे ॥१३८॥

[हेमावत राजसी हाथियो के मस्तको पर तलवार से प्रहार कर रहा था। वह औरगसाह रूपी सिह की सेना पर शहगोश जैसा लग रहा था। (१)]

यवनो के समूह के हृदय पर तेज अणी का प्रहार करता हुआ और हाक मारता हुआ ईसर का पुत्र पचायण पूरी सेना मे प्रविष्ट हो गया ॥१३९॥

कमधज भाऊ चाँदावत वीरो के धडो को असि-धारा से मारता हुआ युद्ध के समय शत्रु-सेना को काटने लगा ॥१४०॥

अत्रसानसिद्ध रामा निरवाण (चौहान) स्वामी के लिए घमासान युद्ध करता हुआ नेजे वाले यवनो से भिड कर उन्हे प्रहार कर के गिराने लगा ॥१४१॥

रक्त को लज्जा रखने के लिए दो भाटी वीर—सुन्दर और अज्जा—यवनो के दल को चूर्ण करते हुए रण मे जुट गये ॥१४२॥

दूसरे सब सरदार तो प्रभु के साथ ही स्वर्ग पहुँच गये पर दूदावत वीर वेणा पँवार लडता ही रहा और गिर-गिर कर उठता रहा ॥१४३॥

महान् दलपति और खान नामक दो माँगलिया वीर युद्ध मे खड्ग की धारा से योद्धाओ के दुर्ग-जैसे शत्रुओ को काट रहे थे ॥१४४॥

(५) वडवड्डियौ = बडबडाया।
१३८ सुपह = प्रभु, अनै = और।
१३९ हाकोटियाँ = हाक, ऊर = हृदय।
१४० पैलाँ = शत्रु, चौरंग = युद्ध।
१४४ नै = और, विहँडै = काटते।

वीहँडतौ गज वाज सामि तणै छलि साहणी ।
देखि कहै पैलाँ दळाँ धन हाथाँ धनराज ॥१४५॥
रुक दियतौ रीठ वगाळाँ माथे वहसि ।
पड़ियौ भड पाडे प्रचँड गाहड नवल गरीठ ॥१४६॥
वीरति असिमर वाहि दूदावत भाँजे दुयण ॥
रतनौ छळि राजा रतन मुहरि रहै रिण माहि ॥१४७॥
माथै मुगलाळाँह वधि वधि खाँडा वाहतौ ।
चारण जूटौ चापडै धरमौ धाराळाँह ॥१४८॥
झाडतौ झटकाँह घट वटकाँ करतौ घणाँ ।
मथुरौ भारथि मल्हपियौ कात्रौ विचि कटकाँह ॥१४९॥
विढतौ रिण वरियाम सामि तणै छळि सोहियौ ।
खग झाटाँ देतौ खित्री तूँवर जीवौ ताम ॥१५०॥
नाई समरि निडार नागाँ खागाँ निहसियौ ।
सार तणै भरि सोहियौ जीवौ ही जिण वार ॥१५१॥
झिलताँ खग झाटाँह देताँ गा पैलाँ दळाँ ।
भगवानौ नै भूरियौ थोरी गज थाटाँह ॥१५२॥
मुँह आगे वरियाम राजा रैणायर तणै ।
गुणियौ गज थाटाँ गयौ देतौ दळाँ दमाम ॥१५३॥
इतरा भड ओनाड पड़िया राजा पाखती ।
राजा ऊभौ रतनसी पाखै तराँ पहाड ॥१५४॥

१४६ भम (छ) ।
१४७ वारन (क), दूजावत (छ), भाजण (क) ।
१४८ विधि विधि (क), वधिवधि (ग), धारालीह (च) ।
१४९ कूँबो [कात्रौ] (क), मल्हियौ (छ) ।
१५०. झाडा (ग) ।
१५१ नावी (क), नाव (ग), नागे खागे (ग) ।
१५२ झटकाँह (ग), थाटीह (च) ।
१५३ भाग [थाटाँ] (ग) ।
१५४ जाणि [तराँ] (क) (छ), तरै (ग), (च) में दूसरा चरण पहले, पहला बाद में ।

स्वामी के लिए युद्ध करता हुआ धनराज जब शाहजादो की सेना के हाथियो और घोडो को मार रहा था तो उसके भुज-बल को देख कर शत्रु-सेनाएँ धन्य-धन्य कह रही थी ॥१४५॥

क्रुद्ध हो कर प्रचण्ड अभिमानी नवल यवनो के मस्तक पर युद्ध मे तलवार मारता हुआ और भटो को गिराता हुआ स्वय गिर पडा ॥१४६॥

राजा रतन के सम्मुख दूदावत रतन अत्यन्त वीरता से तलवारे चला कर शत्रुओ का भजन करता हुआ रण मे ही खेत रहा ॥१४७॥

चारण धर्मा मुगलो के मस्तको पर बढ-बढ कर खाँडा चलाता हुआ युद्ध-क्षेत्र मे तलवारो से जुट गया ॥१४८॥

मथुरा काबा तलवार के झटको से शरीरो के अनेक टुकडे करता हुआ युद्ध मे सेनाओ के बीच कूद पडा ॥१४९॥

देव-प्रिय क्षत्रिय जीवा तँवर स्वामी के हेतु युद्ध मे लडता हुआ और तलवार चलाता हुआ शोभित हुआ ॥१५०॥

प्रसिद्ध और निडर जीवा नामक नाई नगी तलवारो से सोत्साह लडता हुआ शस्त्रो से भरे शरीर वाला शोभित हुआ ॥१५१॥

भगवाना और भूरिया थोरी ने खड्ग प्रहार सहते हुए शत्रु सेनाओ और गज-समूहो पर शस्त्र प्रहार किया ॥१५२॥

देव-प्रिय दमामी गुणिया गज सैन्य को मारता हुआ राजा रतनसिह के सम्मुख ही खेत रहा ॥१५३॥

जब इतने शक्तिवान् भट राजा के पास ही खेत रहे तो भी वह राजा रतनसिंह ऐसे खडा रहा जैसे बिना वृक्षो के पर्वत खडा हो ॥१५४॥

१४६ रीठ=युद्ध, बँगालाँ=बगाल जाति के यवन, गाहड=अभिमानी ।
१४७ दुयण=दुर्जन, शत्रु ।
१४८ चापडै=युद्ध मे, धाराळांह=धार वाली (तलवार) ।
१४९ बटकाँ=टुकडे, मल्हपियो=कूद पडा ।
१५० झाटाँ=झटके, प्रहार ।
१५१ नागाँ=नगी ।
१५२ झिलताँ=झेलते हुए, सहते हुए ।
१५३ रैणायर=रतनसिह ।
१५४ पाखती=पार्श्व मे, पाखै=विहीन, तराँ=वृक्ष ।

छद मोतीदाम—खगाँ चढि धार हुवै बि बि खड ।
पडै धर हिदु मळेच्छ प्रचड ।। [१]
रळत्तळ नीर जिही ँ रुहिराळ ।
खळाहळ जाँणि कि भाद्रव खाळ ।। [२]
उजेणि अकाळ भडाळ अछेह ।
मॅडै घण जाँणि कि बारह मेह ।। [३]
उभै पातिसाह अणी करि अेक ।
आया सिर रत्तन सूर अनेक ।। [४]
रजै रतनागिर देखि रवद्द ।
निसाण रुडै सहि वाजित्र नद्द ।। [५]
हुवै मन आणॅद पोरिस हॉम ।
जगै अगि देखि खॅडीवन जाम ।। [६]
अडै सिर व्योम कमधज ईम ।
भमाडण रोद गजाँ जिम भीम ।। [७]
धुबै दळ राजेन्द वाजेन्द धोम ।
गजै गुण बाण अनै रिण गोम ।। [८]
उडै घण बाण खतग अँगार ।
पडै झडि नाखित जाँणि अपार ।। [९]
राजा करि हाक क्षत्री भ्रम राहि ।
मधावत खॅग धरै रिण माँहि ।। [१०]
हिलोळै फौज चढावै हीक ।
झॅडा गज वाजि हुवा भड झीक ।। [११]

१५५ [१] व वै (ग), हिदुय (च), म्लेच्छ (छ) ।
[२] रलहल नीरक (ग) ।
[३] यकाल भलाड (ग) ।
[४] रतन (ग) ।
[६] (छ) (ज) मे लुप्त, वरस [पोरिस] (ग) ।
[७] भवाण (ग), भमावण दोद (छ) ।
[८] वाजिद वाजिद (छ) ।
[१०] राखि [राहि] (ग) ।
[११] हिलोलेय (च), हिलेल (छ), चढावेय (च) ।
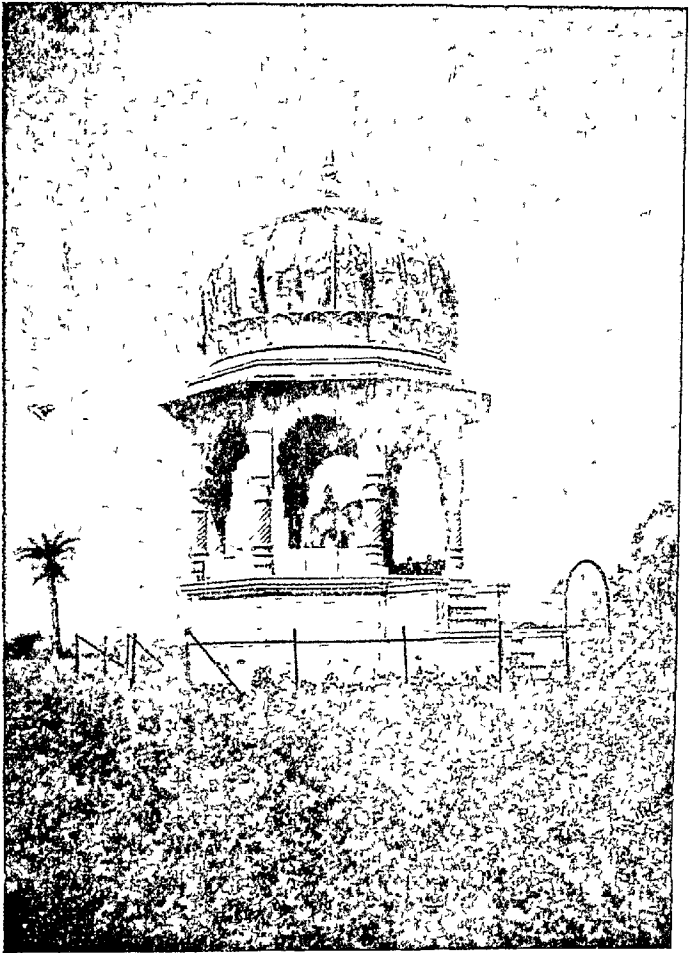
रतनसिंह की छत्री – धरमत के युद्ध-क्षेत्र में

प्रचण्ड हिन्दू और म्लेच्छ खड्ग की धार पर चढ कर दो-दो खड होते है और भूमि पर गिरते है।

वहाँ रुधिर-रूपी जल ऐसी तीव्र गति से बह रहा है मानो भाद्रपद मे जल का नाला तेजी से बह रहा हो।

उज्जैन मे अनन्त अकाल वृष्टि की झडी लग गयी है मानो बारह प्रालेय मेघ उमड आये हो।

दोनो शाहजादे अनेक शूरो की एक सेना बना कर रतन के सिर पर आ गये है।

मुसलमानो के झण्डे को देख कर रतनसिह सतुष्ट हो रहा है और सभी वाद्य-यन्त्र बजने लगे है।

उसके (रतनसिह के) मन मे आनन्द हो रहा है और उसमे पौरुप की इच्छा जाग्रत हुई है मानो खाण्डव वन को देख कर अग्नि जल उठी हो।

कमधजो के उस स्वामी का शीश आकाश को छूने लगा है मानो गजो को घुमा देने वाला रौद्र-रूप भीम हो।

युद्ध मे सेनाएँ, राजा लोग तथा वाजिराज प्रचण्ड हो रहे है और रणभूमि तथा आकाश मे वाणो और उनकी डोरियो की गर्जना हो रही है।

अनेक बाण, खतग और अगारे उड़ रहे है और पड रहे है मानो अपार नक्षत्र झड रहे हो।

मधकर-पुत्र राजा रतन ने हाक मार कर क्षत्रिय धर्म के मार्ग को अपनाया है और वह रण मे खड्ग धारण कर उतरा है।

वह सेना के मध्य भाग को अस्त-व्यस्त करने लगा है और हिकार करते हुए गज, अश्व और वीरो के समूह को छिन्न-भिन्न कर रहा है।

१५५ रळत्तळ=बहता है, रुहिराळ=रुधिर वाला, खळाहळ=तेजी से बहना, खाळ=नाले। झडाळ=झडी वाले, अछेह=अनन्त। रडै=बजते है। जाम=जब। धुवै=लडते है, गुण=प्रत्यचा, गोम= आकाश। हिलोळै=आन्दोलित करता है, हीक=हिकार, भीक=प्रहार।

जुटा रतनागर औरँग जाम ।
वडा जम रूप विन्हे वरियाम ।। [१२]
धमद्धम सेल वहै खगधार ।
पडै झसडक्क पटाँ अण पार ।। [१३]
अवज्झड लिज्झड घाव असध ।
कटै कर कोपर काळिज कध [१४]
भडाँ धड भजि हुवै बि बि भग्ग ।
खडक्खड ढल्ल झडज्झड़ खग्ग ।। [१५]
कडक्कड वाजि धडाँ किरमाळ ।
बडब्बड भाजि पडत बँगाळ ।। [१६]
दडब्बड मुण्ड रडब्बड दीस ।
अडब्बड लेत चडच्चड ईस ।। [१७]
अँत्राँ खग झाट निराट अळग्ग ।
पडै बि बि जघ पडै झडि पग्ग ।। [१८]
पडै रिण उच्छळि अेम प्रवग ।
कुडाँ चढि जाणि विनाणि कुरग ।। [१९]
खावै रिण मद्धि गडूथल खान ।
जिही नट खेल कुलट्ट जुआन ।। [२०]
रौद्राँ रिण भूमि करत रतंन ।
कपी दळ जाँणि कि कु भकरन ।। [२१]
हुवै रिण हक्क किळक्क हमस्स ।
उडै रत छौळिय दिस्स अरस्स ।। [२२]

१५५ [१३] पटाल (ग), पटे (च), पटाण (छ) ।
[१४] अवझझाड (छ), भडा [घाव] (ग) ।
[१५] विभाग ।
[१६] कडकर (छ) ।
[१७] सूँडि (छ), लैतड (ग) ।
[१८] पीडा (छ) ।
[१८] का उत्तरार्ध और [१९] का पूर्वार्ध (ग) मे लुप्त है, पर हाशिये मे बाद मे लिखा गया है ।
[२२] (छ) मे दूसरी पक्ति —'आखै धन धन रतन्न अरस्स'; दिसत्त (ग) ।

जब औरगजेब और रतन भिडते है तो ऐसे लगते मानो क्रमश यम-रूप और देवो के प्रिय हो।

सेले और खड्गे धमाधम चल रही है और सडसडाती हुई लग कर आर-पार निकल रही है।

भट लोग तलवार के टेढे वार कर रहे है और उनके हाथ, मस्तक, कलेजे और कन्धे कट रहे है।

उन भटो के धड कट-कट कर दो-दो खड हो रहे है। ढाले खडाखड आवाज कर रही है और तलवारे झडाझड बज रही है।

तलवारे घोडो के धडो पर कड़ाकड बज रही है। यवन ताबड़तोड भागते हुए गिर रहे है।

उछलते हुए मुण्ड दिशाओ मे बिखर रहे है और इधर-उधर भागते हुए रुद्र उन्हे चुन-चुन कर झटपट उठा रहे है।

खड्ग प्रहार से आँते पूर्णत कट कर अलग-अलग हो रही है। जघाएँ और पाँव दो-दो टुकडे हो कर झड कर गिर रहे है।

घोडे उछल-उछल कर युद्ध मे गिर रहे है मानो पर्वत-शिखर पर चढ कर हिरण कूद रहे हो।

खान लोग गिरह खा कर रणक्षेत्र मे ऐसे गिर रहे है मानो युवक नट गिरह खा रहा हो।

रतन यवनो को रण मे कुचल रहा है मानो कुम्भकर्ण कपि-दल को कुचल रहा हो।

युद्ध मे हाक, किलकार और हमस (खुरो की आवाज) हो रही है और सब दिशाओ मे अनुपम रक्त की लहरे उड रही है।

१५५ झसडक्क=सडासड ध्वनि, पटां=तलवारे (पट्टा खेलने की)। अवजझड=टेढे प्रहार, तिज्झड=खड्ग, अमध=न सँधने वाले, कोपर=खोपडी। ढल्ल=ढाल। किरमाळ=तलवार। दडव्वड=दडादड, शीघ्रता से भागते, रडव्वड=छिन्न-भिन्न होना, अडव्वड=इधर-उधर भागना, चडच्चड=झटपट उठना। अँत्रां=आँते, निराट=पूर्णत। कुडां=पहाडी। गड्थल=कलाबाजी, कुलट्ट=कलाबाजी। छोळिय=लहर, सरस्स=सदृश।

अग्खै धन धन रतन अरवक ।
चढावै मेछ घडा खग चक्क ।। [२३]
ग्रहे खग नागेन्द कोप गिरद ।
मथै सुर अस्सुर जाणि समद ।। [२४]
मधावत कज्जि रतन्न मुगत्ति ।
प्रिथी कजि आफळिया असपत्ति ।। [२५]
कियै मुख चोळ धसै रिण काळ ।
रुळै पग्य अत्र गळे वरमाळ ।। [२६]
वरै पगतिसाह घडा वर वीर ।
महा गज वाज पछाडै मीर ।। [२७]
वडफ्फर टूक हुवै गज वाज ।
तडफ्फड मच्छ जिही सिरताज ।। [२८]
मरद्द जरद्द पडै अनमध ।
क्रहक्रह वीरह नाचि कमध ।। [२९]
हडाहड़ रिक्खि हुवै हर हार ।
जयज्जय जोगणि किद्ध जियार ।। [३०]
महा रिण पौढै सूर मसत्त ।
दिगम्बर जाणि अखाडै दत्त ।। [३१]
पळच्चर साकणि डाकणि प्रेत ।
खुधावंत भक्ख लियै रण खेत ।। [३२]
[रमज्भम भाँभर घूघर रोळ ।
भले वर सूर वरै रंभ भोळ ।।] [३३]

१५५ [२३] चढावी मेछ खडखड (च), (छ) मे इसके स्थान पर—
'चढावीय म्लेच्छ घडा खल चवक । उडी रज माँहि नदी ठअरवक ।'
[२७] वडा (छ) ।
[२८] वडोव्वड (ग), लही [जिही] (ग) ।
[३०] हड्हड (ग) (च) (छ) ।
[३१] महाजुध (च), डिगम्बर (ग) ।
[३२] बुधा वध मूख (च) ।
[३३] रुणझुण नेवर घु घर रुल (च), भूल (च) ।

सूर्य कहता है कि "रतन धन्य है जो म्लेच्छ सेना को तलवार के चक्कर मे चढा रहा है।"

रतन और शाहजादे नागराज रूपी तलवार से गिरीन्द्र तुल्य गजराजो पर ऐसे प्रहार करने लगे है मानो देव और असुर समुद्र-मन्थन कर रहे हो।

मुक्ति के लिए मधुकर-सुत रतन और भूमि के लिए शाहजादे आपस मे भिड़ गये है।

काला रतनसिह मुख लाल करके युद्ध मे धँसा है जहाँ अँतड़ियो और कण्ठो की वरमालाये पैरो मे बिखरी पड़ी है।

वह चुन-चुन कर बादशाह की सेना के अच्छे-अच्छे वीरो और मीरो को और बड़े हाथियो और घोडो को पछाड रहा है।

हाथियो और घोडो के वडप्फर (ढाल) टूक-टूक हो गये है। शिर के ताज मछलियो की तरह तडफड़ाने लगे है।

मर्द पीले पड कर लगातार गिरने लगे है और कबन्ध कहकहा लगा कर नाचने लगे है।

हड्डियो के समूह शकर के हार बन गये है और योगिनियाँ जयजयकार करने लगी है।

मस्त शूरवीर महा रण मे लेट गये है मानो दिगम्बर भगवान शकर अखाडे मे सो गये हो।

भूखे मास-भक्षी जीव, शाकिनी, डाकिनी और प्रेत आदि अपने भक्ष्य रणभूमि से ले रहे है।

[झाँझर तथा घुँघरू को रमझम बजाती हुई रम्भादि अप्सराओ का समूह शूर-वीरो का वर रूप मे वरण कर रहा है।]

१५५ आखै=कहते है, अरक्क=सूर्य, चक्क=चक्कर। कज्जि=हेतु, आफळिया=भिडे। चोळ=लाल। वडप्फर=ढाल। जरद=पीले, अनमध=सतत। किद्ध=किया। पौढै=लेटे है। पळच्चर=मासाहारी, खुधावंत=भूखे, भक्ख=भक्ष्य। झले=पकड कर, झोळ=समूह।

बणै त्रिण सै सर सेल्ह छबीस ।
सोहै किर वस गिरव्वर सीस ।। [३४]
असी खग घाव लगा जब अग ।
जोधा हर ताम पडे जुडि जग ।। [३५] ।।१५५।।

दूहौ — रतन पडे रण नीवडे औरँग अडे अरस्सि ।
सूर खडे चढि रत्थ सझि नौबत तूरि निहस्सि ।।१५६।।

कवित्त—पडे वाज गजराज राव रावत्त नरेसुर । [१]
पडे खान उमराव मुगल भूरा मीरम्बर ।। [२]
पडे सज्झ धड गजाँ इसा दीसै उणिहारै । [३]
उत्तारी रिणि आणि जाणि बाळद विणिजारै ।।[४]
गढपति पडे छत्रपति गरा चद जस्स नामौ चडे ।[५]
लाज रो कोट उज्जेणि लडि पडि रतन राजा पडे ।।[६]।।१५७।।

वचनिका—तिणि वेळा राजा रैणसाह रा तडळ चुणि विणि लिया । [१] सराँ छडाँ सूँ दाग दिया । [२] नर देह जळाई । [३] अमर देह पाई । [४] ब्रह्मा विसन महेस इन्द्र सुर साथ आया । [५] इन्द्राणी धमळ मगळ गाया । [६] पौहप वरखा करि बधाया । [७] विमाणे पाव धारौ । [८] वैकुंठा पाधारौ । [९] तिणि वेळा राजा रतन वैकुंठनाथ महाराज सूँ कर जोडि अरज करि कहियौ । [१०] महाराज आज री वेढ रा धणी राठौड । [११] राठौडा माँहे हुँईज । [१२]

१५५ [३४] छत्रीस (छ) ।
१५६. सझे (छ), रुडे [तूर] (च) ।
१५७ [१] रतनेसुर (च) ।
[३] सु डिघर गजाँ (छ), अनुहारै (ग) ।
[५] गिरा (ग) ।
[६] लाजलौ (ग) ।
१५८ [१] चुणे (छ) । [२] सार [सराँ] (ग), सर वडालां (छ) । (७) (छ) प्रति मे इस वाक्य से पूर्व —'देवताये' । [१०] त्यै [तिणि] (छ) । [११] ज महाराज (ग) ।

उसके (रतनसिंह के) शरीर पर तीन सौ बाण तथा छब्बीस भाले ऐसे लगे है मानो पर्वत पर बाँस उगे हुए शोभित हो।

यो जोधावत रतन युद्ध-भूमि मे गिरा तब उसके शरीर पर खड्ग के अस्सी घाव लग चुके थे।१५५॥

तब रतनसिंह मर कर गिर पडा और युद्ध समाप्त हो गया। औरंगजेब मैदान मे अडा रहा। उस समय नौबत और तुरहियाँ बजी और यह दृश्य देखने को सूर्य अपने सजे हुए रथ मे खडा रह गया॥१५६॥

युद्ध-भूमि मे राव, रावत, नरेश्वर, घोड़े और गज-राज मर कर गिर पडे। खान, उमराव, भूरे मुगल और मीर गिर पडे। सजे हुए हाथियो के धड़ गिर पड़े। ये सब ऐसे लगे मानो किसी बजारे (वणिक) ने अपना सार्थ रोका हो। गढपति और छत्रपति भी गिर पडे और उन्होने अपने यश का चन्दनामा लिखाया। लज्जा का दुर्ग राजा रतन भी उसी युद्ध-भूमि मे लड कर गिर पडा॥१५७॥

उस समय राजा रतनसिंह के अंग-प्रत्यंग चुन कर एकत्र किये गये। बाणो और भालो के डण्डो से उनका दाह-संस्कार किया गया। उसका नर-देह जल गया। तब उसे अमर देह प्राप्त हुई। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र और देवताओ के समूह आये। इन्द्राणी ने धवल मंगल पुष्पो को वर्षा करके बधावा किया। (उन्होने कहा) "विमान पर पैर रखिये, वैकुण्ठ पधारिये।" उस समय राजा रतन ने महाराज वैकुण्ठ-नाथ (विष्णु भगवान) से प्रार्थना कर के कहा, "महाराज, आज के युद्ध के स्वामी राठौड़ थे, और उन राठौड़ो मे मै भी था।

१५५ सेल्ह=भाले, गिरव्वर=गिरिवर।
१५६ नीवडै=समाप्त हुआ।
१५७ उणिहारै=अनुहार, स्वरूप, वाळद=साथ, विणिजारै=बजारा, व्यापारी, गरा=समूह, पडि=युद्ध मे।
१५८ छड़ाँ=लकडियो, दाग=दाह। साथ=समूह। वेढ=युद्ध।

मुदै मोनूँ कहियोई ज चाहीजै । [१३] मो साथे वडा वडा गढपति छत्रपति कांमि आया । [१४] हाडा मुकुंदसिघ सरीखा । [१५] गौड अरजन (साल) सरीखा । [१६] सीसोदिया सुजाणसिघ सरीखा [१७] झाला दळथभ सरीखा । [१८] अवर ही छत्तीस वस हिंदू रिणखेत माहे खड विहड हुय पडिया छै । [१९] त्यानूं सरजीत कीजै । [२०] वैकुंठवास दीजै । [२१] इण जाइगा वारह दिनां री मुकाम कीजै [२२] ज्यूं इतरा माहे अगनि सिनान करि सती ही आवै । [२३] महाराज मानी । [२४] हां जी दूलह क्यूं चलै विगर जानी । [२५] वैकुंठनाथ विसक्रमा कूं हुकम किया ज वैकुंठ री रीस आतलोक माहे सोव्रनमै महलायत पैदास करी । [२६] सहर री नाम रतनपुर धरो । [२७] इतरां माहे वात कहतां वार लागै । [२८] वैकुंठ री रीस । [२९] गैव री इच्छा । [३०] सरूप गढ कोट वाजार सतखणा सोव्रनमै आवास । [३१] गोख जौख चित्राम चित्रमाळा देव्रछभा रचाई । [३२] दीठां ही ज वणि आवै । [३३] हो हो भाई भाई । [३४] तिण सहर री पाखती सळिता सरोवर कमोद जळ कमळ सजुगत विराजमान दीसै छै । [३५] हस मोती चुगि चुगि क्रीडा करै छै । [३६] वडा वडा आराम वाग उत्तम द्रुम लता मेवा परिमल सजुगत नाना प्रकार रग सुरग गुलाव विराजमान दीसै छै । [३७] अनेक खग विहगम क्रीळा करै छै । [३८] इणि भांति सूँ राजा रतन नूँ वैकुंठनाथ समीप वेसाणि दीवाणि किया । [३९] अवर ही छत्तीस वस हिंदू सरजीत करि महोला लिया ।

१५८ [१३] मुनो (छ) । [१४] छत्रधारी (च) । [१६] गौड इन्द्र साल (छ) । [१९-२०] (ग) (छ) (ज) प्रतियो मे 'हिन्दू सरजीत कीजै ।' के बीच का पाठ लुप्त । [२४] आ वात श्री महाराज मानी (छ) । [२५] दूल्हण (छ) । [२६] विश्व-कर्मा (ग) (छ), [ज] केवल (च) मे, सेनाणी [रीस] (ग), [सोव्रनमै] (छ) मे लुप्त, पैदा करो (ग) (छ) । [२७] सहरर (ग) । [२८] लागी (च) । [२९-३०] सीकोट जिही गैव रा इच्छया नत्पी (च) । [३०-३१] गैव सरूपी गढ (च) । [३२] जौख झरोख (च), चात्रिम चत्रमाला (छ), [देवछभा] (च) (छ) मे लुप्त । [३४] हो भाई (च) । [३५] तियै (ग), विराजै छै (छ) । [३६] चुणि चुणि (च) (छ), कीला (ग) । [३७] द्रुम (च), वेल [मेवा] (ग) । [३९] दीया [किया] (छ) ।

अत मुझे यह कहना ही चाहिए। मेरे साथ बडे-बडे गढपति, छत्रपति काम आये। मुकुन्दसिह हाडा जैसे। अर्जुन गौड जैसे। सुजानसिह सीसोदिया जैसे। दयालदास झाला जैसे। और भी छत्तीस वशो के हिंदू रण-भूमि मे खड-खड होकर गिर पडे है। उन सब को पुनर्जीवित कीजिए। वैकुण्ठ मे निवास दीजिए। बारह दिन यही पडाव रखिए। जिससे इस बीच मे सतियाँ भी अग्नि-स्नान कर के (सती हो कर) आ जाये।" महाराज (विष्णु) ने यह बात मान ली। बोले, "हाँ जी, बरातियो के बिना दूल्हा क्यो चले।" फिर वैकुण्ठनाथ ने विश्वकर्मा को आज्ञा दी, "वैकुण्ठ ही के समान मृत्युलोक मे सुवर्णमय महल उत्पन्न करो और उस शहर का नाम रतनपुर रखो।" इतने मे ही बात करते जितना समय लगा उससे भी पूर्व वैकुण्ठ के ही समान भगवान की इच्छा के अनुसार सुन्दर गढ, कोट, बाजार, सात मजिलो के सुवर्णमय आवास, गवाक्ष और स्त्रियो के चित्रो से चित्रित चित्रशालाएँ रची गयी। बस देखने से ही उसकी सुन्दरता समझ मे आ सकती है। अरे भाई, उस शहर के निकट ही सरिताओ और सरोवरो मे कुमुद जलकमलो सहित विराजमान दीख रहे है। हस मोती चुग-चुगकर क्रीडा कर रहे है। बडे-बडे उद्यान, उत्तम लता, द्रुम, मेवे, परिमल सयुक्त नाना प्रकार के रग-बिरगे गुलाब विराजमान है। अनेक विहगम पक्षी क्रीडा कर रहे है। इस प्रकार वैकुण्ठनाथ ने राजा रतन को अपने पास बिठा कर दरबार किया। दूसरे छत्तीस वश के हिंदुओ को भी जीवित करके सम्मिलित किया।

१५८ सरजीत=पुनर्जीविन। जाइगा=जगह। अगनि मिनान=सती होकर। बिगर=बिना, बगैर। रीस=रीति। गैब=ईश्वर। सतखणा=सात मजिल के। गोख=गवाक्ष, जोख=स्त्री, योपित्, चित्राम=चित्रित। सळिता=सरिता, सङ्गुगत=सयुक्त। क्रीळा=क्रीडा। बेसाणि=बैठा कर, महोला=सम्मिलित।

[४०] किणि भाँति सूं । [४१] छत्रीस वाजित्र वाजै छै। [४२] गजराज गाजै छै। [४३] लाख लाख रा लाखीक घुरस खाय खाय झपट्टा ले छै। [४४] ब्रह्मा विसन महेश इन्द्र सुर साथै विराजमान हुवा छै। [४५] नव नाथ चौरासी सिद्ध विराजमान हुवा छै। [४६] आप विसन चत्रभुज रूप धारि। [४७] वागा वणाव करि। [४८] सख चक्र गदा पदम धारि। [४९] वैजयन्ती माल। [५०] मोरमुकुट कु डल विसाल। [५१] मदन मोहन। [५२] कमल लोचन। [५३] स्याम सुन्दर ठाकुर विराजमान हुवा छै। [५४] मणि माणिक जडित छत्रपाट सिंघासण विराजमान दीसै छै। [५५] झळलाट करि जगाजोति जागै छै। [५६] चद सूरज वेहू खवासी करै छै। [५७] चौसरा चमर ढुळै छै। [५८] नव लाख नाखित्र माल चिराक झालि खडा रहिया छै। [५९] वारह घण मुँहडा आगै छिडकाव करै छै। [६०] तीन प्रकार री पवन वाजै छै। [६१] सीत मद सुगध अनेक परिमळ जुगति झोला खाय खाय लहरि ले छै। [६२] मुँहडा आगलि आखाडै रभा पातर नट नाटिक सगीत धुनि करि करि दिखावै छै। [६३] ज्यारां मलूक हाथ पाँव कडि धड। [६४] सोळह सिगार रग प्रेम का झड़। [६५] तेज पु ज। [६६] रूप की गज। [६७] काम की कळी। [६८] चख नख चीज। [६९] सुख की सिळाव विरह की बीज। [७०] अैसी उरबसी जैसी अपछरा। [७१] मुँहडा आगलि हाव भाव कटाछ थेइ थेइ ततकार निरत करै छै। [७२] छह राग छत्तीस रागणी सपत सुर भाँति भाँति करि दिखावै छै। [७३] रीझि रीझि राजी हुवै छै। [७४] ग्याँन के गुर। [७५] तिण वेळा इसडी

१५८ [४०] हिन्दू छत्रीस वस (च)। [४१] इणि [किणि] (छ)। [४२] छत्रीस वस (छ)। [४५] [इन्द्र] (ग) (छ) मे लुप्त, दीसै छै (ग)। [४६] (ग) (छ) (ज) मे लुप्त। [४९] [धारि] (छ) मे लुप्त। [५०] [माल] (च) मे लुप्त। [५५] पीठ (च), पाट करि (छ)। [५६] जगती (छ)। [५८] (क) (ग) मे लुप्त। [५९] (ग) मे लुप्त। [६०] मुह आगै (क) (छ)। [६२] सुरभि [सुगन्ध] (ग)। [६३] आगै (क) (ग) (ज)। [६५] रग का (क) (छ), प्रेम की (ग)। [६७] का रूप (ग)। [६८] बीजली की कली (ग)। [७२] मुह आगलि करै छै (क) (छ)। [७३] भाँति करि (क)। [७५] करि (क) (छ)।

कैसे ? छत्तीस बाद्य बज रहे है । गज-राज गर्जना कर रहे है । लाख-लाख रुपये के लाखीक (बहुमूल्य) घोड़े टाप मारते हुए घूम रहे है । ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र और देवताओ के समूह विराजमान है । नव नाथ और चौरासी सिद्ध भी विराजमान है। स्वय विष्णु भगवान चतुर्भुज रूप धारण कर बागा पहन कर सज्जित है। वे शख, चक्र, गदा और पद्म धारण किये है। वैजयन्ती माला, मोर-मुकुट, विशाल कुण्डल आदि धारण कर मदन-मोहन, कमल-लोचन, श्याम-सुन्दर भगवान विराजमान है। मणि-माणिक्य से जटित, छत्र वाले सिहासन पर विराजमान दीख रहे है। उनकी ज्योति उदग्रता से चमक रही है। चन्द्र और सूर्य दोनो खवास का काम कर रहे है। चारो ओर चमर ढुल रहे है। नव लाख नक्षत्रो की माला चिराग पकडे हुए खडी है। बारह मेघ सम्मुख जल छिड़क रहे है। तीन प्रकार का—शीतल, मन्द, सुगन्ध—पवन चल रहा है। वह परिमल के गन्ध मे घूम कर उसकी लहरे ले रहा है। सम्मुख अखाडे मे रभादि नर्त्तकियाँ, नाट्य-सगीत की ध्वनि सुनाते हुए नाटक दिखा रही है। उनके हाथ, पैर, कटि और धड सब कमल के समान सुन्दर है। वे षोडश शृङ्गार किये है। प्रेम के रग की झडी लगी है। वे तेज की पुन्ज है। रूप की आगार है। काम की कलियाँ है। चक्षु से नख पर्यन्त सुन्दर है। सुख के शील वाली है। विरह की बिजली है। ऐसी उर्वसी जैसी अप्सराएँ मु ँह के आगे हाव-भाव कटाक्ष करती हुई थेइ-थेइ नृत्य कर रही है। छह रागो, छत्तीस रागिनियो और सप्त स्वरो के भाँति-भाँति के प्रयोग दिखा रही है। ज्ञान के गुरु उसे सुन रीझ-रीझ कर प्रसन्न हो

१५८ घुरस = टाप (घोडे की)। खवामी = सेवकाई। चौसरा = चारो ओर। झालि = पकड कर। पातर = नर्तकी। मलूक = कमल, कडि = कटि। सिळाव = शीलवती, बीज = बिजली। गुर = गुरु।

वेढ री डाकणि वात घोडा चढि चढि दसो दिसि चाली । [७६] उज्जेणि राजा रतन कामि आया । [७७] साहि छळि दिल्ली । [७८] इसडी आवाज महा सतियाँ रै कानि आई । [७९] महाराज रयण साह रा अतेउर हरि हरि करि ऊठी वळण । [८०] सकति रूप वाई । [८१] कुँण कुँण । [८२] कछवाही राजावति पतिव्रता अतिरूपदे । [८३] पुरुसोत्तमसिघ दुरजणसिघौत री सारधू । [८४] देवडी रयणसुखदे । [८५] चाँदा प्रिथीराजोत री सारधू । [८६] कछवाही राजावति गुणरूपदे । [८७] मोहकमसिघ प्रेमसिघौत री सारधू । [८८] कछवाही सेखावति सुखरूपदे । [८९] पुरुसोत्तमसिघ तोडरमलौत री सारधू । [९०] इणि भाँति सूँ च्यारि राणी त्रिण्हि खवासि । [९१] गगाजळ सिनान करि । [९२] हीर चीर चामीर । [९३] सोळह सिंगार परिमल पहरि । [९४] पाँन कपूर खाइ । [९५] दान पुन करण लागी । [९६] तिणि वेळा अवर ही राजलोक देखि देखि कहै छै । [९७] थे तौ आबू आँबेर ऊजळा करि वैकुठ महाराज पासि चाली । [९८] हो बाई वड भागी । [९९] इतराँ माहै वात करताँ वार लागै । [१००] लहरि दरियाव हळोहळ महा सरवर री पाळि अगर चदन रा घर वणाया । [१०१] इतरा माहै आकास सूँ सोव्रनमै विवाँण पिणि आया । [१०२] ॥१५८॥

छद त्रोटक — तिण वार त्रिया रतनेस तणी ।
विधि साहस सोळ सिँगार वणी ॥ [१]
पग हाथ मलूक ज पकजय ।
गुणि छत्तिय गत्ति विन्है गजय ॥ [२]

१५८ [७६] डाकणि [घोडा] (क), दिसि विदिसि कूँ (क) (छ) । [७८] साहिब दिल्ली (च) । [७९] माभली [रै] (क) (छ) । [८०] [रा] (क) मे लुप्त, अतैवा (ग) (च) (छ) । [८३] पतिभ्राता (च), [राजावति] (क) मे लुप्त, [अतिरूपदे] (क) (ग) (छ) मे लुप्त । [८४] मुहकमसिघ [पुरुसोत्तमसिघ] (च) । [८५-८६] (क) मे लुप्त । [८९] [कछवाही] (ग) मे लुप्त । [९१] [इणि भाँति सूँ] (क) मे लुप्त । [९३] [हीर] (च) मे लुप्त, चीर चमार (च) । [९३-९५] हीर चीर चामीर सरीर (छ), पहाई परिमल सुधामुवास लगाय (क) (छ) । [१००] कहता (क) (च) । [१०१] हलेहल (च) । [१०२] [पिणि] (क) (ग) (छ) (ज) मे लुप्त ।

१५९ [१] साहसवे (क) (छ) ।

रहे है। उसी वीच इस युद्ध का समाचार ले जाने वाली डाक वाली स्त्रियाँ घोडो पर चढ कर दसो दिशाओ मे चली। दिल्ली के शाह के लिए लडता हुआ राजा रतन उज्जैन मे काम आया। यह आवाज महा सतियो के कानो मे पडी। तो महाराजा रतन के अन्त पुर की शक्ति-रूप स्त्रियाँ 'हरि हरि' कह कर जलने के लिए उठी। कौन-कौन? पुरुषोत्तमसिह दुर्जनसिहोत की पुत्री पतिव्रता राजावति अतिरूपदे, चाँदा पृथ्वीराजोत की पुत्री देवडी रैणसुखदे, मोहकमसिह प्रेमसिहोत की पुत्री कछवाही राजावति गुणरूपदे और पुरुपोत्तमसिंह टोडरमलोत की पुत्री कछवाही शेखावति सुखरूपदे। इस प्रकार चार रानियाँ और तीन खवासिने गगा-जल से स्नान करके, हीरे, चीर और सोने के गहने आदि सोलह शृ गार से सुशोभित तथा सुवासित होकर पान-कपूर खा कर दान-पुण्य करने लगी। उस समय अन्य राज-परिकर देख-देख कर कहने लगा—"हे बाई! आप तो वहुत बडभागिनी है जो आवू और आमेर का नाम उज्ज्वल कर वैकुण्ठ मे महाराजा रतन के पास जा रही है।" इतने मे—वात करने मे—जितना समय लगे उससे भी कम समय मे लहरो के हिलोरे लेते हुए महा सरोवर के किनारे अगर और चन्दन का घर (चिता) बनाया गया। इतने मे आकाश से सुवर्ण-मय विमान आया॥१५८॥

उस समय रतनेस की पत्नियाँ विधि-पूर्वक षोड़श शृङ्गार से विभूषित थी।

उनके सुन्दर पैर और हाथ कमल-तुल्य थे। उनके गुणी उरोज दो गज-कुम्भो के तुल्य थे।

१५८ अतेउर=अन्त पुर। सारधू= पुत्री। खवासि=उपपत्नी। चामीर=स्वर्ण। हळोहळ=हिल्लोलमय। पिणि=भी।

१५९. सोळ=सोलह। गत्ति=तरह, विन्है=दो।

कटि सिंघ नितंब जँघा कदली ।
चित नित्त प्रवित्त मराल चली ॥ [३]
तन रंभह खंभ कनक तिसी ।
ओपै सिरि नागेन्द्र वेणि इसी । [४]
वनिता मुख पुंनिम चंद वणी ।
भ्रिँग भ्रूंह चखाँ भ्रिग रूप भणी ॥ [५]
कँठ कोकिळ दंत अनार कळी ।
अग्र नवक अळक्क कळा उजळी ॥ [६]
आभूसण अंग सुचंग इसा ।
जगमग्गय नक्ख नखत्र जिसा ॥ [७]
सिख नक्ख लगै सिणगार सजी ।
लज लोक तजे विधि रत्ति लजी ॥ [८]
कुळवंति पतीवरता किहडी ।
उधरै पख च्यारि जिसा इहडी ॥ [९]
घुरिया घण वाजित्र घाव घणूँ ।
तिण वार त्रियाँ वधि रूप तणूँ ॥ [१०]
चित भाम सुराम सँभारि चली ।
भ्रिंग मोह सँसार तियार भली ॥ [११]
मिळिवा प्रिय त्रीय सभै मरण ।
करुणा सहि लोक लगा करण ॥ [१२]

१५९ [३] [नितम्ब जघाकर] (ग) मे लुप्त पर हाशिये मे दिया है, कतली (च); म्रिणाल (ग) (ज), मृदाल (छ), वली (क), वणी (छ) ।
[४] कलक (च), विणि (च) ।
[५] भ्रमचखी (ग) (छ) ।
[६] कवलोकिल (ग), नवख अलक्ख (क) (छ) ।
[७] तन [अग] (छ), नग (क) (छ) ।
[८] जिसभी (क), जललोक (ग), सत्त भजी [रत्ति लजी] (क), सक्तु लजी (ग) ।
[९] कुलवतिय (च), किसडी (च), इसडी (च) ।
[११] नाम [भाम] (क) (छ), नयार (क) ।
[१२] त्रिया (छ), करणी (छ) ।

उनकी कटि सिंह की सी थी और नितब तथा जँघाये केले के खम्भे सदृश। वे सदा पवित्र मन वाली रानियाँ हस के समान चली।

उनका स्वर्णिम शरीर केले के खम्भे जैसा था। उनके शिर पर नाग जैसी वेणी सुशोभित थी।

उन वनिताओ का मुख पूर्णिमा के चन्द्र जैसा था। भौहे मृग-जैसी और नेत्रो का रूप भी मृग-जैसा था।

कण्ठ कोकिल के से थे और दांत अनार की कली के समान। नासाग्र पर उज्ज्वल कलाओ वाली अलके थी।

अगो पर अति सुन्दर आभूषण थे और नख नक्षत्रो के समान चमक रहे थे।

वे नख से शिख तक शृङ्गार-सज्जित ऐसी लगती थी मानो उन्होने लोक की लाज छोड कर रति की विधि को अपना लिया हो।

वे ऐसी कुलवती पतिव्रता थी कि उन्होने अपने चारो कुलो का उद्धार कर दिया।

उस समय उनके रूप की वृद्धि देख कर अनेक वाद्य-यन्त्र बजने लगे।

वे स्त्रियाँ चित्त मे अपने पति का ध्यान कर के और ससार के मोह और भ्रम को त्याग कर और उन्हे भूल कर चली।

उन्होने प्रिय से मिलने के लिए मरने की तैयारी की। तब तो समस्त लोक करुणार्द्र हो गया।

१५६ रभह=केला। भणी=कही जाती है। नक्क=नाक, अलक्क=अलकें। किहडो=कैसी, इहडी=ऐसी। घुरिया=बजे। भाम=स्त्री, सुराम=सुरमणी, तियार=त्याग कर।

सुर सत्थ भणै कथ देखि सती ।
जस मींढ न को नर सूर जती ॥ [१३] ॥१५९॥

दूहा — सुर नर मिळिया जात सह पेखै गात प्रवीत ।
तिणि वेळा धनि धनि त्रिया ईख कहै आदीत ॥१६०॥
सती उमग्गे स्त्रग दिसा मोह तजे म्रित लोक ।
टगटग्गी लग्गी तई लग्गा देखण लोक ॥१६१॥
अजुवाळण पख आप रा नारि तजे ग्रिह नेह ।
चढि चचळ सरवर चली मगळ जाळण देह ॥१६२॥

वचनिका — इणि भाँति सूँ च्यारि राणी त्रिण्ह खवासि द्रव्य नाळेर उछाळि वळण चाली । [१] चचळाँ चढि महा सरवर री पाळि आइ ऊभी रही । [२] किसडी ही क दीसै । [३] जिसडौ कीरतियाँ रौ झूँबको । [४] कै मोतियाँ री लडी । [५] पवगाँ सूँ उतरि महा प्रवीत ठौडि ईसर गौरिज्या पूजी । [६] कर जोडि जोडि कहण लागी । [७] जुग जुग औ ही ज धणी देज्यौ । [८] न माँगाँ वात दूजी । [९] पछै जमी आकास । [१०] पवन पाणी । [११] चद सूरज नूँ । [१२] प्रणाम करि । [१३] आरोगी दोळी परिक्रमा दीन्ही । [१४] पछं आप रै पूत परिवार नै छेहली सीख मति आसीस दीन्ही । [१५] ॥१६३॥

दूहा — म्रित मदर पैठी मल्हपि वैठी अदर आइ ।
हरि हरि हरि तिण वार हुइ लै सुरमुक्ख लगाइ ॥१६४॥

१५९ [१३] हत्थ (क) (छ), सती [जती] (क) ।
१६० पवित्र (क) ।
१६१ महे (ग), तरे [तई] (ग), जोवण [देखण] (ज) ।
१६२ जगलि वळि [सरवर चली] (च) ।
१६३ [१] राणी च्यार तीन (छ), करि [वळण] (ग) । [३] कैसी (च), [ही क] (ग) मे लुप्त । [४] जैसी (च), कृत्तिका (क) (ग) (छ), झूवखो (क) (छ) । [५] [कै] (क) (छ) मे लुप्त । [६] मोड [ठौडि] (छ) । [८] महाराज जुगजुग (क), धणी वही ज (क) (छ) । [९] मागी का वात (ग) । [१४] दीधी (क) (च) (छ) । [१५] [आसीस] (च) मे लुप्त, दीधी (क) (छ) ।
१६४ मगलि [मदर] (छ), इदर (ग) (छ) ।

सतियो की इस कथा को देख कर सुर-समूह कहने लगा कि शूर अथवा यति भी इनके यश की बराबरी नही कर सकते ॥१५९॥

सुर, नर सभी एकत्र होकर सतियो के पवित्र शरीर को देखने लगे। उस समय उन स्त्रियों को देख-देख कर सूर्य धन्य-धन्य कहने लगा। ॥१६०॥

सती मृत्यु-लोक का मोह छोड़ कर स्वर्ग की ओर उमग सहित देख रही थी। उस समय लोग टकटकी बाँध कर उन्हे देखने लगे ॥१६१॥

नारियो ने अपने वशो को उज्ज्वल करने के लिए घर का स्नेह छोड दिया और वे अपनी मगल-देह जलाने के लिए घोडे पर चढ कर सरोवर को चली ॥१६२॥

इस प्रकार चार रानियाँ और तीन खवासिने द्रव्य और नारियल उछाल कर जलने चली। घोड़ो पर चढ कर महा सरोवर के किनारे आ कर खडी हुई। वे कैसी दिखाई दे रही थी। मानो कृत्तिका नक्षत्र का झूमका हो। अथवा मोतियो की लडी हो। घोडो से उतर कर महा पवित्र स्थान पर उन्होने शिव-पार्वती का पूजन किया। हाथ जोड कर वे कहने लगी, "युग युग मे यही पति दीजिए। दूसरी कोई बात हम नही माँगती।" तत्पश्चात् पृथ्वी, आकाश, पवन, जल, सूर्य और चन्द्रमा को प्रणाम कर उन्होने चिता के चारो ओर घूम कर परिक्रमा दी। फिर अपने लड़को और परिवार वालो को अतिम सीख और आशीश दी ॥१६३॥

तब वे उछल कर चिता मे प्रविष्ट हुई और उसके अन्दर जा कर बैठ गयी। उन्होने तीन बार 'हरि-हरि-हरि' कहा और आग लगा ली। ॥१६४॥

१५९ मीँढ = बराबरी।

१६० पेखै = देखते है, ईख = देख कर।

१६२ पख = कुल।

१६३ चचळाँ = घोडे, पाळि = किनारा। झूँबको = गुच्छा। गोरिज्या = गौरी। आरोगी = चिता, दोळी = चारो ओर। छेहली = अन्तिम।

१६४ सुरमुक्ख = अग्नि।

हा हा कार पुकार हुइ राम राम भणि राम ।
घणूं कहर वीती घडी जहर लहर विधि जाम ॥१६५॥

गाहा चौसर — कँत म्रित वात सुणे कुळवती ।
करि हरि हरि जोहरि कुळवती ॥
कुंदन तन होमे कुळवंती ।
कीधा चँदनामा कुळवती ॥१६६॥

गाहा दुमेळ — इम अँग होमि विमाणे आई ।
आगै सुर त्रिय साँम्ही आई ।
करि बौह कोड पौहप वरिखा करि ।
सामि मिळण चाली सझि सुंदरि ॥१६७॥

वचनिका — तिणि वेळा गैब री आवाज आकासवाणी कहियौ । [१] महाराज रैंणसाह वधाई वधाई । [२] अगनि सिनान करि सती पिणि आई । [३] ब्रह्मा विसन महेस इंद्र सुर साथे सुर-त्रियाँ नूँ कहियौ ज । [४] महा सतियाँ साँम्ही जावौ । [५] धमळ मंगळ पौहप वरिखा करि वधावौ । [६] ॥१६८॥

दूहा — सावित्री उमया स्त्रिया आगै साम्ही आइ ।
सुंदर मंदर सोव्रनै अंदर लई वधाइ ॥१६९॥
हुवा धमळ मंगळ हरख वधिया नेह नवल्ल ।
सूर रतन सतियाँ सरस मिळिया जाइ महल्ल ॥१७०॥
औसर नरपुर उद्धरे वैकुंठ कीधा वास ।
राजा रैणाइर तणौ जगि अविचळ जस वास ॥१७१॥

१६५ है है कार (क) (छ), ससार [पुकार] (छ) ।
१६६ जोहरि जोहरि (क), जोहरि जमहरि (ग), (च) मे दूसरे चरण के स्थान पर भी चौथा ही, (छ) मे दूसरे के स्थान पर चौथा और चौथे के स्थान पर दूसरा ।
१६७ [इम] (क) मे लुप्त ।
१६८. [२] वधाइ (क) (ग) (छ) । [३] [पिणि] (क) (च) मे लुप्त । [४] [ज] (क) (ग) मे लुप्त । [५] महा सतियाँ नूँ (छ) । [६] केवल (च) प्रति मे ।
१६९ इंद्रँ [अंदर] (क), इंदिरि (च) (ज) ।
१७१. ऊसर नर उधरे (क), ऊसर नावर उधरे (ग), वैसुरवर (च), औसुर (छ) ।

हाहाकार-पुकार हुई और दर्शको ने राम राम कहा। घडी भर मे भारी कहर वैसे ही शान्त हो गया जैसे विष की लहर शात हो जाती है ॥१६५॥

कुलवन्ती जब अपने कत के मरने की बात सुनती है तभी वह 'हरि-हरि' कह कर चिता (जौहर) बना लेती है और अपना स्वर्णिम शरीर होम कर चन्दनामा लिखाती है ॥१६६॥

यो अगो को होम कर जब वे सतियाँ विमानो मे आयी तो देवागनाएँ उनके सम्मुख आयी और उन्होने बहुत प्रेमपूर्वक पुष्प-वर्षा की। तब सुन्दरियाँ स्वामी से मिलने चली ॥१६७॥

उस समय भगवान की आवाज (आकाशवाणी) ने कहा, "महाराजा रतनसिह, बधाई बधाई! अग्नि मे स्नान कर सतियाँ भी आ गयी है।" ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र और सुर-समूह ने देवागनाओ से कहा, "महासतियो के सम्मुख जाओ और धवल-मगल तथा पुष्प-वर्षा करके उनका स्वागत करो।" ॥१६८॥

सावित्री, उमा और रमा सम्मुख आयी और सुन्दरियो का स्वागत कर के उन्हे सुवर्ण के मन्दिरो मे ले गयी ॥१६९॥

धवल-मगल और हर्ष हुआ। नया स्नेह बढा। महल मे जा कर शूरवीर रतन सरस सतियो से मिला ॥१७०॥

राजा रतन ने उपयुक्त अवसर पर नरपुर का उद्धार कर के वैकुण्ठ मे वास किया। उसका यश युगो तक अविचल रहेगा ॥१७१॥

१६५ भणि=कहा।
१६६ जोहरि=जौहर, सती होना, कुदन=स्वर्ण, कीधा=किये।
१६७ होमि=हवन करके, कोड=कामना।
१६८ गैव=ईश्वर, साम्ही=सम्मुख।
१६९ सोव्रनै=सुवर्णमय।
१७० बधिया=बढे।
१७१ अविचळ=स्थिर।

पख वैसाखह तिथि नवमि पनरोतरँ वरस्सि ।
वारि मुकर लडिया विहद हिन्दू तुरक वहस्सि ॥१७२॥
जोडि भणँ खिड़ियौ जगौ रासौ रतन रसाळ ।
सूराँ पूराँ साँभळौ भड मोटाँ भूपाळ ॥१७३॥

वारता — दिलो रा वाका । [१] उज्जेणि रा साका । [२] च्यारि जुग रहसी । [३] कवि वात कहसी । [४] ॥१७४॥

१७२ मास [पख] (क) (छ), नमि (च), लकिया (च) ।
१७४ [१] का [रा] (क) । [४] परम [वात] (क), कथा (ग) ।

स० १७१५ (वि०) मे वैशाख के (कृष्ण) पक्ष की नवमी तिथि को शुक्रवार के दिन हिन्दू और यवन बहुत ललकार कर लडे ॥१७२॥

खिडिया जगा ने रतन का यह रस वाला रासौ काव्य बना कर कह दिया है। इसे अपूर्व शूर-वीर, बडे भट और राजा लोग सुने ॥१७३॥

यह दिल्ली की घटना है। उज्जैन का युद्ध है। चार युग तक इसकी प्रसिद्धि रहेगी और कवि लोग इसकी कथा कहेगे ॥१७४॥

१७२ बहस्सि=ललकार कर।

१७३. रसाळ=रसमय, सांभळो=सुनो।

१७४ वाका=घटना। साका=युद्ध।

परिशिष्ट (१)

गीत रतन महेसदासौत रा जगा खिड़िया रा कह्या[1]

गुण गजेन्द्र मैमत चले कळिजुग्ग सरोवरि।
असत ग्राह तै बीचि तेणि बद्धौ पग चौखरि।
लालचि जलि लीजतौ एक वकि जीव उमग्गे।
करि वखांण वहस्सियौ ताम को प्राण न लग्गे।
कवि भगति चाड माहेस का नर सुरिंद आवै न को।
आचार मूंडि बूडत अगो हरि रतन उव्वारि हो ॥१॥
सुणि पुकार केवार समथ व्रिदाज सँभारे।
असि गुरडि आ रहे वेख नह काइ विचारे।
कवि भगत कारणैं अभग भुज चित्त उपाडे।
सत्त वृत्त राखियौ असत तांतू विव्भाडे।
चक्र मोज वाहि चूडा हरैं व्रवण माल फंद वाढियौ।
महाराजि रतन जुग समँद्र मझि गुण गजेन्द्र इम काढियौ ॥२॥
मिले राति कळिजुग्ग असत अधार निवाहर।
मोह लोह निद्र मै सुको सुत्ता राजेसर।
जस पौहरे घण जांण जोध जोधा छळ जग्गे।
दिये दन सोव्र न ऊंघ उपजस्सन लग्गे।
सभ्रम महेस नव खड सिरि प्रसिध जोति जग पस्सरी।
क्षत्र ध्रम रहे रतनौ क्षत्री किरि चिराक कीरत्ति री ॥३॥

❀ ❀ ❀

जवन आगि भटके घरौ साहिजहां जीवतै
चढै चमके मेदनी वागि चालौ।

१ अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर, मे संगृहीत हस्तलिखित राजस्थानी ग्रंथ "फुटकर गीत" (राजस्थानी०, पृ० ६०, विषयांक १३७) से।

दळ तणा मुदाइत घणा पौह डोलतां
काम रौ मुदाइत हुओ कालौ ॥१॥
माहिजादां चिहुँ आप कलि साल ले
वागि सायाँ मिलण हुवै वाथै ।
तीसरै उमेर दिली रे ताखियो
मेघावत झालियो भार माथै ॥२॥
उजेणी खागि पहले किले आवधे
घणाँ हिंदू तुरक छात घाया ।
रतन रिणि रहै राजधरम राखियाँ
अवर राजा प्रजा होइ आया ॥३॥

❀ ❀ ❀

प्रबल गाजि घण बाँण धमसाँण पैला
मडि भाण रथ ताण असमाण भाले ।
नित्रीठो रीठ देवे रतनाखियो
काल झालाँ विचै वेग काले ॥१॥
रयण हिंदवांण सुरताँण बळ राखि
वाहाक करि सेल उप्पाडि हाथे ।
अभिनमै गगरिण जग असि उव्वारियो
मदझराँ हैमराँ नराँ माथे ॥२॥
हर ब्रह्म हरि अरिक अचरजि हुवा
टळटळे धरा फिर आभ टूटो ।
वाहतो रूक गज टूक करतो वडा
जोध हरि जोध जमरूक जूटो ॥३॥
साह छळ साहराँ दळाँ नव साहसैं
विहँड वँड किया वग झाट वाही ।
रूप जोधाँ छळ राखि राजा रतन
माधावत मिले हरि ज्योति माँही ॥४॥

परिशिष्ट (२)

गीत रतन महेसदासौत रौ कवियै स्याम रौ कहियौ[1]

आयौ जदि काम जु तू अतुली
वळ घट भीतर सूं मछर घणां।
माथो लियो वहोडे माथे
ताहरो ईस महेस तणां ॥१॥

भू ऊजरै वळां मारे अंग
मझि सूं सूरतन अति।
उत वगलियो चढाए उत
बंगचाळे थारो ईस चिन ॥२॥

रहियौ ज खेत मारे रिम छाटो
विढे घणां मूं छोह।
मसनक लियौ चढाए मसतक
सकर काज कठ री सोह ॥३॥

पडियौ जदे प्रिसण रिण पाडे
तण काई करि घणी तन।
सिर कंठ बांधि कहे इम सकर
रुंडमाल सुधरी रतन ॥४॥

आखिसु मै वात ए इम हि ज
भाहे मोचो सुरामन।
वणनी केम कठ म्हारे वप
रुंडमाल पाखी रतन ॥५॥

१ अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर, मे सगृहीत हस्तलिखित राजस्थानी ग्रथ "फुटकर गीत" (राजस्थानी०, पृ० ५९, विषयाक १३४) से।

परिशिष्ट (३)

गीत रतन महेसदासौत रौ लिखमीदास गाडण रौ कहियौ

दांतूसळ वजर वजर जमदाढाँ
वाढाँ ऊ गाढाँ विहर ।
असपति नजर भलौ आफळियौ
कुंजर नैनाहर कुँवर ॥१॥

पावाँ रहण वदी पतसाहाँ
सिर दावाँ घावाँ सहँण ।
दारँण रूप वाजिया दारँण
वारँण नै वारँण वहँण ॥२॥

दमँगळ मगळ उडिया चुहुँ दिस
जूटौ जिम ठाकुर जगळ ।
खारीवार गयद सुखहतौ
भारी भुज खेली भग्गळ ॥३॥

मवकर तँणौ घँणै वळ मिलियौ
जिम दमँगळ न किया जतन ।
असपति तखत सार ऊधमियौ
रमियौ हाथाँ सूँ रतन ॥४॥

१ सैनाली (बीकानेर) के उदीयमान साहित्य-सेवी श्री मुकुन्दसिंह के गीत-संग्रह से ।

टिप्पणियाँ

टिप्पणियाँ

(डॉ० रघुबीरसिंह लिखित)

पृ० २, छ० स० २—[६] रिणमल्ल—मारवाड के शासक राव चूंडा का ज्येष्ठ पुत्र। अपने छोटे भाई राव कान्हा की मृत्यु पर उसने मण्डोर पर अधिकार कर लिया और लगभग ११ वर्ष तक (१४२७-१४३८ ई०) मारवाड पर राज्य किया। उसके पुत्र एव उत्तराधिकारी राव जोधा ने जोधपुर के गढ और नगर की स्थापना की थी।

पृ० २, छ० स० ३—इस छन्द मे रतनसिंह के प्राय सारे ही पूर्व-पुरुषो की नामावली उत्क्रम से दी गई है।

[१] दलपति—मारवाड के शासक मोटा राजा उदयसिंह का चौथा पुत्र एव महेशदास का पिता। उसकी विस्तृत जीवनी के लिए देखो—रतलाम०, पृ० ५-१३।

उदयसिंह—मारवाड के प्रतापी शासक राव मालदेव का दूसरा पुत्र जिसे राव चन्द्रसेन की मृत्यु के कोई तीन वर्ष बाद अकबर ने मारवाड का राज्य दिया। वह मोटा राजा के नाम से सुज्ञात था। उसका शासन-काल १५८३-१५९४ ई०।

माल—मालदेव, राव गांगा का पुत्र एव उत्तराधिकारी, मारवाड का प्रतापी शासक (१५३२-१५६२ ई०)।

गग—राव मालदेव का पिता और मारवाड का शासक, राव गांगा (१५१५-१५३२ ई०)।

[२] वाघा—राव गांगा का पिता और राव सूजा का ज्येष्ठ पुत्र जो अपने पिता के शासन-काल मे ही मर गया था।

सूजा—राव जोधा का पुत्र जो अपने भाई सातल की नि सन्तान मृत्यु पर मारवाड की गद्दी पर बैठा।

जोध—राव जोधा, राव रणमल्ल का पुत्र एव मारवाड का शासक जिसने जोधपुर के गढ और नगर की स्थापना की।

रिणमाल—राव रणमल्ल। ऊपर छ० स० २ [६] के अन्तर्गत देखो।

[३] चूंडा—राव रणमल्ल का पिता। उसने राठौडो का सगठन कर अपने राज्य को दूर-दूर तक फैलाया।

वीरम—राव चूण्डा का पिता और राव सलखा का तीसरा पुत्र। उसका सारा जीवन सघर्ष और युद्धो मे बीता।

सलख—सलखा, राव तीडा का तीसरा पुत्र। मारवाड की गद्दी पर बैठने पर उसे मुसलमान आक्रमणकारियो का निरन्तर सामना करना पडा था।

[४] छाडा—राव जालणसी का ज्येष्ठ पुत्र और उसका उत्तराधिकारी ।

तीडा—राव छाडा का ज्येष्ठ पुत्र और उसका उत्तराधिकारी ।

[५] धूहड—राव जालणसी का प्रपितामह एव आसथान का ज्येष्ठ पुत्र । कहा जाता है कि उनके समय मे ही राठौडो की कुलदेवी चक्रेश्वरी को मारवाड मे लाकर नागणा मे स्थापित किया गया था ।

आसौ—राव सीहा का ज्येष्ठ पुत्र आस्थान ।

सीह—सीहा, राजस्थान, मालवा आदि के वर्तमान राठौडो का मूल पुरुष ।

[६] महिराण—महेशदास, रतनसिंह का पिता और दलपत का पुत्र । उसकी विस्तृत जीवनी के लिए देखो—रतलाम०, पृ० १५-६७ ।

पृ० ४, छ० स० ४—[४] सिणगार तेरह सखज—तेरह शाखाओ का शृङ्गार अर्थात् राठौड वश की शोभा । राठौड वश की तेरह शाखाएँ मानी जाती थी । तेरह शाखाएँ है— दानेश्वरा, अभैपुरा, कपालिया, कुरहा, जलखेड, बुगलाणा, अहर, पारकेश, चन्देल, वीर, वरियावर, खैरवदा, जयवत । नैणसी०, २, पृ० ४३, ख्यात०, १, पृ० ८, सूरज-प्रकाश, पृ० १६ अ-३६ व ।

पृ० ४, छ० स० ५—[२] महेस नरेस गढ विड्ढि लियौ जिणि देवगिर—शाहजहाँ की आज्ञानुसार उसके सुप्रसिद्ध सेनानायक महावत खाँ ने जब मार्च, १६३३ ई० मे देव-गिरि (दौलताबाद) के किले को जा घेरा और अन्त मे जून, १६३३ ई० मे उस पर अधिकार कर लिया, उस समय महेशदास महावत खाँ की सेना मे नौकर था और इस घेरे एव उस दुर्ग की विजय मे उसने प्रमुख रूपेण भाग लिया था । उस समय की महेशदास की वीरता और सफलता का यहाँ उल्लेख किया गया है । विशेष विवरण के लिए देखो—रतलाम०, पृ० १९-२९ ।

[३] लीध वलक्क धरा—सन् १६४६ मे शाहजादे मुराद के सेनापतित्व मे मुगल सेना ने वल्ख पर चढाई की थी, तब महेशदास भी मुगल सेना के साथ वहाँ गया था और उसने वहाँ उल्लेखनीय वीरता दिखायी थी । रतलाम०, पृ० ५९-६४ ।

[४] सुरताण—मुगल सम्राट् शाहजहाँ ।

जालोर पटै गढ दीध जई—महेशदास को जालौर परगना वतन (निवास-स्थान) के तौर पर अगस्त ३१, १६४२ ई० के दिन दिया गया था । पाद०, २, पृ० ३०९ । कवि का यह कथन कि वल्ख की चढाई मे दिखायी गयी वीरता और वहाँ प्राप्त सफलता के फलस्वरूप जालोर का परगना महेशदास को दिया गया था, भ्रमपूर्ण है । वल्ख की यह उल्लेखनीय चढाई जालोर परगना प्राप्त होने के तीन वर्ष बाद ही हुई थी । वल्ख और बदकशा की राजनीतिक परिस्थिति से परिचित होने और उसे अधिक पास से देखने-सुनने के लिए शाहजहाँ सन् १६३९ ई० मे अवश्य ही काबुल तक गया था और बगष होता हुआ लौट आया था, किन्तु उस बार न तो वल्ख पर कोई चढाई ही हुई और न कोई युद्ध ही । काबुल-बगष की इस यात्रा के समय महेश-दास भी शाहजहाँ के साथ था एव सम्भवत कवि को स्मृति-भ्रम हो गया होगा । रतलाम०, पृ० ४१-४२ ।

[६] कर्णगिरि—स्वर्णगिरि अथवा सोनगिरि, जो साधारणतया जालौरगढ के नाम से सुज्ञात है।

पृ० ६, छ० स० ६—सुज्जो—शाहजहाँ का दूसरा पुत्र शाह शुजा।

पृ० ६, छ० स० १०—सिव जसो—जोधपुर का महाराजा जसवन्तसिंह।

जैंसिघ—आम्बेर का महाराजा मिर्जा राजा जयसिंह।

पृ० ६, छ० स० १२—मांन पोतो—शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र, शाहजादे दारा शिकोह का बडा लडका सुलेमान शिकोह।

पृ० ८, छं० सं० १५—[२] कूरिमां—कछवाहे राजपूत। धरमत के युद्ध के समय तो कोई प्रमुख कछवाहा सरदार जसवन्तसिंह की सेना मे नही नियुक्त किया गया था।

सीसोदियाँ—इस युद्ध के समय सीसोदिया सेनानायक भी ससैन्य जसवन्तसिंह की सेना मे नियुक्त किए गए थे, जिनमे शाहपुरा का सुजानसिंह सीसोदिया एव महाराणा अमरसिंह के पुत्र महाराज भीम का पुत्र राजा रायसिंह सीसोदिया प्रमुख थे। सुजानसिंह तो इस युद्ध मे खेत रहा, किन्तु इस युद्ध को बिगडते देख कर रायसिंह सीसोदिया युद्ध-क्षेत्र से भाग निकला।

[३] हाडा—कोटा का शासक राव मुकुन्दसिंह हाडा भी जसवन्तसिंह की सेना मे ससैन्य नियुक्त किया गया था। अपने छोटे भाई मोहनसिंह, जुझारसिंह और कन्हीराम के साथ मुकुन्दसिंह इस युद्ध मे खेत रहा।

गौड—गौड राजपूतो की सेना का प्रमुख था राजा विट्ठलदास गौड का दूसरा पुत्र अर्जुनसिंह गौड, जो धरमत के युद्ध मे वीरतापूर्वक लडता हुआ खेत रहा।

जादव्व—यादव अथवा भाटी कुल के किसी प्रमुख सेनानायक की इस सेना के साथ नियुक्ति का कोई उल्लेख नही मिलता है।

झाला—गगधार का रावत दयालदास झाला भी ससैन्य जसवन्तसिंह की सेना मे नियुक्त किया गया था। रावत दयालदास और उसका छोटा भाई राघोदास धरमत के युद्ध मे खेत रहे थे। ख्यात०, १, पृ० २०७।

पृ० १०, छ० स० १६—हसतिमार—गजो का हन्ता, रतनसिंह। कौमार्य-काल मे रतनसिंह ने फहरकोह नामक शाही हाथी को आहत कर उसका दमन किया था। उस घटना की ओर यहाँ सकेत है। रतलाम०, पृ० ५०-२।

पृ० १६, छ० स० ४०-४२—धरमत के युद्ध से पहले औरगजेब और मुराद का सन्देश लेकर ब्राह्मण दूत कविराय जसवन्तसिंह के पास उज्जैन पहुँचा था, एव यो जसवन्तसिंह को समझा-बुझा कर उसके विरोध का अन्त करने का जो विफल प्रयत्न किया गया था, उसी घटना का यहाँ उल्लेख किया गया है। औरग०, १-२, पृ० ३४६, रतलाम०, पृ० १५४।

पृ० १६, छ० स० ४३—[२] वलू—बलराम दयालदास कल्याणदास ऊदावत राठौड। इस समय बदनौर (मेवाड) का परगना उसके पट्टे मे था। शाहजहाँ ने यह परगना मेवाड मे जब्त कर महाराजा जसवन्तसिंह (जोधपुर) को दे दिया। बलराम के साथ ही उसके दो पुत्र, कुम्भा और आसकरण, भी इस युद्ध मे सम्मिलित हुए थे, और

तीनो इस युद्ध मे खेत रहे। ख्यात०, १, पृ० २१०-१, वीर०, २, पृ० ४१३-४, रेऊ०, १, पृ० २१६ टि०।

गोवरधन—राठौड गौरधन चाँपावत कूँपावत, चण्डावल का ठाकुर। वह शाही मनसबदार भी था। धरमत के युद्ध के समय उसका मनसब एक हजारी जात—५०० सवार का था। वह धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २०८, कम्बू०, ३, पृ० ४६७।

पृ० १८, छ० स० ४३—[३] माहेस—महेशदास दलपतोत राठौड का पुत्र एव इस वचनिका का चरित्रनायक रतनसिह, जो रतलाम का शासक था। इस ग्रन्थ मे यह शब्द इसी अर्थ मे अन्य स्थलो पर भी प्रयुक्त हुआ है, जैसे छ० स० ४४, ४५ [२५]।

[४] पीथल—राठौड पृथ्वीराज दलपत हरदासोत करमसोत, पीपाड का ठाकुर, वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २११।

क्रन्न—राठौड करण सुजानसिह भगवानदासोत जेतावत, बगडी का ठाकुर, वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २११।

उदिल्ल—राठौड उदैसिह रामसिह बलुग्रोत भारमलोत। वह भी इसी युद्ध मे मारा गया। ख्यात०, १, पृ० २०८।

मधुकर—राठौड महेसदास सूरजमलोत चाँपावत। वह कुछ वर्ष तक महाराजा जसवन्तसिह का प्रधान मन्त्री भी रहा था। वह शाही मनसबदार भी था धरमत के युद्ध के समय उसका मनसब एक हजारी जात—५०० सवार का था। धरमत के युद्ध मे से जब महाराजा जसवन्तसिह को रवाना किया गया तब उसके साथ जोधपुर लौटने वाले प्रमुख व्यक्तियो मे यह महेशदास भी था। ख्यात०, १, पृ० २५३, कम्बू०, ३, पृ० ४६७।

[५] जगराज—राठौड जुगराज कुम्भकरण बाघोत जेतावत। वह भी इस युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २११।

रूघा—रघुनाथ भाटी, गोयन्द पचायणोत कैलणोत भाटी का पौत्र। वह धरमत के युद्ध मे घायल हुआ था। नैणसी०, २, पृ० ३६६, ख्यात०, १, पृ० २१४, २२२।

गिरधर—राठौड गिरधरदास मनोहरदास भाणोत चाँपावत। आउवा उसके पट्टे था। वह भी इस युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २०६।

पृ० १८, छ० स० ४५—इस छन्द मे मारवाड के कुछ नरेशो और राठौडो की उन शाखाओ के मूल पुरुषो की नामावली दी गई है जिनके वशज धरमत के युद्ध मे सम्मिलित हुए थे।

[३] सूरिजमल (सूजा), गग, बाघ, सलक्ख और रिणमल्ल के लिए पहले छ० स० ३ के अन्तर्गत देखो।

[४] चांपा—राव रणमल्ल का पुत्र और राव जोधा का भाई। उसके वशज चाँपावत कहलाये। पोकरण, आउवा, और रोहट के ठाकुर चाँपावत शाखा के राठौड है।

कूँपा—राव रणमल्ल के पुत्र और राव जोधा के भाई अखेराज के बडे लडके

मेहराज का पुत्र कूंपा। उसके वशज कूंपावत कहलाए। आसोप, कटालिया और चण्डावल के ठाकुर कूंपावत शाखा के राठौड हैं। ख्यात०, १, पृ० ३७, ओझा०, १, पृ० २५५।

जैत—राव रणमल के पुत्र और राव जोधा के भाई अखेराज के छोटे लडके पचायण का पुत्र जेता। उसके वशज जेतावत कहलाए। बगडी के ठाकुर जेतावत शाखा के राठौड है। ख्यात०, १, पृ० ३७, रेऊ०, १, पृ० ११७ टि०।

पृ० २०, छ० स० ४५—[५] गोदो—गोरधन। देखो पहले छ० स० ४३[२] के अन्तर्गत।

वीठल—राठौड विट्ठलदास गोपालदास मांडणोत चांपावत, रिणसी गांव उसके पट्टे था। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २०८।

क्रन—कर्ण। देखो पहले छ० स० ४१ [४] के अन्तर्गत।

धूहड—राव धूहड के वशज अर्थात् राठौड के अर्थ मे यह शब्द यहाँ प्रयुक्त हुआ है। धूहड के लिए पहले छ० स० ३ [५] के अन्तर्गत देखो।

[६] बलू दलाउत—बलराम दयालदासोत ऊदावत। उसके दोनो पुत्रो आदि के लिए पहले देखो छ० स० ४३ [२] के अन्तर्गत।

ऊदल—राव जोधा का पौत्र और राव सूजा का पुत्र ऊदा, जिससे मारवाड के वर्तमान ऊदावतो की शाखा प्रारम्भ हुई। ऊदा को तब जेतारण का परगना मिला था एव उसके वशज आगे भी उसी प्रदेश मे बने रहे। नीमाज, रायपुर, रास आदि के ठाकुर इसी ऊदावत शाखा के राठौड हैं। ओझा०, १, पृ० २७०, १८१ टि०, ख्यात०, १, पृ० ५६।

[७] जेतारण—अजमेर से ४६ मील दक्षिण-पश्चिम तथा जोधपुर से ५७ मील पूर्व मे स्थित नगर, जो इसी नाम के परगने का केन्द्र है।

[८] क्रमा—करमसी, राव जोधा का पुत्र। उसके वशज करमसोत (कर्मसीहोत) कहलाए। खीवसर के ठाकुर इसी शाखा के राठौड हैं। ओझा०, १, पृ० २५२, ख्यात०, १, पृ० ४७।

गिरवर—गिरधरदास माधोदास करमसोत राठौड। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २११।

पीथलिया—पृथ्वीराज दलपत हरदासोत करमसोत राठौड। पीपाड उसके पट्टे था। वह भी इस युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २११।

[९] ऊदौ जेता—उदयभान भगवानदास नाथोत जेतावत राठौड। वह भी इस युद्ध मे मारा गया था। ख्यात०, १, पृ० २११।

जगौ जेता—जुगराज जेतावत। देखो पहिले छ० स० ४३[५] के अन्तर्गत।

[१०] गिरधारी—देखो पहिले छ० स० ४३[५] के अन्तर्गत 'गिरधर'।

[११] सूजौ केहरि तण—केहरी (केसरी) के पुत्र सूजा (सूरजमल) का नाम धरमत के युद्ध सम्बन्धी किसी भी सूची मे देखने को नही मिलता है।

[१२] [बघव रासो—यहाँ किस रायसिह का उल्लेख है यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है। स्पष्टतया यह उल्लेख रतनसिह राठौड के दूसरे पुत्र रायसिह

सम्बन्धी नहीं है।]

[१३] माधौ—माधोदास केसोदासोत सोनगरा चौहान। वह भी इस युद्ध में खेत रहा। नैणसी०, १, पृ० १६७-८; ख्यात०, १, पृ० २११।

[१४] अखा—अखेराज सोनगरा। वह राण रणधीरोत के वंशज रणधीर का पुत्र था। अखेराज के पुत्र भाण का पुत्र केसोदास उपर्युक्त माधोदास सोनगरा का पिता था। नैणसी०, १, पृ० १६५-७।

पृ० २२, छ० स० ४५—[१५] [केसवदास तणौ—केसवदास का पुत्र (माधोदास सोनगरा)। यह केसोदास अखेराज रणधीरोत के पुत्र भाण का बेटा था। नैणसी०, १, पृ० १६५-७।]

[१६] भाटी सुरताणोत—भाटी कुम्भकरण सुरताण रामोत केलण। वह भी इस युद्ध मे खेत रहा। मुरारी०, १, क्रमाक ६८२, पृ० १२०, नैणसी०, २, पृ० ३६५-३६७, ख्यात०, १, पृ० २१३, रतलाम०, पृ० १६१।

रुघो—रघुनाथ भाटी। पहिले छ० स० ४३ [५] के अन्तर्गत देखो।

[१६] खुरसाण मंडोवर—मुगलकालीन सूबा आगरा की अलवर सरकार के अन्तर्गत 'मण्डावर' परगने का मुसलमान शासक। अलवर से कोई २१ मील उत्तर मे स्थित यह स्थान 'मण्डावर' कोई चार सौ वर्ष से भी अधिक काल तक मुसलमान चौहान घराने की राजधानी रहा था, और इधर पहिले अलवर राज्य एव अब अलवर जिले के अन्तर्गत मण्डावर तहसील का केन्द्र-स्थान है।

भूतपूर्व अलवर राज्य के अन्तर्गत अर्ध-स्वतन्त्र नीमराणा राज्य के चौहान घराने की इस ज्येष्ठ शाखा का पूर्व पुरुष चांद खिलजी सुलतानों के समय मे मुसलमान हो गया था एव तदनन्तर उसके मुसलमान वशजो का अधिकार मण्डावर और उसके आसपास के प्रदेश पर बराबर बना रहा। यहाँ उसी मण्डावर के तत्कालीन खान का उल्लेख है जो जसवन्तसिंह की सेना के साथ धरमत के युद्ध मे सम्मिलित हुआ था। किन्तु उसका नाम क्या था तथा इस युद्ध मे वह खेत रहा या नही, इस बारे मे कोई जानकारी प्राप्य नही है।

आईन-इ-अकबरी (अंग्रेजी अनुवाद: सशोधित सस्करण), २, पृ० २०५, मेजर पाउलेट कृत 'गेजेटियर ऑफ अलवर' (१८७८), पृ० १२१, १३९-१४०। इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस, त्रिवेन्द्रम् अधिवेशन (दिसम्बर, १९५८ ई०) मे श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा द्वारा प्रस्तुत परन्तु अप्रकाशित लेख 'न्यू लाइट ऑन दी खिलजी पीरियड'।

[२२] सूजावत मवकर—महेशदास सूजावत (सूरजमलोत) चांपावत राठौड। पहिले छ० स० ४३ [४] के अन्तर्गत देखो।

पृ० २६, छ० स० ४५—[३६] मधुकर—महेशदास सूरजमलोत चांपावत। पहिले छ० स० ४३ [४] के अन्तर्गत देखो।

[४१] मलैगिरि—महेशदास दलपतोत राठौड, रतनसिंह राठौड का पिता।

पृ० २८, छ० स० ४८—[४] मवकर—महेशदास राठौड, रतनसिंह राठौड का पिता।

पृ० ३०, वचनिका स० ४६—[१७] साहिब खांन—साहिब खाँ कुम्भकरण वाघोत जैतावत

राठौड। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २११, रतलाम०, पृ० १६१।

भगवान—शार्दूल सावन्तसिंह मेहकरणोत साँचोरा चौहान का छोटा लडका भगवानदास। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। पचेड (रतलाम) के ठाकुर भगवानदास साँचोरा के ही वशज हैं। ख्यात०, १, पृ० २२३, रतलाम०, पृ० १०२, १७७ टि०, १२६ टि०, नैणसी०, १, पृ० १७६।

अमर—शार्दूल सावन्तसिंह मेहकरणोत साँचोरा चौहान का वडा लडका अमरदास। वह भी धरमत के युद्ध मे मारा गया। दीपाखेडा, महुआ आदि (सीतामऊ) के ठाकुर अमरदास साँचोरा के ही वशज हैं। ख्यात०, १, पृ० २२३, रतलाम० पृ० १०२, १७७ टि०, १२६ टि०, नैणसी०, १, पृ० १७६।

[१८] गाँगावत गिरधर—गिरधरदास किशनदासोत गाँगावत राठौड। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २२३, मुरारी०, १, क्रमाक ६८२, पृ० १२०।

[१६] बारहठ जसराज—बारहठ जसराज वेणीदासोत रोहिडा चारण। वह रतनसिंह राठौड के राजघराने का पोलपात था। वह भी इस युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २०७, रतलाम०, पृ० ११७-८, १२७, २१८।

पृ० ३४, वचनिका स० ५१—[२६] साहिबौ कुभाणी—साहिब खाँ कुभकरण बाघोत जेतावत राठौड। पहिले वचनिका स० ४६ [१७] के अन्तर्गत देखो।

[२७] भगवानदास बाघोत—करण जेतावत का पितामह और उदयभान जेतावत का पिता, साहिब खाँ के पिता कुभकरण बाघोत का वडा भाई। ख्यात०, १, पृ० २११।

पृ० ३४, वचनिका स० ५३—[५] बगडी—अजमेर-अहमदाबाद रेलवे लाइन पर स्थित सोजत रोड स्टेशन से कोई ४ मील उत्तर-पूर्व मे स्थित कस्बा, जो बगडी नामक ठिकाने का मुख्य स्थान और जेतावत राठौडो का प्रमुख केन्द्र था।

[६] रासौ कुँवर—कुँवर रायसिंह, रतनसिंह राठौड का दूसरा पुत्र। धरमत के युद्ध के समय उसकी अवस्था लगभग १७ वर्ष की ही थी, तथापि हठ कर वह इस युद्ध मे सम्मिलित हुआ और वडी ही वीरता के साथ लडता हुआ घायल हुआ। ख्यात०, १, पृ० २०७, रतलाम०, पृ० १११, ११६, ११७, २६४ ६।

पृ० ३६, वचनिका स० ५३—[१२] बारहठ—बारहठ जसराज।

[२८] जाँगडिया—राजाओ का यश-गान करने वाली एक जाति-विशेष का व्यक्ति।

[२६] परिजाऊ दूहा—'परिजाऊ' शब्द सभी प्रकार के वीर रस-पूर्ण काव्य के लिए प्रयोग किया जाता है जिनमे विशेषतया दूसरो की सहायतार्थ या उनकी मान-मर्यादा बचाने के लिए वीरतापूर्ण लडते हुए काम आने वाले योद्धाओ की प्रशसा की गई हो (तेस्सितोरी की टिप्पणी, वचनिका०, पृ० ६६)। यहाँ आगे इसी प्रकार के अनेकानेक वीर-रसोत्पादक काव्यो की सूची दी गई है जो उस समय प्रचलित रहे होगे और युद्धोचित प्रेरणा के लिए तब जिनका पाठ किया जाता होगा। ऐसे काव्यो मे ऐतिहासिक या प्रचलित प्रवादो मे वर्णित घटनाओ का वीर रस-पूर्ण

विवरण होता था।

[३०] घेगडै सांड घवल रा दूहा—धवल सांड सम्बन्धी वीर रस-पूर्ण काव्य। तेस्सितोरी०, पृ० ८१ पर इन दूहो का उल्लेख है। बीकानेर के खजाची सग्रहालय की एक सग्रह-पुस्तक मे तद्विषयक २६ दूहे प्राप्य है।

[३१] एकलगिड वाराह रा दूहा—प्राप्य राजस्थानी काव्य-सग्रहो मे इस शीर्षक या विषय के दोहे देखने को नही मिले। तेस्सितोरी० प्रोज० (२, पृ० ५२) मे 'एकल-गिड वराह डाढाला री वात' का विवरण दिया है, जिसमे सिरोही के वीसलदेव बाघेला के वीरतापूर्ण शूकर-आखेट की कथा वर्णित है। स्पष्टतया उसी आखेट को लेकर उन वीर-रसोत्पादक दोहो की रचना की गयी होगी, जिनका उल्लेख यहाँ वचनिका मे किया गया है।

[३२] मुंज-मारवणी रा दूहा—अपभ्रंश के लेखक मेरुतुंग की 'प्रवन्ध-चिन्तामणि' मे मुंज-मुणालवइ (मृणालवती) विषयक कुछ प्राचीन अपभ्रंश दोहे उद्धृत हैं। सम्भवत यहाँ उन्हीं का निर्देश है।

[३३] राव रिणमल रा दूहा—मारवाड के राव रणमल्ल के लिए ऊपर छ० स० २ [६] के अन्तर्गत देखो। उसके विषय मे बीस दोहे बीकानेर के खजाची सग्रहालय की एक पुस्तक मे प्राप्य हैं। तेस्सितोरी० मे राव रणमल्ल विषयक गाडण पसाइच कृत कवित्त (पृ० ४-५), सिढायच चोभुजा कृत गीत (पृ० ४५) और कोई १४ दोहो का (पृ० ५८) उल्लेख है।

[३४] राव अमर रा दूहा—मारवाड के राजा गजसिह का ज्येष्ठ पुत्र। अपने छोटे भाई जसवन्तसिह के युवराज मनोनीत होने पर राव अमर मुगल सम्राट् शाहजहाँ की सेवा मे पहुँचा और वहाँ शाही मनसबदार बन गया। शाही दरबार मे उसे कुछ कडे शब्द कह देने पर राव अमर ने शाही बख्शी सलावत खाँ को तत्काल मार डाला। तदनन्तर शाही मनसबदारो, गुर्जबरदारो से लडता हुआ वही मारा गया। चारण कवि गाडण केशवदास और भक्त बारहठ रोहडिया नरहरिदास ने राव अमर सिंह सम्बन्धी अनेकानेक दोहो की रचना की थी। मेनारिया०, पृ० ११९-१२०, १५६। तेस्सितोरी० मे पृ० ५५ पर 'अमरसिंघ गजसिंघोत रा दूहा कुण्डलिया,' पृ० ५ पर अमरसिंह विषयक कई कवियो द्वारा रचित गीतो, और पृ० ६२ पर हरिदास भाट कृत रूपक सवैयो का भी उल्लेख है।

[३५] कल्याणमल रायमलोत रा दूहा—राठोड कल्याणमल (कल्ला) रायमलोत, मारवाड के राव मालदेव का पौत्र। अकबर ने रायमल को सिवाणा दिया था, जो उसकी मृत्यु पर उसके पुत्र कल्याणमल को मिला। सन् १५८७ ई० मे अकबर कल्याणमल से अप्रसन्न हो गया एव उसने सिवाणा मोटा राजा उदयसिह को प्रदान कर उसे आदेश दिया कि कल्याणमल को सिवाणा से निकाल बाहर करे। तब सिवाणा की रक्षा करते हुए कल्याणमल वीरतापूर्वक लडा और अन्त मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० ६६, ओझा०, १, पृ० ३६०-१, रेऊ०, १, पृ० १७५-६। तेस्सितोरी० मे राठोड कल्याणमल (कल्ला) की प्रशसा मे आशिया दूदा रचित कुण्डलियाँ

(पृ० ६७) तथा गीत (पृ० १२), और अन्य कवियो के भी गीत एव दोहो (पृ० ५५) का उल्लेख है।

[३६] करण रामौत रा दूहा—दुरगा आढा रचित कोई २६ 'करण रामौत रा दूहा' अनूप लायब्रेरी, बीकानेर, के एक काव्य-सग्रह मे प्राप्य हैं। राजस्थानी०, पृ० ४० (वि०) ६।

[३७] तेजसी डूंगरसीयौत रा दूहा—तेजसी डूंगरसीहोत मेवाड के राणा उदयसिंह का सरदार था, जो हाजी खाँ के साथ हुए हरमाडा के युद्ध मे खेत रहा (जनवरी २४, १५५७ ई०)। नैणसी०, १, पृ० ५६-६०, वीर०, २, पृ० ७१, उदय०, १, पृ० ४०८। इस विषयक नौ दोहे खजाची सग्रहालय के एक सग्रह-ग्रन्थ मे प्राप्य हैं। चारण नैतसी सीलाँगा ने उसकी प्रशसा मे कवित्त भी बनाए थे, जो अनूप लायब्रेरी, बीकानेर, मे प्राप्य एक सग्रह मे मिलते हैं (राजस्थानी०, पृ० ४१, वि० १७)।

[३८] जैमल पत्ता रा दूहा—चित्तौड के तीसरे साके (१५६७-८ ई०) के समय किले की सुरक्षा करने वाले वीर सेनानायक मेडतिया राठोड जयमल वीरमदेवोत और चूण्डावत पत्ता जग्गावत। प्राप्य राजस्थानी काव्य मे जयमल और पत्ता विषयक तत्कालीन दोहे देखने को नही मिले।

[३९] जैता कूंपा रा दूहा—राव जोधा के भाई अखेराज के पौत्र जैता और कूंपा के लिए पहिले छ० स० ४५ [४] के अन्तर्गत देखो। ये दोनो चचेरे भाई राव मालदेव के प्रमुख सेनानायक थे। अन्त मे शेरशाह के साथ जनवरी ५, १५४४ ई० के दिन हुए सुमेल के युद्ध मे दोनो वीर सेनानायक लडते हुए खेत रहे। ख्यात०, १, पृ० ६८-७१, ओझा०, १, पृ० ३०४-३०७। वीठू मेहो ने कूंपा की प्रशसा मे गीत और दोहे बनाए थे। पचाइण अखेराज के पुत्र जेता की प्रशसा मे भी कवित्त बनाए गए थे। ये सब अनूप लायब्रेरी के सग्रहो मे प्राप्य है। राजस्थानी०, पृ० ३७ (२०), ४३ (वि०) ४६ और ५२।

[४०] प्रिथीराज जैतावत रा दूहा—उपर्युक्त राठोड जेता पचाइण अखेराजोत का पुत्र पृथ्वीराज, जो अपने पिता की मृत्यु पर मालदेव का प्रधान और प्रमुख सेनापति बना। वीरमदेव की मृत्यु के बाद जब उसके पुत्र जयमल के अधिकार से मेडता छीन लेने के लिए सन् १५५४ ई० मे मालदेव ने विफल प्रयत्न किया तब पृथ्वीराज जेतावत मालदेव की सेना का सेनानायक था। उस युद्ध मे वह मारा गया। ख्यात०, १, पृ० ७४, ओझा०, १, पृ० ३१४-१६, रेऊ०, १, पृ० १३३-१३५, नैणसी०, १, पृ० ५८, २, पृ० १६१-१६५, उदय०, १, पृ० ४०७। पृथ्वीराज जेतावत सम्बन्धी बारह दोहे खजाची सग्रहालय के एक सग्रह-ग्रन्थ मे प्राप्य हैं।

[४१] गाँगा डूंगरौत रा दूहा—गाँगा डूंगरसिहोत सहाणी, जो धौलहरे (सोजत) मे राव गाँगा के थाने की रक्षा करता हुआ मारा गया था। नैणसी०, २, पृ० १४६-७, ओझा०, १, पृ० २७५-६। तेस्सितोरी०, पृ० ५६ पर 'गाँगे डूंगरसीओत रा दूहा' (कुल स० १५) का उल्लेख है। खजाँची सग्रहालय के एक सग्रह-ग्रन्थ मे भी सात दूहे प्राप्य है।

[४२] अखैराज सोनिगरा रा दूहा—तदर्थ पहिले छ० स० ४५ [१४] के अन्तर्गत देखो। इसे पाली जागीर मे दी गई थी, तब वह मारवाड का सामन्त बन गया। शेरशाह सूर के साथ हुए सुमेल के युद्ध मे जेता और कूँपा के साथ ही अखेराज वीरतापूर्वक लडता हुआ खेत रहा। मेवाड का राणा प्रताप इसी अखेराज का दौहित्र था। ख्यात०, १ पृ० ७०-१, नैणसी० १, पृ० ५६ ६१, १६५, २, पृ० १५५, १५८, रेऊ०, १, पृ० १२४, १३१। अखेराज का पुत्र भोजराज भी अपने पिता के साथ ही सुमेल के युद्ध मे खेत रहा था (ख्यात०, १, पृ० ७१)। खजाची सग्रहालय के एक सग्रह-ग्रन्थ मे अखेराज सोनगरा विषयक २१ दोहे मिलते हैं। तेस्सितोरी० मे खिडिया देदो रचित 'गीत अखैराज सोनिगरै री' (पृ० ११) और 'अखैराज सोनिगरै रा दूहा' स० २० (पृ० ५५) का उल्लेख है। राजस्थानी०, पृ० ३३ (वि० ४) पर कुछ और दोहो का उल्लेख है।

[४३] नगै भारमलोत रा दूहा—नगा भारमल वालावत राठौड राव मालदेव का एक सेनानायक था। मालदेव ने जब सन् १५५४ ई० मे मेडता पर चढाई की तब उसकी सेना मे पृथ्वीराज जेतावत के साथ नगा भारमलोत भी था और उसी युद्ध मे वह भी वीरतापूर्वक लडता हुआ खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० ११०-११२, ७४, दयाल०, २, पृ० ८०-२, वीर०, २, पृ० ७०, रेऊ०, १, पृ० १३३, १३५। नगा भारमलोत सम्बन्धी पांच दोहे खजाची सग्रहालय के एक सग्रह-ग्रन्थ मे प्राप्य है।

[४४] अमरै धरमावत रा दूहा—खिडिया अमर धरमावत मारवाड के शासक राव सूजा के सबसे बडे पुत्र बाघा का मुख्य निजी कर्मचारी था। अपने समय मे वह बहुत ही सुविख्यात था और उसके बाद भी बहुत समय तक उसके बारे मे कई प्रवाद प्रचलित रहे थे। ख्यात०, १, पृ० ५९-६०। 'रतन-रासो' मे अमर धरमावत का उल्लेख उक्त बाघा के दूसरे पुत्र एव मारवाड के शासक राव गांगा के प्रमुख सभासदो मे किया है (रतन-रासो, पृ० ७)। यहाँ उसी अमर विषयक दोहो का उल्लेख जान पडता है। ये दोहे अब भी कही प्राप्य है, ऐसा पता नही लग पाया है।

[४६] सोभा साचौरा वीकमसी रा दूहा—सोभा सांचोरा चौहान वीकमसी सांचोरा के पौत्र राव बजरग के बेटे हीमाल का पुत्र था। नैणसी के अनुसार, "सोभा वडा राजपूत हुआ। उसके आधी सांचोर रह गई थी, आधी गुजरात के बादशाह ने प्रेम मुगल को दे दी थी। जब मुगलो ने गढ मे हत्या की तब उनके साथ युद्ध हुआ, सोभा ने प्रेम को मारा।" नैणसी ने चौहान सोभा के नौ दोहे दिए हैं। नैणसी०, १, पृ० १७३, १८१। आगे छ० स० ११९ के अन्तर्गत भी देखो।

पृ० ५०, छ० स० ५८—[६०] बाफ—बाफता। एक प्रकार का रेशमी कपडा जिस पर कलावत्तू और रेशम की बूटियां भी होती है। यह दो-रुखा भी होता है।

नीलक—नील के गहरे आसमानी रग मे रँगा हुआ कपडा।

पृ० ६२, वचनिका स० ७६—[१] तोग—मुगल साम्राज्य का ध्वज विशेष, जिस पर सुरागाय (याक) की पूँछ के बालो के गुच्छे लगे रहते थे। यह ध्वज मुगल साम्राज्य के उच्च मनसबदारो या पदाधिकारियो को ही विशेष सम्मान के रूप मे प्रदान किया जाता

था। इर्विन दी ग्रार्मी ग्रॉफ इण्डियन मोगल्स, पृ० ३४-३५, ग्राईन-इ-ग्रकबरी (ग्रंग्रेजी ग्रनुवाद सशोधित सस्करण), १, पृ० ५२। तेस्सितोरी को इस शब्द का ठीक ग्रर्थ ज्ञात नही हो सका था।

पृ० ६४, छ० स० ८०—गोवरधन—गोरधन चाँपावत कूँपावत। पहिले छ० स० ४३ [२] के ग्रन्तर्गत देखो।

करनाजल—करण सुजानसिंह भगवानदासोत जेतावत राठौड। पहिले छ० स० ४३[४] के ग्रन्तर्गत देखो।

पृ० ६४, छ० स० ८१—रासौ—कुवर रायसिंह, रतनसिंह राठौड का दूसरा पुत्र। पहिले वचनिका स० ५३ [६] के ग्रन्तर्गत देखो।

पृ० ६४, छ० स० ८२—ग्रमरौ साचोरा—ग्रमरदास साँचोरा, पहिले वचनिका स० ४६ [१७] के ग्रन्तर्गत देखो।

वीठलिया साचोरा—विट्ठलदास किशनदासोत साँचोरा चौहान। वह लिखमीदास का पौत्र था। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २२३, नैणसी०, १, पृ० १७६, रतलाम०, पृ० १६०।

पृ० ६४, छ० स० ८३—माहिब खान—माहिब खाँ जेतावत। पहिले वचनिका स० ४६ [१७] के ग्रन्तर्गत देखो।

पृ० ६६, छ० स० ९३ के बाद—[(१) बापा हरौ—मेवाड के गुहिल वश के मूल पुरुष बापा रावल का वशज।

सुजाण—सुजानसिंह सीसोदिया, जो मेवाड के राणा ग्रमरसिंह प्रथम के छोटे लडके सूरजमल सीसोदिया का ज्येष्ठ पुत्र था। सुजानसिंह शाहपुरा का शासक था। धरमत के युद्ध के समय उसका मनसब दो हजारी जात—८०० सवार का था। ख्यात०, १, पृ० २०८, मा० उ० (हिन्दी), १, पृ० ४३२-३, कम्बू०, ३, पृ० ४६०।

(२) सूजौ सूरजमल रौ सीसोद—सूरजमल का पुत्र सुजानसिंह (सूजौ) सीसोदिया, शाहपुर का शासक।

(३) हाडा पँच पण्डव—माधोसिंह हाडा (कोटा) के पाँच पुत्र।

मोहण—मोहनसिंह हाडा, माधोसिंह का दूसरा पुत्र। वह तब खेत रहा।

भूभारमल—जूभारसिंह हाडा, माधोसिंह का तीसरा पुत्र। वह भी खेत रहा।

कानौ—कन्हीराम हाडा, माधोसिंह का चौथा पुत्र। वह भी खेत रहा।

मुकन—मुकुन्दसिंह हाडा, माधोसिंह का ज्येष्ठ पुत्र ग्रौर कोटा का शासक (१६४८-१६५८ ई०)। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। उस समय उसका मनसब तीन हजारी जात—२००० सवार का था। ख्यात०, १, पृ० २०८, मा० उ० (हिन्दी), १, पृ० ३११-२, कम्बू०, ३, पृ० ४५५।

किसोर—किसोरसिंह हाडा, माधोसिंह का पाँचवां पुत्र। धरमत के युद्ध मे वह घायल हो गया था। सन् १६८१ ई० मे उसे कोटा का राज्य मिला।

(४) मधुकर—माधोसिंह हाडा, कोटा का।]

पृ० ६८, छ० सं० ९३ के बाद—[(५) नरहर—नरहरदास साँवलदासोत झाला। शाही मनसबदार था। शाहजहाँ के शासनकाल मे खाँजहाँ लोदी के साथ हुई लड़ाई मे वह काम आया। तब उसका मनसब ५ सदी ज़ात—२०० सवार का था। नैणसी०, २, पृ० ४७३-४, पाद०, १-ब, पृ० ३२५।

दला झाला—रावत दयालदास नरहरदासोत झाला। उसे गगधार (मालवा) का परगना जागीर मे मिला था। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। इस युद्ध के समय उसका मनसब ९ सदी जात—५०० सवार का था। ख्यात०, १, पृ० २०७, रतलाम०, १०१, वारिस०, २, पृ० १२६-ब।

(६) वीठल—राजा विट्ठलदास गोपालदासोत गौड। शाहजहाँ का विश्वस्त सेनानायक था। सन् १६५१ ई० मे जब उसकी मृत्यु हुई तब उसका मनसब ५ हजारी जात—५,००० सवार का था। मा० उ० (हिन्दी), १ पृ० २३८-२४१।

अजरण गौड—राजा विट्ठलदास गौड का दूसरा पुत्र अर्जुन गौड। धरमत के युद्ध मे वह खेत रहा। इस युद्ध के समय उसका मनसब दो हजारी ज़ात—१५०० सवार का था। ख्यात०, १, पृ० २०७, मा० उ० (हिन्दी), १, पृ० २४१-२४२, कम्बू०, ३, पृ० ४५८।]

पृ० ६८, छ० स० ९४—करनाजल जैत—करण जेतावत, पहिले छ० स० ४३ [४] के अन्तर्गत देखो।

सूज उत—बलराम (बल्लू) दयालदास ऊदावत राठौड। पहिले छ० स० ४३[२] के अन्तर्गत देखो। इस ऊदावत शाखा के राठौडो का आदि पुरुष ऊदा जोधपुर के सस्थापक राव जोधा के पुत्र राव सूजा का पुत्र था, एव यहाँ बलराम को सूजावत कहा गया है।

पृ० ६८, छ० स० ९५—गोवरधन—गोरधन चाँपावत कूँपावत। पहिले छ० स० ४३ [२] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ६८, छ० स० ९६—गोदो—गोरधन चाँपावत कूँपावत।

पृ० ६८, छ० स० ९७—बलू—बलराम दयालदास कल्याणदास ऊदावत राठौड, पहिले छ० स० ४३ [२] के अन्तर्गत देखो।

बेटाँ बिहुँ—बलराम के दोनो पुत्र, कुभा और आमकरण।

पृ० ६८, छ० स० ९८—पाटोधर रायाँसाल—कुँवर रायसिंह, रतनसिंह का दूसरा पुत्र।

पृ० ६८, छ० स० ९९—वीठल—राठौड विट्ठलदास गोपालदास माण्डणोत चाँपावत, पहिले छ० स० ४५ [५] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७०, छ० स० १०२—पाल तणो—गोपालदास माडणोत चाँपावत का पुत्र राठौड विट्ठलदास।

पृ० ७०, छ० स० १०३—भीम—राठौड विट्ठलदास गोपालदास माडणोत चाँपावत का षोडशवर्षीय पुत्र भीम। महाराजा जसवतसिंह की सेना मे नियुक्त होने के लिए वह उम्मीदवार था, वह भी इस युद्ध मे काम आया। ख्यात०, १, पृ० २०९।

पृ० ७०, छ० सं० १०४—गोकल—सोनगरा गोकलदास भाखरसीहोत। यह भाखरसी

अखेराज रणवीरोत सोनगरा के बडे लडके मानसिंह का छोटा पौत्र था। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २१२, नैणसी०, १, पृ० १६५।

जगौ—जगतसिंह राजसिंहोत सोनगरा। यह राजसिंह भाखरसी का छोटा भाई था। धरमत के युद्ध मे जगतसिंह भी घायल हुआ था। ख्यात०, १, पृ० २१२, नैणसी०, १, पृ० १६५।

केस उत—केशोदासोत माधोसिंह सोनगरा। माधोदास सोनगरा के लिए पहले छ० स० ४५ [१३] के अन्तर्गत देखो।

माल—मालदेव। यह मालदेव जालोर के रावल सामन्तसिंह सोनगरा का छोटा लडका और रावल कान्हड देव सोनगरा का छोटा भाई था जो 'मुँछाले मालदेव' के नाम से सुज्ञात था। माधोसिंह केशोदासोत सोनगरा का प्रपितामह अखेराज रण-धीरोत सोनगरा इसी मुंछाले मालदेव का वशज था। इसी कारण इस छन्द मे माधो-सिंह को 'माल हरै' अर्थात् 'मालदेव का वशज' कहा गया है। नैणसी०, १, पृ० १५३, १६५-१६७।

पृ० ७०, छ० स० १०५—मधौ—माधोदास सोनगरा चौहान। पहिले छ० स० ४५ [१३] के अन्तर्गत देखो।

धीर हरौ—रणधीर सोनगरा चौहान का वशज। इस रणधीर का पुत्र अखेराज ही माधोदास सोनगरा चौहान का प्रपितामह था। नैणसी०, १, पृ० १६५, १६७। अखेराज के लिए पहिले छ० स० ४५[१४] और वचनिका स० ५३ [४२] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७०, छ० स० १०७—मधुकर कणियागरौ—माधोदास सोनगरा चौहान।

पृ० ७२, छ० स० १०८—पीथल—राठौड पृथ्वीराज करमसोत। पहले छ० स० ४५ [८] के अन्तर्गत देखो।

जैतै ऊदिल—उदयभान भगवानदास बाघोत जैतावत राठौड। पहिले छ० स० ४५ [९] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७२, छ० स० १०९—जगराज—राठोड जुगराज कुम्भकरण बाघोत जैतावत। पहिले छ० स० ४३ [५] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७२, छ० स० ११०—गिरधारी राठौड—गिरधरदास मनोहरदास चाँपावत राठौड। पहिले छ० स० ४३ [५] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७२, छ० स० १११—कमधज पीथल—राठौड पृथ्वीराज करमसोत। पहिले छ० स० ४५ [८] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७२, छ० स० १११ के बाद—[(१) बली मेडतियाँ—धरमत के युद्ध मे अनेक मेडतिया वीर खेत रहे थे, जिनमे से छ सात सेनानायक वीरो के नाम ख्यातो मे दिये गए हैं। इन सबमे राठौड गोपीनाथ गोकुलदास विशनदासोत प्रमुख था। यह गोपीनाथ इतिहास-प्रसिद्ध वीरवर जयमल मेडतिया के ज्येष्ठ पौत्र विशनदास कल्याणदासोत का पौत्र था। बोरूदा आदि पाँच गाँव उसके पट्टे थे। ख्यात०, १, पृ० २१२, मुरारी०, २, पृ० १८०, २१७-८।

(२) मोहन जगतावत . . बाघ कलोधर—बाघ का यह वशज मोहन जगतावत कौन था, यह निश्चित रूपेण कहना सम्भव नही। प्राप्य सूचियो मे मोहन नामक किसी प्रमुख योद्धा का कोई उल्लेख नही मिलता है।]

पृ० ७२, छ० स० ११२—रघौ भाटी—रघुनाथ भाटी। पहिले छ० म० ४३ [५] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७२, छ० स० ११२ के बाद—[(१) अचलावत महेस—भाटी महेसदास अचलदास सुरताणोत। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १ ,पृ० २१२।

(२) केहरियौ—सम्भवत. भाटी केसरीसिह अचलदास सुरताणोत। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २१२।

(३) जसवत—बहुत करके जसवत पडिहार जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा था (ख्यात०, १, पृ० २२१)। मुरारी० (१, पृ० १०५) मे उसे 'धांधल जसवत ईसरदास' लिखा है।

सहसौ—बहुत करके सहसौ सांवलोत, जो धरमत के युद्ध मे काम आया था। ख्यात०, १, पृ० २२२।]

पृ० ७४, छ० स० ११२ के बाद—[(४) पाल हरै—गोपालदास मांडणोत का पौत्र, राठोड भीम विट्ठलदासोत, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २०६।

(५) मूलौ रायामाल—किस व्यक्ति विशेष का यहाँ उल्लेख किया है, यह निर्धारित नही किया जा सका है। ऐसा कोई नाम प्राप्य सूचियो मे नही मिलता है।

(६) दलौ प्रोहित—राजगुरु पुरोहित दलपत मनोहरदासोत। उसकी वय तब २२ वर्ष की ही थी। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २२०।]

पृ० ७४, छ० स० ११३—भगवानौ चहुवाण—भगवानदास शार्दूलसिहोत साचोरा चोहान। पहिले छ० म० ४८ [४] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७४, छ० स० ११८—अमर चहुवाण—अमरदास शार्दूलसिहोत साचोरा चौहान। पहिले छ० स० ४८ [४] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७४, छ० स० ११६—सोभा वीकमसीह—सोभा साचोरा जो वीकमसी साचोरा का वशज था। पहिले वचनिका स० ५३ [४५] के अन्तर्गत देखो। अमरदास साचोरा का प्रपितामह मेहकरण साचोरा इसी वीकमसी के पौत्र राव वरजाग के बडे पुत्र जयसिह का प्रपौत्र था। सोभा साचोरा का पिता हीमाला राव वरजाग का तीसरा पुत्र था। नैणसी०, १, पृ०, १७३, १७६, १८१।

पृ० ७६, छ० म० १२० के बाद—[(१) वीठलो—चाँपावत राठोड विट्ठलदास गोपालदास मांडणोत। विशेष विवरण के लिए छ० स० ४५ [५] के अन्तर्गत देखो।

(२) वीठड पाँचा हर—चाँपा का वशज (चापावत) विट्ठलदास गोपालदास मांडणोत।]

पृ० ७६, छ० स० १२१—किसनावत वीठल—विट्ठलदास किशनदासोत साचोरा। पहिले छ० स० ८२ के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७६, छ० स० १२२—गांगा हरौ गिरधर—गिरधर गांगावत राठोड। पहिले देखो

वचनिका स० ४६ [१८] के अन्तर्गत।

पृ० ७६, छ० स० १२३—रतनावत रायासिंग—कुँवर रायसिंह, रतनसिंह राठौड का दूसरा पुत्र।

पृ० ७६, छ० स० १२३ के बाद—[(१) सांवल को गिरधारी—सांवल का गिरधारी। किस व्यक्ति-विशेष का यहाँ उल्लेख किया है यह कहना सम्भव नही।]

पृ० ७६, छ० स० १२४-१२६—साहिबो राठोड—साहिब खाँ कुम्भकरण बाघोत जैतावत राठौड। पहिले वचनिका स० ४६ [१७] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७८, छ० स० १२७—चारण वैण उत—बारहठ जसराज वेणीदासोत। पहिले वचनिका स० ४६ [१६] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ७८, छ० स० १३१—हदमाल रो जगो खिडियाँ—हदमाल का पुत्र खडिया जगमाल चारण। वह महाराज जसवन्तसिंह का चाकर था और धरमत के युद्ध में लडता हुआ खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २२०।

पृ० ७८, छ० स० १३३—सुत कलिग्राण भीमाजल मिस्रण—कल्याण का पुत्र मिश्रण भीम। मिश्रण जाति के इस चारण का नाम धरमत सम्बन्धी किसी सूची मे नही दिखाई दिया।

पृ० ७८, छ० स० १३३ के बाद—[(१) सकर को रामेसवर—शकर का (पुत्र) रामेश्वर नामक व्यक्ति कौन था, इसकी कोई भी जानकारी प्राप्य नही है। 'रतन रासो' मे 'रामेसु व्यास' एव 'रामेस ब्रह्म' नामक जिस व्यक्ति का उल्लेख मिलता है, वह सम्भवत उक्त रामेश्वर ही था। परन्तु धरमत के युद्ध मे काम आने वाले व्यक्तियो की किसी भी प्राप्य सूची मे उसका नाम नही मिलता है।]

पृ० ७८, छ० स० १३४—बलिराव रो द्वारो—बल्लूराव चाँपावत का पुत्र द्वारकादास। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २०६, रतलाम०, पृ० १६१।

पृ० ८०, छ० स० १३५—केलपुरो किसन—सीसोदिया किशनसिंह नारायणदासोत शक्तावत। वह भी इस युद्ध मे खेत रहा। वह शाही मनसबदार था और इस समय उसका मनसब ४ सदी—१५० सवार का था। ख्यात०, १, पृ० २०८। नैणसी० (१, पृ० १३) के अनुसार कई दिन कैलपुरे मे रहने से सीसोदिये कैलपुरे भी कहलाते हैं।

पृ० ८०, छ० स० १३६—कुम्भकरण भाटी—कुम्भकरण सुरताण रामोत केलण भाटी। पहिले छ० स० के ४५ [१६] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ८०, छ० स० १३६ के बाद—[(१) बीको नरहरदास—नरहरदास राठौड बीकानेर का, रतनसिंह राठौड का सेनानायक, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २२३।

(२) सीसोदिया सुजाण—सुजानसिंह सूरजमलोत सीसोदिया, शाहपुरा का। देखो छ० स० ६३ के बाद [(१)] के अन्तर्गत।

(३) खांगो—यह शब्द 'सांगो' होना चाहिए। मूल प्रति मे भूल से 'स' के स्थान पर 'ष' लिखा गया होगा, जिससे यह गलत पाठ लिया गया।

सांगा (सांगो), रतनसी (रतनो) और रूपसी, ये तीनो ही मडला नाथा राठौड

के पुत्र थे। वे सब रतनसिंह राठौड के सेनानायक थे और तीनो ही धरमत के युद्ध मे खेत रहे। ख्यात०, १, पृ० २२३।

(४) ईसर कुम्भौ—कुम्भा ईश्वरदासोत सांचोरा चौहान। वह भी रतनसिंह राठौड का सेनानायक था और धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। नैणसी०, १, पृ० १७६, ख्यात०, १, पृ० २२३, रतलाम०, पृ० १६०।

साचोरा बन्धव सगा भांज उत—यहां 'भांज उत' के स्थान पर 'झांज उत' होना चाहिए। भैरू जयसिंहदेवोत के पुत्र झांझण के पौत्र (अत झांझावत) लिखमीदास के पुत्र, दयालदास और नरसिंहदास। ये दोनो भाई धरमत के युद्ध मे खेत रहे थे। नैणसी०, १, पृ० १७६, ख्यात०, १, पृ० २१४।]

पृ० ८०, छ० स० १३७—जैसा—चांपावत भैरू दास का पुत्र जैसा। रेऊ०, १, पृ० १३३, १३४।

वेणीदास—वेणीदास राजसिंह सूरजमलोत जैसावत चांपावत। मुरारी०, १, क्रमाक ६८२, पृ० १२०, ख्यात०, १, पृ० २०६, रतलाम०, पृ० १६१।

पृ० ८० छ० स० १३७ के बाद—[(१) नाहर—धरमत के युद्ध मे खेत रहने वालो की किसी भी प्राप्य सूची मे यह नाम नही मिलता है।

(२) ऊदा हरौ हरराम—ऊदा का वशज हरराम। बहुत करके रतनसिंह का सेनानायक हरराम लखमावत राठौड, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २२३।

(३) सोनगरो आसौ नै सुन्दर—सोनगरा आसा और सुन्दर। धरमत के युद्ध मे खेत रहने वालो की प्राप्य सूचियो मे ये नाम नही पाए जाते है।

(४) वेणो दूदावत पंवार—वेणीदास दूदावत पवार। वेणीदास का पितामह अडवाल सहसमालोत पवार अपनी मासी, राणी लक्ष्मी, के प्रसग से मारवाड आया था (नैणसी०, १, पृ० २४६), एव मारवाड से उसका भी सम्बन्ध बना रहा। वेणीदास इस युद्ध मे घायल ही हुआ था, अतएव ख्यात० आदि मे दी गई सूचियो मे उसका नाम नही मिलता है।]

पृ० ८२, छ० स० १३७ के बाद—[(५) कूरम मांन सामलदास उत—यह मानसिंह सांवलदासोत कछवाहा सम्भवत मुगल सम्राट् अकबर के कृपापात्र रायसल दरबारी के उत्तराधिकारी गिरधरदास के पौत्र सांवलदास का पुत्र होगा। इस सांवलदास के कितने पुत्र थे और उनके क्या नाम थे, इसका कोई उल्लेख नही मिलता है। नैणसी०, २, पृ० ३५। मानसिंह सांवलदासोत कछवाहा के धरमत के युद्ध मे भाग लेने का कोई उल्लेख अन्यत्र कही भी नही मिलता है।]

पृ० ८२, छ० स० १३८—रूपावत मुँहतो सांवल—मेहता सांवलदास रूपसी का। वह ओसवाल जैन था। रतनसिंह राठौड का सेनानायक और कर्मचारी था। वह भी धरमत के युद्ध मे वीरतापूर्वक लडता हुआ खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २२३।

पृ० ८२—छ० स० १३८ के बाद—[(१) हेमावत राजसी—यहां किस राजसिंह हेमावत का उल्लेख किया गया है यह निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता है।

धरमत के युद्ध मे काम आये योद्धाओ की प्राप्य सूचियो मे 'राजसिंह द्वारकादासोत मेडतिया' का नाम अवश्य मिलता है। इतिहास-प्रसिद्ध जयमल मेडतिया के भाई चांदा वीरमदेवोत के पौत्र द्वारकादास गोयन्ददासोत का वह पुत्र था। अपने काका मुरारदास गोयन्ददासोत के साथ ही वह भी इस युद्ध मे काम आया था। ख्यात०, १, पृ० २१७, मुरारी०, २, पृ० २०२।]

पृ० ८२, छ० स० १३९—पचायण ईसर को—सभवत पचायण हरदासोत सेलोत, रतनसिंह राठौड का सेनानायक, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २२३। नैणसी० (१, पृ० १०४) के अनुसार सेलोत चौहानो की एक शाखा का नाम है।

पृ० ८२, छ० स० १४०—चांदा उत भाऊ कमँध—सम्भवत राठौड भावसिंह अजमालोत (जयमलोत ?) मेडतिया, रतनसिंह राठौड का सेनानायक, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २२३, मुरारी०, १, क्रमाक ६८२, पृ० १२०।

पृ० ८२, छ० स० १४१—रामो निरवाणि—सम्भवत रामदास चापावत चौहान, महाराजा जसवतसिंह का सेनानायक, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २१५। निरवाण चौहानो की एक शाखा है (नैणसी०, १, पृ० १०४, १२० टि०)।

पृ० ८२, छ० स० १४२—भाटी सुन्दर—धरमत के युद्ध मे खेत रहने वालो की किसी भी प्राप्य सूची मे यह नाम नही मिलता है।

भाटी मज्जो—भाटी मज्जा केलण, रतनसिंह राठौड का सेनानायक, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। ख्यात०, १, पृ० २२३।

पृ० ८२, छ० स० १४३—वेणो दूदावत पँवार—वेणीदास दूदावत पँवार। पहिले देखो छ० स० १३७ के बाद [(४)] के अन्तर्गत देखो।

पृ० ८२, छ० स० १४४—माँगलिया दलपति—माँगलिया दयालदास माधोदासोत। गांव खारो लूणो उसके पटे था। वह भी धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २१५-६। माँगलिया गुहिलोतो की ही एक शाखा है (नैणसी०, १, पृ० ७७)।

मागलिया खानो—सम्भवत माँगिलिया दयालदास का ही कोई निकट सम्बन्धी होगा। उसका नाम इस युद्ध मे खेत रहने वालो की किसी भी सूची मे नही मिलता है।

पृ० ८४, छ० स० १४५—वनराज—वन्ना (वनराज) पडिहार, रतनसिंह राठौड का सेनानायक, जो धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात० १, पृ० २२३, मुरारी०, १, क्रमाक ६८२, पृ० १२०।

पृ० ८४, छ० स० १४६—नवल—धरमत के युद्ध मे खेत रहने वालो की किसी भी प्राप्य सूची मे यह नाम नही मिलता है।

पृ० ८४, छ० स० १४७—दूदावत रतनो—सम्भवत मडला नाथा का पुत्र रतनसी, जो रतनसिंह राठौड का सेनानायक था और धरमत के युद्ध मे खेत रहा। ख्यात०, १, पृ० २२३।

पृ० ८४, छ० स० १४८—चारण धरमो—धरमा चारण का नाम भी धरमत के युद्ध मे खेत रहने वालो का किसी सूची मे नही मिलता है।

पृ० ८४, छ० स० १४६—मथुरी कावौ—मथुरा काबा का नाम भी धरमत के युद्ध मे खेत रहने वालो की किसी सूची मे नही है। कावा परमारो की ही शाखा थी (नैणसी०, १, पृ० २३०)।

पृ० ८४, छ० स० १५०—तूँवर जीवौ—जीवा तँवर का नाम भी धरमत के युद्ध मे मारे गये वीरो की किसी सूची मे नही है।

पृ० ८४, छ० स० १५१—नाई जीवौ—जीवा नाई का नाम भी धरमत के युद्ध-सम्बन्धी किसी सूची मे नही हैं।

पृ० ८४, छ० स० १५२—भगवानौ थोरी—भगवाना थोरी का नाम भी धरमत के युद्ध सम्बन्धी किसी सूची मे नही है।

भूरियो थोरी—भूरिया थोरी, रतनसिंह राठौड का सेवक, धरमत के युद्ध मे खेत रहा था। मुरारी०, १, क्रमाक ६८२, पृ० १२०। भंगियो के समान एक नीची जाति का नाम थोरी है (नैणसी०, २, पृ० ६१८)।

पृ० ८४, छ० स० १५३—गुणियौ दमाम—दमामी गुणा, रतनसिंह राठौड का सेवक, धरमत के युद्ध मे वीरतापूर्वक लडता हुआ खेत रहा। मुरारी०, १, क्रमाक ६८२, पृ० १२०। दमामा (नक्कारा) बजाने वाले को दमामी कहा जाता है।

पृ० ६२, वचनिका स० १५८—[१] राजा रैणसाहि—महाराजा रतनसिंह राठौड।

पृ० ६४, वचनिका स० १५८—[१५] हाडा मुकन्दसिंघ—मुकुन्दसिंह माधोसिंहोत हाडा, कोटा का शासक। विशेष विवरण के लिए पहिले छ० स० ६३ के बाद [(३)] के अन्तर्गत देखो।

[१६] गौड अरजन—राजा विट्ठलदास गौड का दूसरा पुत्र अर्जुन। विशेष विवरण के लिए पहिले छ० सं० ६३ के बाद [(६)] के अन्तर्गत देखो।

[१७] सीसोदिया सुजाणसिंघ—शाहपुरा का शासक सुजानसिंह सीसोदिया। तदर्थ पहिले देखो छ० स० ६३ के बाद [(१)] के अन्तर्गत।

[१८] झाला दलथम्भ—झाला दयालदास नरहरदास सांवलदासोत। तदर्थ पहिले देखो छ० स० ६३ के बाद [(५)] के अन्तर्गत।

पृ० ६८, वचनिका स० १५८—[८३-८४] कछवाही राजावति प्रतिरूपदे पुरुसोत्तमसिंघ दुरजणसिंघोत री सारधू—आम्बेर के सुप्रसिद्ध राजा मानसिंह कछवाहा के छोटे लडके दुर्जनसिंह के बेटे पुरुषोत्तमसिंह कछवाहा की लडकी प्रतिरूपदे राजावती कछवाही। नैणसी०, २, पृ० १३, १५, रतलाम०, पृ० १३३।

[८५-८६] देवडी रयणसुखदे चांदा प्रिथीराजोत री सारधू—सिरोही के राव लाखा के पौत्र रणधीर का पौत्र पृथ्वीराज देवडा था। इस पृथ्वीराज के पुत्र चांदा की पुत्री देवडी रैणसुखदे। नैणसी०, १, पृ० १४५-१४६, रतलाम०, पृ० ३४।

[८७-८८] कछवाही राजावति गुणरूपदे मोहकमसिंघ प्रेमसिंघोत री सारधू—आम्बेर के सुप्रसिद्ध राजा मानसिंह के छोटे भाई माधोसिंह के पौत्र प्रेमसिंह कछवाहा के छोटे लडके मोहकमसिंह की बेटी गुणरूपदे राजावती कछवाही। नैणसी०, २ पृ० १३, १६, रतलाम०, पृ० १३३।

[८९-९०] कछवाही सेखावति सुखरूपदे पुरुसोत्तमसिंघ तोडरमलोत री सारधू—शेखा कछवाहे के प्रपौत्र रायसल सूजावत का तीसरा बेटा भोजराज तोडरमल शेखावत का पिता था। इसी तोडरमल के छोटे लडके पुरुषोत्तमसिंह की पुत्री सुखरूपदे शेखावती कछवाही थी। नैणसी०, २, पृ० ३२-३७, रतलाम०, पृ० १३३-४।

[९१] खवासि—उपपत्नियाँ।

पृ० १०२, वचनिका स० १६३—[२] महा सरवर री पालि—नीनोर (कोठडी) नामक स्थान मे जो तालाव है उसी की पाल पर रतनसिंह राठौड की रानियां आदि सती हुई थी। यह स्थान रतलाम (मालवा) से २५ मील उत्तर-पश्चिम मे और प्रतापगढ मे २४ मील दक्षिण मे स्थित है। रतलाम०, १३५-६।

पृ० १०६, छ० स० १७२—युद्ध तिथि—शुक्रवार, वैशाख कृष्ण पक्ष ९, १७१५ वि० = अप्रैल १६, १६५८ ई०। धरमत युद्ध की ईसवी सन् की ठीक तारीख सम्बन्धी विस्तृत विवेचन भूमिका मे दिया गया है।

पृ० १०६, छ० स० १७३—खिडियौ जगौ—खिडिया जगा, काव्य-रचयिता। उसकी जीवनी, आदि के लिए भूमिका देखो।

पृ० १०९, परिशिष्ट (१), पंक्ति ३—जगा खिडिया—वचनिका० का रचयिता। रतनसिंह विषयक उसके प्राप्य फुटकर गीत यहाँ सग्रहीत किये गए हैं।

पृ० १११, परिशिष्ट (२), पंक्ति ३—कविया स्याम—कुछ फुटकर गीतो के अतिरिक्त इस चारण कवि की कोई अन्य रचना प्राप्य नही है। आवश्यक जानकारी के अभाव मे उसके व्यक्तित्व अथवा रचना-काल के बारे मे कुछ भी नही कहा जा सकता है।

पृ० ११२, परिशिष्ट (३), पंक्ति ३—लिखमीदास गाडण—'राजा सूरसिंह री वेली' के रचयिता गाडण चौला का वशज। डिंगल मे लिखे हुए उसके कई गीत एव नीसाणी छद मे एक-दो फुटकर रचनाओ के अतिरिक्त लिखमीदास गाडण का कोई ग्रथ उपलब्ध नही है। वह बीकानेर के राजा करण का समकालीन था और उसका रचना काल सन् १६६५ ई० के लगभग कहा जा सकता है।

संकेत-परिचय

उदय०—"उदयपुर राज्य का इतिहास", डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, जिल्द १।

ओझा०—"जोधपुर राज्य का इतिहास", डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, जिल्द १।

औरंग०—"हिस्ट्री आफ औरंगजेब", डा० यदुनाथ सरकार कृत, जिल्द १-२।

कम्बू०—"आमल-इ-सालेह", मुहम्मद सालेह कम्बू कृत, जिल्द ३, (बिब० इण्डिका)।

ख्यात०—"जोधपुर राज्य की ख्यात" (हस्तलिखित), ओझा संग्रह में प्राप्य प्रति की नकल, जिल्द १।

छ० सं०—छन्द संख्या।

टि०—पाद टिप्पणी।

तेस्सितोरी०—तेस्सितोरी कृत "ए डिस्क्रिप्टिव केटेलाग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टारिकल मेनस्क्रिप्ट्ज", सेक्शन २—बार्डिक पोएट्री, पार्ट १—बीकानेर स्टेट, (बिब० इण्डिका)।

तेस्सितोरी प्रोज—तेस्सितोरी कृत "ए डिस्क्रिप्टिव केटेलाग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टारिकल मेनस्क्रिप्ट्ज", सेक्शन १—प्रोज क्रानिकल्ज, पार्ट २—बीकानेर स्टेट, (बिब० इण्डिका)।

दयाल०—"दयालदास री ख्यात", सिंढायच दयालदास कृत, भाग २, डॉ० दशरथ शर्मा आदि द्वारा सम्पादित, अनूप० संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर, द्वारा प्रकाशित।

नैणसी०—"मुहणोत नैणसी की ख्यात", काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित, खण्ड १-२।

पाद०—"पादशाह नामा", अब्दुल हमीद लाहौरी कृत, खण्ड १-२, (बिब० इण्डिका)।

मा० उ० (हिन्दी)—"मासिर-उल्-उमरा", समसामुद्दौला शाह नवाज खाँ कृत, ब्रजरत्नदास कृत हिन्दी अनुवाद, काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित, भाग १।

मुरारी०—कविराजा मुरारीदान से प्राप्त एक और ख्यात (हस्तलिखित), जोधपुर राज्य के संग्रह में प्राप्य प्रति की नकलें, जिल्दें १-२।

मेनारिया०—"राजस्थानी भाषा और साहित्य", डॉ० मोतीलाल मेनारिया कृत, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, २००६ वि०।

रतलाम०—"रतलाम का प्रथम राज्य उसकी स्थापना और अन्त", डा० रघुबीरसिंह कृत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

राजस्थानी०—"केटेलाग आफ दी राजस्थानी मेनस्क्रिप्ट्ज इन दी अनूप संस्कृत लायब्रेरी", अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर, द्वारा प्रकाशित।

रेऊ०—"मारवाड़ राज्य का इतिहास", पं० विश्वेश्वरनाथ कृत, खण्ड १-२।

वारिस०—"पादशाह नामा", मुहम्मद वारिस कृत, सरकार संग्रह में प्राप्य प्रति की नकल, जिल्द २।

वीर०—"वीर विनोद", कविराजा श्यामलदास कृत, जिल्दें १-२।